पुलिस विज्ञान

वर्ष-42 अंक-150 जनवरी-जून, 2024

नए आपराधिक कानून
पर
विशेषांक

पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो
गृह मंत्रालय
भारत सरकार

'उत्तम कार्यप्रणालियों एवं मानकों का प्रोत्साहन'

पुलिस विज्ञान

अंक-150 (जनवरी – जून, 2024)

सलाहकार समिति

राजीव कुमार शर्मा
महानिदेशक

रवि जोसेफ लोक्कू
अपर महानिदेशक

रूचिका ऋषि
निदेशक (एसपीडी)

अनुज कुमार सिंह
उप निदेशक (एसपीडी)

संपादक : **सतीश चन्द्र डबराल**

संपादन सहयोग टीम
मनोज कुमार साव, हिंदी अनुवादक ग्रेड-।
पिसाल विक्रम आनंदराव, हिंदी अनुवादक ग्रेड-।।
आशु नन्दन, आशुलिपिक ग्रेड-।

पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो
राष्ट्रीय राजमार्ग-48, महिपालपुर, नई दिल्ली-110037

'पुलिस विज्ञान' में प्रकाशित लेखों में लेखकों के विचार निजी हैं। इनसे पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली की सहमति आवश्यक नहीं।

राजीव कुमार शर्मा, भा.पु.से.
महानिदेशक

Rajeev Kumar Sharma, IPS
Director General
Tel. : 91-11-26781312 (O)
E-mail : dg@bprd.nic.in

पुलिस अनुसंधान एवम् विकास ब्यूरो
गृह मंत्रालय, भारत सरकार
राष्ट्रीय राजमार्ग-48, महिपालपुर
नई दिल्ली-110037
Bureau of Police Research & Development
Ministry of Home Affairs, Government of India
National Highway-48, Mahipalpur
New Delhi-110037

संदेश

हमारे देश की आपराधिक न्याय प्रणाली वर्ष 1860 से वर्ष 2023 तक ब्रिटिश संसद द्वारा बनाए गए कानूनों की नींव पर संचालित रही। दिनांक 1 जुलाई 2024 से, औपनिवेशिक युग के तीन कानूनों नामतः भारतीय दंड संहिता (IPC), दंड प्रक्रिया संहिता (CrPC) और भारतीय साक्ष्य अधिनियम (IEA) को नए आपराधिक कानूनों द्वारा प्रतिस्थापित किया गया है, जो भारतीय संस्कृति पर आधारित हैं और सजा के बजाय न्याय पर केंद्रित हैं। भारतीय न्याय संहिता 2023 (BNS), भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता 2023 (BNSS) और भारतीय साक्ष्य अधिनियम 2023 (BSA) को कार्यान्वित करना भारत के कानूनी इतिहास में एक निर्णायक क्षण का प्रतिनिधित्व करता है, जो इस सिद्धांत को मजबूती प्रदान करता है कि कानूनों को समसामयिक और प्रासंगिक सुनिश्चित करने के लिए विकसित किया जाना चाहिए। अब, एक नया युग आरंभ हो गया है जो 'नागरिक पहले-न्याय पहले-गरिमा पहले' के सिद्धांत पर दृढ़ता से आधारित है।

समय की मांग के अनुरूप, पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो (BPR&D) ने गृह मंत्रालय के प्रयासों को आगे बढ़ाते हुए, व्यापक रूप से नए आपराधिक कानूनों पर क्षमता निर्माण का कार्य भी किया है। ब्यूरो ने आपराधिक न्याय प्रणाली के पांच स्तंभों - पुलिस, अभियोजन, न्यायपालिका, फोरेंसिक और कारागारों के लिए प्रशिक्षकों के प्रशिक्षण (ToT) मॉड्यूल को तैयार किया है। दिसंबर 2023 में, ब्यूरो द्वारा शुरू की गई पहलों और उसके बाद नए कानूनों के सहज कार्यान्वयन में मदद हेतु राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों के सहयोग से ठोस नतीजे सामने आए हैं। नए कानूनों की समझ बढ़ाने के लिए किए जा रहे प्रयासों को और विस्तारित करने के उद्देश्य से, बीपीआरएंडडी ने अपने प्रतिष्ठित जर्नल पुलिस विज्ञान के इस अंक को विशेषांक के रूप में तैयार किया है। हिंदी भाषी पाठकों की सुविधा हेतु यह अंक इंडियन पुलिस जर्नल की सामग्री को उपलब्ध करा रहा है।

मुझे विश्वास है कि आपराधिक न्याय प्रणाली के विशेषज्ञों के योगदान से तैयार किया गया नए आपराधिक कानून पर यह विशेष अंक, पुलिस अधिकारियों, शिक्षाविदों, शोधकर्ताओं और आम जनता की न केवल जागरूकता बढ़ाएगा बल्कि नागरिकों को बेहतर सेवा प्रदान करना भी सुनिश्चित करेगा।

(राजीव कुमार शर्मा)
महानिदेशक, बीपीआरएंडडी

रवि एल. जोसफ, भा.पु.से.
अपर महानिदेशक
Ravi L. Joseph, IPS
Additional Director General
Tel. : 91-11-26781341
E-mail : adg@bprd.nic.in

पुलिस अनुसंधान एवम् विकास ब्यूरो
गृह मंत्रालय, भारत सरकार
राष्ट्रीय राजमार्ग-48, महिपालपुर
नई दिल्ली-110037
Bureau of Police Research & Development
Ministry of Home Affairs, Government of India
National Highway-48, Mahipalpur
New Delhi-110037

संदेश

पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो (BPR&D), पुलिस संगठनों का थिंक-टैंक है और इसका आदर्श वाक्य है "आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः"। अपनी स्थापना से ही, ब्यूरो ज्ञान और अच्छी कार्य पद्धतियों का भंडार रहा है। पुलिस विज्ञान जर्नल ऐसे ही भंडारों में से एक है जहाँ सभी अच्छे विचारों को प्रभावी, विद्वत्तापूर्ण लेखों में उकेरा जाता है जो कानून प्रवर्तन एजेंसियों को कुशल तरीके से कार्य करने के लिए समृद्ध करते रहे हैं। आपराधिक न्याय प्रणाली, कानूनों और संस्थानों के समूह को संदर्भित करती है जिनका उद्देश्य अपराधी व्यवहार को नियंत्रित करना और सभ्य समाज में सामूहिक सुरक्षा बनाए रखना है। "सभी के लिए न्याय" सुनिश्चित करने के लिए, प्रभावी, समग्र और भविष्योन्मुखी कानूनों का होना अतिआवश्यक है। इस दिशा में, तीन नए आपराधिक कानून, "भारतीय न्याय संहिता, (BNS)", "भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, (BNSS)" और "भारतीय साक्ष्य अधिनियम, (BSA)" क्रमशः भारतीय दंड संहिता (IPC), दंड प्रक्रिया संहिता (CrPC) और भारतीय साक्ष्य अधिनियम (IEA) को प्रतिस्थापित करते हुए 1 जुलाई, 2024 से प्रभावी हो गए हैं।

एक प्रभावी कानून की विशेषताओं में निष्पक्षता, समानता, आसान पहुंच, आसान प्रवर्तनीयता और वैज्ञानिक तरीके से युक्त सरल प्रक्रियाओं का होना आवश्यक है। हमारे नए आपराधिक कानूनों में यह सभी विशेषताएं हैं। इन सिद्धांतों और प्रक्रियाओं को सभी हितधारकों तक पहुँचाने की आवश्यकता है। पुलिस विज्ञान जर्नल इस ज्ञान को प्रसारित करने का एक श्रेष्ठ माध्यम है।

पुलिस विज्ञान जर्नल का यह विशेषांक तीन नए आपराधिक कानूनों और उनकी व्यावहारिकता के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डालता है। मुझे पूरी आशा है कि पाठकों को पुलिस विज्ञान जर्नल का यह विशेष संस्करण, नए आपराधिक कानूनों की भावना का प्रतिबिंब लगेगा। मैं सभी पाठकों से पुलिस विज्ञान के मानकों को और बेहतर करने के लिए अपने बहुमूल्य सुझाव साझा करने का अनुरोध करता हूं।

(रवि जोसेफ लोक्कू)
अपर महानिदेशक , बीपीआरएंडडी

रुचिका ऋषि, भा.पु.से.
आई.जी./निदेशक
(एन.पी.एम एवं एस.पी.डी.)
Ruchika Rishi, I.P.S
IG/Director (NPM & SPD)
Tel. : +91-11-26782027
Email : dirnpm@bprd.nic.in

पुलिस अनुसंधान एवम् विकास ब्यूरो
गृह मंत्रालय, भारत सरकार
राष्ट्रीय राजमार्ग-48, महिपालपुर
नई दिल्ली-110037
Bureau of Police Research & Development
Ministry of Home Affairs, Govt. of India
National Highway-48, Mahipalpur
New Delhi-110037

संदेश

सुशासन को अक्सर प्रभावशाली निर्णयों द्वारा परिभाषित किया जाता है जो प्रगति और समावेशिता का मार्ग प्रशस्त करते हैं। तीन नए आपराधिक कानूनों की पुनःस्थापना इस दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। इन कानूनों को लाने के निर्णय का मुख्य उद्देश्य कुशल पुलिसिंग एवं समय पर न्याय प्रदान करके राष्ट्र और इसके नागरिकों के कल्याण, सुरक्षा और समृद्धि के लिए अनुकूल माहौल बनाना है। ये कानून आधुनिक समाज की वास्तविकताओं और नए अपराधों से निपटने के लिए बनाए गए हैं।

पुलिस विज्ञान जर्नल का यह विशेष अंक नए आपराधिक कानूनों पर आधारित है जो कि एक नया विषय है। पुलिस, विधि, शिक्षण जगत के लेखकों से नए आपराधिक कानूनों पर लेख आमंत्रित कर उन्हें ब्यूरो के इंडियन पुलिस जर्नल (IPJ) में अंग्रेजी में प्रकाशित किया गया। नए आपराधिक कानूनों की पुलिस एवं अन्य हितधारकों के लिए उपयोगिता, महत्ता तथा उनको जन-जन तक पहुँचाने व उनके समुचित प्रचार-प्रसार के उद्देश्य से यह आवश्यक हुआ है कि इंडियन पुलिस जर्नल (IPJ) में प्रकाशित लेखों का हिंदी अनुवाद पुलिस विज्ञान में प्रकाशित किया जाए जिससे हिंदी पाठकों को भी आवश्यक जानकारी मिले। इसमें प्रकाशित लेखों के अनुवाद एवं पुलिस विज्ञान में प्रकाशन हेतु संबंधित लेखकों से सहमति ले ली गई है।

मुझे विश्वास है कि नए आपराधिक कानूनों पर पुलिस विज्ञान जर्नल का यह विशेषांक आपराधिक न्याय प्रणाली के सभी हितधारकों और आम-आदमी, दोनों को इन कानूनों को बेहतर ढंग से समझने में मदद करेगा।

इस विशेष अंक की शुरुआत श्री अनिल किशोर यादव, भा.पु.से., निदेशक, सीएपीटी भोपाल के एक विस्तृत लेख से होती है, जो हाल ही में पारित तीन नए आपराधिक कानूनों के ऐतिहासिक संदर्भ और मुख्य विशेषताओं को चित्रित करने का प्रयास करता है।

श्री डी.सी. जैन, भा.पु.से. (सेवानिवृत्त) द्वारा भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता (BNSS) पर लेख नए अधिनियमित कानून, इसकी प्रमुख विशेषताओं और समग्र रूपरेखा का अवलोकन कराता है।

डॉ. नीरज तिवारी, सहायक प्रोफेसर, एनएलयू, दिल्ली ने भारतीय न्याय संहिता, 2023 (BNS) पर लेख लिखा है, जिसमें इस कानून की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के साथ-साथ इसमें शामिल किए गए संशोधनों के उद्देश्यों और सार की जांच की गई है।

डॉ. के.पी. सिंह, भा.पु.से. (सेवानिवृत्त) का लेख, "भारतीय कानूनों में गवाह संरक्षण की रूपरेखा" गवाह संरक्षण के कानूनी प्रावधानों पर चर्चा करता है, जिन्हें पहली बार शामिल किया गया है, जिसमें गवाहों को धमकियों और डराने-धमकाने से बचाने की आवश्यकता को स्वीकार किया गया है।

डॉ. मनोज कुमार शर्मा, सहायक प्रोफेसर, आरजीएनयूएल पटियाला द्वारा लिखित लेख "भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता में जांच और परीक्षण रूपरेखा" दर्शाता है कि कैसे बीएनएसएस में आपराधिक कार्यवाही के हर चरण के लिए, पूर्ण समयरेखा के साथ-साथ कानूनी प्रक्रियाओं के लिए एक संरचित ढांचा प्रदान किया गया है।

श्री अमनदीप सिंह कपूर, भा.पु.से., निदेशक, सीडीटीआई जयपुर द्वारा पहली बार के अपराधियों पर लिखा गया लेख, सामाजिक-जनसांख्यिकी, आपराधिक इतिहास और नए आपराधिक कानूनों के तहत पुनः एकीकरण रणनीति के संबंध में भारत में पहली बार अपराधी होने के परिणामों की जानकारी प्रदान करता है।

सर्वोच्च न्यायालय की अधिवक्ता सुश्री अदिति त्रिपाठी द्वारा लिखित लेख, "तकनीकी विचारण: साक्ष्यों का नए कानूनी परिदृश्य के अनुकूल होना" यह बताता है कि भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023, (BSA) आपराधिक न्याय प्रणाली को बढ़ाने के लिए प्रौद्योगिकी के उपयोग का, किस प्रकार प्रावधान करता है।

डॉ. निशा धनराज दीवानी, एसोसिएट प्रोफेसर, महाराजा अग्रसेन इंस्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेंट स्टडीज, जीजीएसआईपीयू ने "इलेक्ट्रॉनिक या डिजिटल साक्ष्य की स्वीकार्यता: भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 का अवलोकन" नामक लेख में डिजिटल साक्ष्य कानूनों की प्रकृति और आपराधिक कार्यवाही में इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्यों की विश्वसनीयता सुनिश्चित करने में आने वाली चुनौतियों को बताया है।

डॉ शरणजीत, सहायक प्रोफेसर, आरजीएनयूएल पटियाला ने मानव तस्करी विषय पर लेख में बताया है कि कैसे नया कानून मानव तस्करी के खतरे से निपटने में आपराधिक न्याय प्रणाली की प्रभावशीलता को बढ़ाने में मदद करेगा।

डॉ. स्वप्निल बंगाली, निदेशक, सीआईसीटीएल, एमएनएलयू, मुंबई द्वारा आपराधिक न्याय में परिवर्तन- अंतर्राष्ट्रीय निहितार्थ विषय पर लिखा लेख नए आपराधिक कानूनों के विभिन्न प्रावधानों पर प्रकाश डालता है जो अंतर्राष्ट्रीय कानून के साथ मिलकर काम करते हैं और अंतर्राष्ट्रीय अपराधों पर अंतर्राष्ट्रीय एजेंसियों के साथ समन्वय करते हैं।

सुश्री आस्था तिवारी, पीएचडी स्कॉलर, एमएनएलयू मुंबई का पीड़ित-केंद्रित दृष्टिकोण पर लेख, अतीत से वर्तमान तक पीड़ित न्याय के विकास की जांच करता है, और नए आपराधिक कानूनों के संदर्भ में, भविष्य में इसके प्रभावों को दर्शाता है।

दिल्ली उच्च न्यायालय के अधिवक्ता श्री देवव्रत यादव के सामुदायिक सेवा विषय पर लेख में बताया गया है कि किस प्रकार सामुदायिक सेवा का नया प्रावधान साधारण दण्ड से आगे बढ़कर रचनात्मक प्रतिपूर्ति का साधन बन जाता है।

हमें पूरी आशा है कि पुलिस अधिकारियों, न्यायपालिका के प्रतिष्ठित व्यक्तियों और विषय विशेषज्ञों के लेख वाला यह विशेष प्रकाशन उन सभी हितधारकों के लिए उपयोगी होगा जो पुलिस बलों की कार्य पद्धति को बेहतर बनाने की आकांक्षा रखते हैं। हमेशा की तरह, हम आपके प्रोत्साहन और सुझावों की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

(रुचिका ऋषि)
निदेशक (एसपीडी), बीपीआरएंडडी

विशेष प्रोजेक्ट प्रभाग

बीपीआरएंडडी की स्थापना के साथ ही विशेष प्रोजेक्ट प्रभाग अस्तित्व में आया। बीपीआरएंडडी के पांच अन्य प्रभाग जिनके अपने-अपने परिभाषित चार्टर हैं, उसके अलावा, ऐसे बड़े क्षेत्र भी हैं जिन पर समय-समय पर भारत सरकार और राज्य/केंद्र शासित प्रदेश पुलिस बलों का ध्यान आकर्षित किया जाता है। मानव तस्करी, लैंगिक मुद्दे और अल्पसंख्यक तथा अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति से संबंधित विषयों पर अकादमिक अध्ययन से अलग भी ध्यान देने की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त बीपीआरएंडडी जैसे संगठन की सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकताओं में से एक सांख्यिकीय इकाई है जो आँकड़े एकत्रित करती है जिसके आधार पर दृष्टिकोण तैयार कर निष्कर्ष निकाले जाते हैं। इस कार्य के महत्व को कम करके नहीं आंका जा सकता और इसी उद्देश्य को ध्यान मे रखते हुए ब्यूरो में एक विशेष प्रोजेक्ट प्रभाग का गठन किया गया। यह प्रभाग मूलतः अन्य सभी महत्वपूर्ण कार्यों का केन्द्र भी है जिन्हें ब्यूरो में किसी अन्य प्रभाग द्वारा नहीं किया जाता है।

महत्वपूर्ण प्रकाशन

प्रभाग द्वारा प्रकाशित प्रमुख प्रकाशन इस प्रकार हैं:-

(क) **इंडियन पुलिस जर्नल (IPJ) –** यह बीपीआरएंडडी का प्रमुख तिमाही प्रकाशन है जिसे वर्ष 1954 में शुरू किया गया था। इसमें पुलिसिंग, पुलिस प्रशासन और प्रबंधन, सुधारात्मक प्रशासन और जेल प्रबंधन, फोरेंसिक, डिजिटल साक्ष्य और पुलिस बलों के बीच अच्छी प्रथाओं और मानकों को साझा करने जैसे विषयों पर लेख प्रकाशित किए गए हैं।

(ख) **पुलिस संगठनों के आंकड़े (DoPO) –** यह वर्ष 1986 से एक वार्षिक प्रकाशन रहा है। इसमें राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों/सीपीओ और सीएपीएफ में जनशक्ति, बुनियादी ढांचा, वाहन, पुलिस स्टेशन आदि से संबंधित आंकड़े प्रकाशित किए गए हैं। इन आंकड़ों का उपयोग सरकारी एजेंसियों, नीति आयोग, गृह मंत्रालय आदि द्वारा व्यापक रूप से किया जाता है।

(ग) **पुलिस विज्ञान जर्नल –** वर्ष 1982 से **''पुलिस विज्ञान''** हिंदी जर्नल का प्रकाशन किया जा रहा है। जर्नल में पुलिस, पुलिस प्रशासन, जेल प्रबंधन, न्यायालयिक विज्ञान, साइबर अपराध, आपराधिक जाँच आदि पुलिसिंग से संबंधित विषयों पर उत्कृष्ट लेख प्रकाशित किए जाते हैं। अब तक जर्नल के कुल 149 अंक प्रकाशित हो चुके हैं। जर्नल का प्रेषण केन्द्रीय पुलिस संगठनों, केन्द्रीय सशस्त्र पुलिस बलों, गृह मंत्रालय और हिंदी भाषी राज्यों में थाना स्तर तक किया जाता है।

(घ) **पुलिस ड्रिल मैनुअल –** यह प्रकाशन राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों, केन्द्रीय पुलिस संगठनों, केन्द्रीय सशस्त्र पुलिस बलों को पुलिस ड्रिल से संबंधित सभी प्रकार के अभ्यासों के लिए एक विस्तृत मार्गदर्शन प्रदान करता है।

(ड.) **सजग भारत & Vigilant India पत्रिका –** पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो द्वारा केंद्रीय सशस्त्र पुलिस बलों एवं पुलिस के अच्छे कार्यों के प्रचार-प्रसार को जन-जन तक पहुंचाने के लिए पाक्षिक पत्रिका "सजग भारत"/"Vigilant India" का प्रकाशन किया जा रहा है। पत्रिका का प्रेषण देश के माननीय सांसदों, विधायकों, पुलिस बलों, महत्वपूर्ण संगठनों, मीडिया कार्मिकों आदि को किया जा रहा है। साथ ही पत्रिका की सॉफ्ट कॉपी को E-sampark के माध्यम से 7 करोड़ से अधिक लोगों को भेजा जा रहा है। पत्रिका का प्रथम अंक अप्रैल, 2023 को प्रकाशित किया गया।

(च) **बीपीआरएंडडी न्यूज बुलेटिन -** यह बीपीआरएंडडी का तिमाही प्रकाशन है जिसमें बीपीआरएंडडी एवं इसकी अधीनस्थ इकाइयों में की गई सभी प्रमुख गतिविधियों को प्रदर्शित किया जाता है।

विषय सूची

क्र.सं.	लेख	लेखक	पृष्ठ सं.
1.	नए आपराधिक कानून, 2023 की समीक्षा	श्री अनिल किशोर यादव, भा.पु.से.	1
2.	भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 – एक परिचय	श्री डी.सी. जैन, भा.पु.से. (सेवानिवृत्त)	22
3.	भारतीय न्याय संहिता, 2023: औपनिवेशिक दंड कानूनों का भारतीयकरण	डॉ. नीरज तिवारी	32
4.	भारतीय कानूनों में गवाह संरक्षण की रूपरेखा	श्री के.पी. सिंह, भा.पु.से. (सेवानिवृत्त)	42
5.	भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता में जांच और विचारण रूपरेखा	डॉ. मनोज कुमार शर्मा	49
6.	भारत में नए आपराधिक कानूनों में पहली बार अपराध करने वालों के लिए पुनर्वास रणनीतियाँ - सबल न्याय के प्रति एक एकीकृत दृष्टिकोण	श्री अमनदीप सिंह कपूर, भा.पु.से. श्री इशान अत्रे	59
7.	तकनीकी विचारणः साक्ष्यों का नए कानूनी परिदृश्य के अनुकूल होना	सुश्री अदिति त्रिपाठी	73
8.	इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य की स्वीकार्यताः भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 का अवलोकन	डॉ. निशा धनराज देवानी	82
9.	मानव तस्करी और कानूनी संरचना: पूर्वव्यापी और संभावित	डॉ. शरणजीत	93
10.	आपराधिक न्याय में परिवर्तन-अंतर्राष्ट्रीय निहितार्थ	डॉ. स्वप्निल बंगाली	101
11.	नए कानूनों में पीड़ित-केंद्रित दृष्टिकोण	डॉ. आस्था तिवारी	110
12.	बीएनएस 2023 में सामुदायिक सेवा: प्रतिशोध से पुनर्स्थापन की ओर एक आदर्श बदलाव	श्री देवव्रत यादव सुश्री कोमल भारती	118

नए आपराधिक कानून, 2023 की समीक्षा

श्री अनिल किशोर यादव, भा.पु.से.*

सार

यह लेख भारतीय न्याय संहिता, 2023, भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 और भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 के अधिनियमन के बाद भारत के आपराधिक कानून में परिवर्तनकारी बदलावों का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करता है। ये नए कानून औपनिवेशिक युग के भारतीय दंड संहिता, भारतीय साक्ष्य अधिनियम और दंड प्रक्रिया संहिता का स्थान लेंगे, जो भारत के कानूनी परिदृश्य में एक महत्वपूर्ण बदलाव को दर्शाते हैं। प्रस्तुत लेख पुराने और नए कानूनों के बीच तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है, जिसमें पुनर्गठन, प्रमुख परिवर्धन, हटाए गए और शुरू किए गए अन्य प्रमुख सुधारों का विवरण दिया गया है। इसमें यह भी बताया गया है कि ये अद्यतन किस प्रकार भारत के कानूनी ढांचे को मजबूत और आधुनिक बनाने के लिए तैयार किए गए हैं।

मुख्य शब्द : ऑडियो-वीडियो इलेक्ट्रॉनिक साधन, लिंग तटस्थता, विशिष्ट समय-सीमा, सामुदायिक सेवा, प्रौद्योगिकी का उपयोग, छीनना, संगठित अपराध, अनुपस्थिति में मुकदमा

परिचय

25 दिसंबर, 2023 को भारतीय न्याय संहिता, 2023 (2023 का अधिनियम 45); भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 (2023 का अधिनियम 46); और भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 (2023 का अधिनियम 47) को विधिवत अधिसूचित कर भारत के राजपत्र में प्रकाशित किया गया। संक्षिप्त में हम उन्हें क्रमशः बीएनएस, बीएनएसएस और बीएसए कहते हैं। इन नए कानूनों ने भारतीय दंड संहिता, 1860 (आईपीसी), दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (सीआरपीसी) और भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (आईईए) का स्थान लिया है। बीएनएस की धारा 1(2), बीएनएसएस की धारा 1(3) और बीएसए ने केंद्र सरकार को आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना के माध्यम से प्रवर्तन की तारीख नियुक्त करने का अधिकार दिया। तदनुसार, केंद्र सरकार ने इन्हें 1 जुलाई, 2024 से लागू किया है।

* निदेशक, केंद्रीय पुलिस प्रशिक्षण अकादमी, भोपाल, बीपीआरएंडडी, गृह मंत्रालय, भारत सरकार

नये प्रमुख आपराधिक अधिनियमों में अध्यायों और धाराओं के पुनर्गठन के साथ-साथ विषय-वस्तु संबंधित तुलनात्मक आंकड़े:

नीचे दी गई तालिका एक इकाई के रूप में संबंधित धारा के संदर्भ में प्रमुख आपराधिक अधिनियमों के दोनों सेट का सांख्यिकीय तुलनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करती है:

क्र.सं.	विवरण	आई पी सी	बी एन एस	सीआरपी सी	बी एन एस एस	आई ई ए	बी एस ए
1	धाराओं की मूल संख्या	511	358	484	531	167	170
2	पुराने कानूनों में [मूल क्रमांकन योजना के अंतर्गत] बाद के संशोधनों के माध्यम से जोड़ी गई धाराएँ	64	-	51	-	18	-
3	बाद के संशोधनों के माध्यम से निरस्त की गई धाराओं की संख्या	21	-	-	-	1	-
4	1 जुलाई, 2024 से पूर्व पुराने कानूनों में विद्यमान धाराओं की कुल संख्या [मूल क्रमांकन योजना के अंतर्गत]	554	-	535	-	184	-
5	पुराने कानूनों की धाराएं जो नए कानूनों में शामिल नहीं	19	-	11	-	4	-
6	पुराने कानूनों की धाराएं जो नए कानूनों में शामिल की गई हैं	535	-	524	-	180	-
7	पुराने कानूनों की धाराओं को नए कानूनों में अलग-अलग धाराओं के रूप में शामिल किया गया	287	287	520	520	161	161
8	पुराने कानूनों की धाराओं की विषय-वस्तु को नए कानूनों की अलग-अलग धाराओं के अंतर्गत पुनर्गठित किया गया	248	61	4	2	19	8
9	नये कानूनों में जोड़ी गयीं नई धाराएँ	-	10	-	9	-	1
10	नये कानूनों में कुल धाराओं की संख्या	-	358	-	531	-	170

उपरोक्त तालिका के क्रम संख्या 7 में दोनों कानूनों की धाराओं के परस्पर समानता को दर्शाया गया है। इसी तरह, क्रम संख्या 8 में अधिक जटिलताओं के उदाहरण दिए गए हैं, जिसमें पुराने कानूनों की कई धाराओं का नए कानूनों की कम संख्या में धाराओं में विलय और/या एकीकरण तथा पुराने कानूनों को नए कानूनों की कई धाराओं में विभाजित करने के कुछ दुर्लभ उदाहरण आदि शामिल हैं।

नये आपराधिक कानूनों में **भारतीय न्याय संहिता** में अध्यायों और धाराओं का पुनर्गठन सबसे व्यापक है। इस मामले में,

अन्य दो अधिनियम मूलतः पुराने कानूनों के समान ही हैं। मूल रूप से, आईपीसी में 23 अध्याय थे। इसके बाद, तीन अध्याय (VA, अध्याय IXA और अध्याय XXA) जोड़े गए। कुल 26 अध्यायों में से 25 की विषय-वस्तु को पुनर्गठित करके बीएनएस में शामिल किया गया है। अध्याय XIII, जो वजन और माप से संबंधित अपराधों से संबंधित है, को पूरी तरह से बाहर रखा गया है क्योंकि विधिक मापविज्ञान अधिनियम, 2009 इस विषय को व्यापक रूप से कवर करता है। बीएनएस में 20 अध्याय हैं, जिनमें से अंतिम में केवल एक खंड (धारा 358) है, जो कि 'निरसन और व्यावृत्ति' शीर्षक से एक नया जोड़ा गया अध्याय है, क्योंकि अंग्रेजों द्वारा नया अधिनियम बनाये जाने के कारण भारतीय दंड संहिता में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है।

आईपीसी में सामान्य स्पष्टीकरण अध्याय के तहत धारा 8 से 52ए तक परिभाषाएं फैली हुई हैं। बीएनएस में, इन्हें धारा 2 के तहत वर्णानुक्रम में व्यवस्थित उप-धारा (1) से (39) में व्यवस्थित और समेकित किया गया है, जिसे परिभाषाएं कहा जाता है।

IPC अध्याय I (परिचय) और अध्याय II (सामान्य व्याख्या) को BNS के अध्याय I (प्रारंभिक) में मिला दिया गया है। अध्याय V (उकसाने के बारे में) और अध्याय VA (आपराधिक षड्यंत्र) को अध्याय IV (उकसाने, आपराधिक षड्यंत्र और प्रयास) में मिला दिया गया है। इस प्रकार, सभी अपूर्ण अपराधों को इस एक अध्याय में समेकित किया गया है।

पहला अध्याय जिसमें मुख्य अपराधों का उल्लेख है, अर्थात अध्याय V (महिला और बच्चे के विरुद्ध अपराध), एक नया जोड़ा गया अध्याय है जो महिलाओं और बच्चों के विरुद्ध अपराधों को रोकने के लिए विधि निर्माताओं की सर्वोच्च प्राथमिकता को दर्शाता है।[1] इस अध्याय ने IPC के अध्याय XI, XVI, XX, XXA और XXII से विभिन्न संबंधित प्रावधानों को समेकित किया है। इसी तरह, अध्याय VI (मानव शरीर को प्रभावित करने वाले अपराध) को भी अन्य श्रेणियों के अपराधों पर वरीयता दी गई है। इस अध्याय में सबसे अधिक संख्या में महत्वपूर्ण नए जोड़े गए अपराध शामिल हैं जैसे मॉब लिंचिंग, संगठित अपराध, छोटे-मोटे संगठित अपराध, आतंकवादी कृत्य आदि ।

सिक्कों और सरकारी टिकटों से संबंधित अपराधों से निपटने वाले आईपीसी का अध्याय XII अभूतपूर्व पुनर्गठन और समेकन की प्रक्रिया से गुजरा है। अध्याय XII की 26 धाराओं और अपराधों को बीएनएस की चार धाराओं (178 से 181) में समेकित किया गया है, जिसमें आईपीसी के अध्याय XVIII के चार अपराधों, नामतः 489A से 489D को भी शामिल किया गया है।

बीएनएसएस में 39 अध्याय हैं, जबकि सीआरपीसी में मूल अध्यायों की संख्या 37 है। अध्याय VIIA जिसका शीर्षक 'कुछ मामलों में सहायता के लिए पारस्परिक व्यवस्था और संपत्ति की कुर्की एवं जब्ती की प्रक्रिया' और अध्याय XXI A जिसका शीर्षक 'प्ली बार्गेनिंग' है, क्रमशः 1993 के अधिनियम 40 द्वारा दिनांक 20-7-1994 से और 2006 के अधिनियम 2 द्वारा दिनांक 5-7-2006 से सम्मिलित किए गए थे। बाद में सम्मिलित किए गए इन अध्यायों को बीएनएसएस में अलग-अलग अध्यायों के रूप में सूचीबद्ध किया गया है, जिससे अध्यायों की कुल संख्या 39 हो गई है।

बीएसए में 12 अध्याय हैं, जबकि आईईए में 11 अध्याय हैं। 'निरसन और बचत' अध्याय अंतिम अध्याय है, जो नया जोड़ा गया है।

भारतीय न्याय संहिता में किए गए सुधारों का सार

सुविधा हेतु, इन्हें निम्नलिखित शीर्षकों के अंतर्गत रखा जा सकता है:

जोड़ी गईं या संशोधित की गईं नई परिभाषाएँ:

धारा 2(3) के अंतर्गत बच्चे की एक नई परिभाषा जोड़ी गई है: "बच्चे का अर्थ अठारह वर्ष से कम आयु का कोई भी व्यक्ति है।" यह अब किशोर न्याय अधिनियम, 2015 की धारा 2(12) के अंतर्गत दी गई बच्चे की परिभाषा के अनुरूप है।

धारा 2(8) [आईपीसी 29] के तहत, दस्तावेज़ की परिभाषा में इलेक्ट्रॉनिक और डिजिटल रिकॉर्ड शामिल हैं"

धारा 2(10) [आईपीसी 8] के तहत, लिंग की परिभाषा में अब "ट्रांसजेंडर" भी शामिल है।

[1] माननीय केंद्रीय गृह मंत्री ने दिनांक 20 दिसंबर, 2023 को लोकसभा में दिए गए अपने भाषण में औपनिवेशिक प्राथमिकताओं के विरुद्ध संहिता में अध्यायों के पुनर्गठन और अनुक्रमण के पीछे के दर्शन का वर्णन किया।

धारा 2(20) [आईपीसी 49] के तहत, ब्रिटिश कैलेंडर को ग्रेगोरियन कैलेंडर द्वारा प्रतिस्थापित किया गया है।

धारा 2(21) [आईपीसी 22] के तहत, 'भौतिक' विश्लेषण को हटाकर 'चल संपत्ति' का दायरा बहुत बढ़ा दिया गया है।

धारा 2(39) [आईपीसी 29ए] के अनुसार, **इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड** के संबंध में, दायरे का विस्तार यह प्रावधान करके किया गया है कि इस संहिता में प्रयुक्त लेकिन परिभाषित नहीं किए गए लेकिन सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 और बीएनएसएस में परिभाषित शब्दों और अभिव्यक्तियों के क्रमशः वही अर्थ होंगे जो उन्हें दिए गए हैं।

धारा 48 भारत में अपराध के लिए भारत के बाहर से उकसाने को परिभाषित करती है।[2]

नई जोड़ी गई धाराएं/अपराध

धारा 69 - कपटपूर्ण साधनों आदि का उपयोग करके यौन संबंध बनाना।

धारा 95- किसी बच्चे को अपराध करने के लिए काम पर रखना, नियोजित करना या संलग्न करना [3]

धारा 103(2)- पांच या अधिक व्यक्तियों के समूह द्वारा मिलकर नस्ल, जाति या समुदाय, लिंग, जन्म स्थान, भाषा, व्यक्तिगत विश्वास या इसी तरह के अन्य आधार पर हत्या करना[4]

धारा 106(1) के बाद के खंड में पंजीकृत चिकित्सा[5] व्यवसायी द्वारा लापरवाही से मृत्यु होने को दो वर्ष के कारावास की सजा के साथ परिभाषित किया गया है।

धारा 106(2)- वाहन को तेज गति से और लापरवाही से चलाकर मृत्यु का कारण बनना और पुलिस या मजिस्ट्रेट को सूचना दिए बिना भाग जाना (हिट एंड रन)[6]

धारा 111- संगठित अपराध

धारा 112- छोटे-मोटे संगठित अपराध[7]

धारा 113- आतंकवादी कृत्य उन आतंकवादी कृत्यों के लिए परिभाषाएँ और दंड प्रस्तुत करता है जो पहले केवल गैरकानूनी गतिविधियाँ रोकथाम अधिनियम, 1967 (यूएपीए)[8] के अंतर्गत आते थे, अस्पष्टता को दूर करने के लिए, यह स्पष्ट करता है कि पुलिस अधीक्षक या उच्च-श्रेणी का अधिकारी यह निर्धारित करेगा कि इस धारा के तहत या विशेष अधिनियम के तहत मामला दर्ज किया जाए या नहीं।

धारा 117(3)- जानबूझकर गंभीर चोट पहुंचाना, जिसके परिणामस्वरूप स्थायी विकलांगता या लगातार अक्षम अवस्था होना।

---

[2] यह धारा फातिमा बीबी अहमद पटेल बनाम गुजरात राज्य एआईआर 2008 एससी 2392 में सर्वोच्च न्यायालय के फैसले को विधायी प्रभाव प्रदान करती है।

[3] यह प्रावधान, अपराध करने के लिए नियुक्त और नियोजित ऐसे बच्चों के पीछे के वयस्कों को दंडित करने के लिए षड्यंत्र और उकसावे से संबंधित मौजूदा कानूनों में शामिल है।

[4] यह नया प्रावधान तहसीन एस पूनावाला बनाम भारत संघ, एआईआर 2018 एससी 3354 के फैसले में सुप्रीम कोर्ट द्वारा उठाई गई चिंताओं के अनुरूप है। आम बोलचाल में इसे मॉब लिंचिंग के नाम से जाना जाता है। गृह मामलों पर विभाग-संबंधित संसदीय स्थायी समिति की 246वीं रिपोर्ट की सिफारिशों के बाद भीड़ द्वारा हत्या की सजा को हत्या के बराबर कर दिया गया है।

[5] जाहिर है, जैकब मैथ्यू बनाम पंजाब राज्य एआईआर 2005 एससी 3180 में सर्वोच्च न्यायालय का फैसला इस संदर्भ में चिकित्सकों को मार्गदर्शन देने के लिए उपलब्ध होगा, जब तक कि यह इस प्रावधान के अक्षरशः और भावना के अनुरूप हो। उप-धारा का शेष भाग (सरल) भारतीय दंड संहिता की धारा 304 ए के अनुरूप है, जिसकी सजा दो वर्ष से बढ़ाकर पांच वर्ष कर दी गई है।

[6] इसे अभी तक लागू करने की अधिसूचना नहीं दी गई है।

[7] उल्लेखनीय बात यह है कि इस अपराध से किसी भी प्रकार की शारीरिक क्षति न होने के बावजूद इसे अध्याय V। के अंतर्गत वर्गीकृत किया गया है, जो मानव शरीर को प्रभावित करने वाले अपराधों से संबंधित है।

[8] इस बात पर बहस चल रही है कि क्या इस धारा को अध्याय VII में शामिल किया जाना चाहिए था, जो राज्य के विरुद्ध अपराधों से संबंधित है। माननीय केंद्रीय गृह मंत्री के लोक सभा में दिए गए भाषण (SUPRA) से इस सुधार के पीछे के औचित्य की जानकारी मिलती है।

धारा 117(4)- जानबूझकर पांच या अधिक व्यक्तियों द्वारा उसकी नस्ल, जाति या समुदाय, लिंग, जन्म स्थान, भाषा, व्यक्तिगत विश्वास या किसी अन्य समान आधार पर मिलकर गंभीर चोट पहुंचाना।

धारा 152. भारत की संप्रभुता, एकता और अखंडता को खतरे में डालने वाले कृत्य।[9]

धारा 197(1)(डी)- भारत की संप्रभुता, एकता और अखंडता या सुरक्षा को खतरे में डालने वाली झूठी या भ्रामक जानकारी प्रकाशित करना।

धारा 226- वैध शक्ति के प्रयोग को बाध्य करने या रोकने के लिए आत्महत्या करने का प्रयास।

धारा 304- छीना-झपटी।[10]

धारा 305. (बी) वाहन चोरी

धारा 305(सी)- वाहन से किसी वस्तु या सामान की चोरी

धारा 305(डी)- किसी पूजा स्थल में मूर्ति या चिह्न की चोरी

धारा 305(ई)- सरकार या स्थानीय प्राधिकरण की किसी संपत्ति की चोरी

धारा 341(3)- नकली मुहर, प्लेट या अन्य उपकरण को नकली जानते हुए भी अपने पास रखना

धारा 341(4)- नकली मुहर, प्लेट या उपकरण को धोखाधड़ी या बेईमानी से इस्तेमाल करना, यह जानते हुए या मानते हुए कि यह नकली है।

दंड योजना से संबंधित सुधार: दंड योजना से संबंधित विभिन्न सुधारों पर संक्षेप में निम्नानुसार चर्चा की गई है:

सजा के नए रूप के रूप में सामुदायिक सेवा:

धारा 4(एफ) के तहत, सजा का एक नया रूप सामुदायिक सेवा जोड़ा गया है। सामुदायिक सेवा[11] छह अपराधों के लिए निर्धारित है, जिसमें एक अपराध (धारा 209) संज्ञेय है और अन्य पांच गैर-संज्ञेय हैं। केवल एक प्रावधान, धारा 303(2), सामुदायिक सेवा को एकमात्र सजा के रूप में अनिवार्य करता है, जबकि अन्य पांच अपराधों के लिए, यह एक वैकल्पिक सजा है। ये छह अपराध इस प्रकार हैं:

धारा 202 [आईपीसी 168] लोक सेवक द्वारा अवैध रूप से व्यापार में संलिप्त होना।

धारा 209 [आईपीसी 174ए] बीएनएसएस की धारा 84(1) के तहत जारी उद्घोषणा के जवाब में गैर-हाजिर होना।

धारा 226 लोक सेवक को वैध शक्ति के प्रयोग के लिए बाध्य करने या रोकने के लिए आत्महत्या करने का प्रयास।

धारा 303(2) [आईपीसी 379] चोरी जहां चोरी की गई संपत्ति का मूल्य पांच हजार रुपये से कम है और व्यक्ति पहली बार अपराधी है और संपत्ति का मूल्य वापस कर दिया गया है, या चोरी की गई संपत्ति वापस कर दी गई है।

धारा 355 [आईपीसी 510] शराब के नशे में धुत व्यक्ति द्वारा सार्वजनिक रूप से दुराचार।

धारा 356(2) [आईपीसी 500] मानहानि।

---

[9] माननीय केंद्रीय गृह मंत्री के लोक सभा में भाषण में इन प्रावधानों पर विस्तृत चर्चा की गई, विशेष रूप से औपनिवेशिक युग की धारा 124ए के संदर्भ में, जिसे अब हटा दिया गया है। यह प्रावधान राजद्रोह (आईपीसी की धारा 124ए) के बहिष्कार से पैदा हुए अंतराल को भरता है, तथा औपनिवेशिक अपराध राजद्रोह से देशद्रोह में स्थानांतरित करता है। इसके अतिरिक्त, उप-धारा 197(1)(डी) जोड़ी गई है, जो भारत की संप्रभुता, एकता या अखंडता को खतरे में डालने वाली झूठी या भ्रामक जानकारी प्रसारित करने वालों को दंडित करती है।

[10] दिलचस्प बात यह है कि चोरी के इस गंभीर रूप में, बी.एन.एस. की धारा 303 के तहत निर्धारित अधिकतम सजा, सामान्य चोरी के लिए निर्धारित सजा से अधिक कठोर नहीं है। यह स्थिति तब है जब गुजरात, पंजाब और हरियाणा राज्यों ने अपने-अपने संशोधनों के द्वारा पहले ही झपटमारी [379ए, 379बी आईपीसी] के लिए दस वर्ष तक के कारावास का प्रावधान जोड़ दिया है और यहां तक कि चोट पहुंचाने, गलत तरीके से रोकने, चोट पहुंचाने के डर आदि के साथ झपटमारी के मामलों में भी चौदह वर्ष तक के कारावास का प्रावधान है।

[11] सामुदायिक सेवा को बी.एन.एस. में परिभाषित नहीं किया गया है, लेकिन बी.एन.एस.एस. की धारा 23 के तहत इसकी व्याख्या की गई है। इन नए आपराधिक प्रमुख अधिनियमों के अंतर्गत आने से पहले, सामुदायिक सेवा किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2015 की धारा 18 (सी) और मोटर वाहन अधिनियम, 1988 (1988 का 59) के तहत प्रदान की जाती थी।

कारावास के संदर्भ में बढ़ी हुई सज़ा:

कारावास के संदर्भ में संगत प्रावधानः

8(5)(C)/67(C), 57/117, 99/373, 106(1)/304(A), 121(1)/332, 122(2)/335, 125 (b) /338, 127(3)/343, 127 (4)/344, 127(6)/346, 139(1)/363A, 139(2)/363A, 144(1)/370A, 144(2)/370A, 166/138, 191(3)/148, 04/170, 217/182, 223(a)/188, 223(b)/188, 241/204, 243/206, 248(a)/211, 248(b)/211, 276/274, 279/277, 303(2)/379, 308(2)/384, 316(2)/406, 318(2) /417, 318(3)/418, 319(2)/419, 322/423, 323/424, 324 (2) /426, 325/428 & 429

न्यूनतम अनिवार्य सज़ा (कारावास की निचली सीमा)

बीएनएस के तहत बनाए गए अधिकांश नए अपराधों में कारावास के रूप में न्यूनतम अनिवार्य सजा का प्रावधान है, अर्थात्, धारा 95 , 111(2)(बी), 111(3) , 111(4) , 111(5), 111(6), 1 11(7), 112(नया), 113(2)(बी) , 113(3), 113(4), 113(6) और 117(3)

बीएनएस ने आईपीसी की निम्नलिखित धाराओं में कारावास की न्यूनतम अनिवार्य सजा भी पेश की है, अर्थात् 105 /304, 118(2) / 326 , 121(2) / 333 , 139(1) / 363ए , 139(2) / 363ए, 204 / 170 , 303(2) / 379 , 310(3) / 396 , 314 / 403 और 320 / 421.

जुर्माने की सज़ा से संबंधित सुधार

बीएनएस में निम्नलिखित 67 अपराधों में जुर्माना बढ़ाया गया है:

8(5)(a)/67A, 8(5)(b)/67B, 115(2)/323, 122(1)/334, 122(2)/335, 125/336, 125A/337, 125B/338, 126(2)/341, 127(2)/342, 131/352, 135/357, 136/358, 165/137, 168/140, 176/171(h), 177/177(I), 182(1)/489(E), 182(2)/490, 194(2)/160, 205/171, 206(a)/172, 206(b)/172, 207(a)/173, 207(b)/173, 208(a)/174, 208(b)/174, 210(a)/175, 210(b)/175, 211(a)/176, 211(b)/176, 212(a)/177, 213/178, 214/179, 215/180, 217/182, 218/183, 219/184, 221/186, 222(a)/187, 222(b)/187, 223(a)/188, 223(b)/188, 267/228, 274/272, 275/273, 276/274, 277/275, 278/276, 279/277, 280/278, 282/280, 284/282, 285/283, 286/284, 287/285, 288/286, 289/287, 290/288, 291/289, 292/290, 294/292, 297(2)/295(2), 329(3)/447, 329(4)/448, 355/5(10), 357/491.

बीएनएस के दो अपराधों में जुर्माना जोड़ा गया है वह हैं 127(5) / 345, 127(6) / 346

धारा 105 बीएनएस/304 आईपीसी में कारावास के अतिरिक्त "या दोनों" वाक्यांश को प्रतिस्थापित करके जुर्माना अनिवार्य रूप से लगाया गया है।

बीएनएस के निम्नलिखित अपराधों में पहले से अपरिभाषित जुर्माना राशि निर्धारित की गई है:

118 / 324, 127(3) / 343, 127(4) / 344, 229(1) / 193, 229(2) / 193, 230(1) / 194, 239 / 202, 241 / 204, 243 / 206, 248(a) / 211, 293/291 , 296/294 .

बीएनएस की दो धाराओं में जुर्माने की न्यूनतम राशि जोड़ी गई है अर्थात 195(1)/152, 28/281

बीएनएस की धारा 104 [आईपीसी 303] और 109(2) [आईपीसी 307] सुप्रीम कोर्ट के फैसले[12] के अनुरूप है, जिसमें अनिवार्य मृत्युदंड को असंवैधानिक घोषित किया गया है। विधानमंडल आजीवन कारावास की सजा पाने वाले व्यक्ति द्वारा किए गए इन अपराधों के लिए वैकल्पिक सजा के रूप में आजीवन कारावास की अनुमति देकर इसे संहिताबद्ध करता है।

उप-धारा 303(2) [आईपीसी 379] चोरी के मामले में बाद में दोषी पाए जाने पर बढ़ी हुई सज़ा का प्रावधान करती है। यह बीएनएस की धारा 13 [आईपीसी 75] के अतिरिक्त है, जो इस संहिता के अध्याय X और XVII के तहत अपराधों में बाद में

[12]Mithu vs State of Punjab AIR 1983 SC 473

दोषी पाए जाने पर तीन साल या उससे अधिक की अवधि के कारावास से दंडनीय सज़ा प्रदान करती है।

लिंग तटस्थता लाने और आयु-संबंधी प्रावधानों को युक्तिसंगत बनाने के लिए किए गए सुधार:

निम्नलिखित अपराधों को लिंग-तटस्थ बनाया गया है:

कपड़े उतारने के इरादे से किसी महिला पर हमला या आपराधिक बल का प्रयोग (धारा-76) [आईपीसी 354बी];

घूरना (धारा-77) [आईपीसी 354सी];

बच्चे की खरीद (धारा -96) [आईपीसी 366ए];

अपहरण [धारा -137(1)(बी)] [आईपीसी 361];

किसी अन्य देश से लड़की या लड़के का आयात (धारा-141) [आईपीसी 366बी] और

भगोड़े को शरण देने (धारा-164) [आईपीसी 136]

किसी पुरुष द्वारा अपनी पत्नी के साथ यौन संबंध या अन्य कृत्यों के मामले में सहमति की आयु आईपीसी में पंद्रह वर्ष है, जिसे अब बीएनएस की धारा 63 के अपवाद 2 [आईपीसी की धारा 375 का अपवाद 2] में बदलकर अठारह वर्ष[13] कर दिया गया है।

बीएनएस की उप-धारा 70(2) आईपीसी की धारा 376डीबी की जगह लेती है, जिससे अब अठारह (बारह के स्थान पर) वर्ष से कम उम्र की पीड़ितों के साथ सामूहिक बलात्कार को मृत्युदंड तक की सजा हो सकती है। इस प्रकार, यह यहां और बीएनएसएस की धारा 482(4) [सीआरपीसी 438(4)] के तहत भी दायरे का काफी विस्तार करता है, जिससे ऐसे आरोपियों को अग्रिम जमानत मिलने से रोका जा सके। इससे सोलह वर्ष से कम आयु की सामूहिक बलात्कार पीड़िता (आईपीसी की धारा 376डीए) की अतिरिक्त श्रेणी हट गई है।

धारा 295 (आईपीसी 293), जो युवा व्यक्तियों को अश्लील वस्तुओं की बिक्री से संबंधित है, को बीस वर्ष से कम आयु के स्थान पर बालक की आयु रखकर युक्तिसंगत बनाया गया है।

बीएनएस में कुछ अन्य महत्वपूर्ण सुधार

भारतीय दंड संहिता में प्रयोग होने वाले "पागल व्यक्ति", "पागल" आदि शब्दों को बीएनएस 22, 27, 36, 46, 72, 107 और 137 आदि में हर जगह "विक्षिप्त दिमाग वाला व्यक्ति" आदि जैसे वाक्यांशों से बदल दिया गया है। यह मानसिक स्वास्थ्य देखभाल अधिनियम, 2017 (2017 का 10) में प्रयुक्त वाक्यांशों के अनुरूप है।

उप-धारा 116 (एच) ने गंभीर चोट की परिभाषा को संशोधित किया है, जिससे पीड़ित होने की अवधि बीस दिन से घटाकर पंद्रह दिन कर दी गई है। इस प्रकार, इसने प्रावधान के दायरे को बढ़ा दिया है।

बीएनएस की धारा 299 [आईपीसी 295 ए]- "या इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से" शब्दों को जोड़कर किसी भी वर्ग आदि की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुंचाने के संबंधित अपराध के दायरे का विस्तार करता है।

धारा 326 (डी) [आईपीसी 433] - रेल और विमान को भी जोड़ने से, चोट, बाढ़, आग या विस्फोटकों द्वारा शरारत के संबंध में दायरा काफी व्यापक हो गया है।

बीएनएस की धारा 337 [आईपीसी 466] के तहत - न्यायालय या सार्वजनिक रजिस्ट्री के अभिलेखों की जालसाजी के संदर्भ में मतदाता पहचान पत्र या आधार कार्ड सहित सरकार द्वारा जारी पहचान दस्तावेजों को जोड़ा गया है।

बीएनएस की धारा 353 [आईपीसी 505] के तहत - "झूठी सूचना" और "इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों से शामिल" वाक्यांशों को जोड़कर, दायरे को काफी हद तक विस्तारित किया गया है।

आईपीसी और बीएनएस के क्रमिक मूल कानूनों की तुलना करने का एक और तरीका इन कानूनों में निर्धारित अपराधों

[13] इस प्रकार, यह इंडिपेंडेंट थॉट बनाम भारत संघ एआईआर 2017 एससी 4904 में सर्वोच्च न्यायालय के फैसले और अन्य विशेष अधिनियमों जैसे यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण अधिनियम, 2012 और बाल विवाह (निषेध) अधिनियम, 2006 आदि के अनुरूप है।

का तुलनात्मक सांख्यिकीय विश्लेषण हो सकता है। इसलिए, इसे नीचे दी गई तालिका में प्रस्तुत किया गया है:

दो मूल कानूनों के अंतर्गत निर्धारित अपराधों के तुलनात्मक आंकड़े

क्र. सं.	विवरण	भारतीय दंड संहिता	बीएनएस
1.	अपराधों की कुल संख्या	483	467
2.	संज्ञेय अपराधों की संख्या	314	297
3.	गैर-संज्ञेय अपराधों की संख्या	147	147
4.	जमानती अपराधों की संख्या	264	255
5.	गैर- जमानती अपराधों की संख्या	205	196
6.	सत्र न्यायालय द्वारा विचारणीय अपराधों की संख्या	105	118
7.	प्रथम श्रेणी मजिस्ट्रेट द्वारा विचारणीय अपराधों की संख्या	170	144
8.	किसी भी मजिस्ट्रेट द्वारा विचारणीय अपराधों की संख्या	172	166
9	अपराधों की संख्या जो पक्षों द्वारा स्वयं सुलझाए जा सकते हैं	43	42
10.	न्यायालय की अनुमति से समझौता योग्य अपराधों की संख्या	13	13
11.	गैर-समझौता योग्य अपराधों की संख्या	427	412
12.	संज्ञेय अपराधों की संख्या जिनकी सजा सात वर्ष से कम या सात वर्ष तक हो सकती है	199	174
13.	सात वर्ष या उससे अधिक अवधि के कारावास से दंडनीय अपराधों की संख्या	102	117
14.	दस वर्ष या उससे अधिक अवधि के कारावास से दंडनीय अपराधों की संख्या	76	85
15.	मृत्युदंड से दण्डित अपराधों की संख्या	13	16

नोट: 23 अपराधों को इस आधार पर वर्गीकृत किया गया है कि "अपराध के लिए उकसाया जाना संज्ञेय है या असंज्ञेय" आदि। 16 अपराधों को इस आधार पर वर्गीकृत किया गया है कि "अपराध के लिए उकसाया जाना जमानतीय है या गैर-जमानती" आदि। 39 अपराधों को इस आधार पर वर्गीकृत किया गया है कि "अपराध के लिए उकसाया जाना किस न्यायालय द्वारा विचारणीय है" आदि। अत: इस परिवर्तनशीलता के कारण उन्हें संबंधित बाइनरी में शामिल नहीं किया गया है।

बीएनएस में आईपीसी की हटाई गईं धाराएं

राजद्रोह से संबंधित धारा 124ए आईपीसी [14]

[14] उपरोक्त नोट #9 का संदर्भ लें।

153एए आईपीसी[15]

आईपीसी के अध्याय XIII की सभी चार धाराएं, यानी धारा 264 से 267 को अलग विशेष अधिनियम के रूप में बहिष्कृत किया गया है, कानूनी माप विज्ञान अधिनियम, 2009 इस विषय को व्यापक रूप से कवर करता है।

धारा 309 आत्महत्या का प्रयास[16]

धारा 377 अप्राकृतिक अपराध[17]

धारा 497 व्याभिचार[18]

आईपीसी की अन्य बहिष्कृत धाराएं 14, 18, 50, 53ए, 236, 310, 311, 376डीए, 444 और 446 हैं।

भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता में किए गए सुधारों का सारांश।

नई जोड़ी गई या संशोधित परिभाषाएँ

2(1) (ए) ऑडियो - वीडियो इलेक्ट्रॉनिक साधन

2(1) (बी) जमानत - जमानत बांड या बांड के निष्पादन पर सशर्त रिहाई

2(1) (डी) जमानत बांड - जमानत के साथ रिहाई के लिए वचनबद्धता

2(1) (ई) बांड - जमानत के बिना रिहाई के लिए वचनबद्धता

2(1) (आई) इलेक्ट्रॉनिक संचार

2(1) (l) [सीआरपीसी 2(4)] 'जांच' में एक 'स्पष्टीकरण' जोड़ा गया है ताकि यह स्पष्ट किया जा सके कि किसी विशेष अधिनियम और इस संहिता के प्रावधानों के बीच असंगति के मामलों में, विशेष अधिनियम का प्रावधान ही मान्य होगा। यह उसी प्रभाव के लिए धारा 5 (बचत) के प्रावधान के अतिरिक्त है, जो लैटिन कहावत "Generalia specialibus non derogant" में सन्निहित है।

आपराधिक न्यायालयों का नया वर्गीकरण

बीएनएसएस [सीआरपीसी 6] की धारा 6 के अनुसार केवल निम्नलिखित चार प्रकार के आपराधिक न्यायालय होंगे:

(i) सत्र न्यायालय

(ii) प्रथम श्रेणी के न्यायिक मजिस्ट्रेट

(ii) द्वितीय श्रेणी के न्यायिक मजिस्ट्रेट; और

(iv) कार्यकारी मजिस्ट्रेट

इस प्रकार, मेट्रोपोलिटन मजिस्ट्रेट, सहायक सत्र न्यायाधीश और तृतीय श्रेणी के न्यायिक मजिस्ट्रेट के पद समाप्त कर दिए गए हैं।

बीएनएसएस में जोड़ी गई नई धाराएं

धारा 86 में प्रावधान है कि पुलिस अधीक्षक या पुलिस आयुक्त या उससे उच्च रैंक के अधिकारी के लिखित अनुरोध पर

[15] किसी जुलूस में जानबूझकर हथियार लेकर चलने या हथियारों के साथ किसी सामूहिक ड्रिल या सामूहिक प्रशिक्षण का आयोजन या उसमें भाग लेने के लिए दंड । यह धारा, प्रक्रियात्मक समकक्ष धारा, 144ए सीआरपीसी के साथ, 2005 के अधिनियम 25 द्वारा सम्मिलित की गई थी, लेकिन उनकी प्रवर्तन तिथि कभी अधिसूचित नहीं की गई थी।

[16] मानसिक स्वास्थ्य देखभाल अधिनियम, 2017 की धारा 115 (1) ने इस धारा के दायरे को काफी हद तक सीमित कर दिया था, जिसमें कहा गया था कि आईपीसी की धारा 309 में किसी बात के बावजूद, कोई भी व्यक्ति जो आत्महत्या करने का प्रयास करता है, उसके बारे में यह माना जाएगा कि वह गंभीर तनाव में है, जब तक कि अन्यथा साबित न हो जाए, और उस पर मुकदमा नहीं चलाया जाएगा या उसे दंडित नहीं किया जाएगा।

[17] गृह मामलों पर विभाग-संबंधित संसदीय स्थायी समिति (SUPRA) की 246वीं रिपोर्ट ने नवतेज सिंह जौहर बनाम भारत संघ एआईआर 2018 एससी 4321 में सुप्रीम कोर्ट के पांच न्यायाधीशों की पीठ के फैसले के अनुसार स्थिति को बनाए रखने की स्पष्ट रूप से सिफारिश की ताकि एक वयस्क पुरुष, ट्रांसजेंडर के खिलाफ गैर-सहमति से किए गए शारीरिक संभोग और पशुता के कृत्यों को कानूनी रूप से दंडित किया जा सके।

[18] भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने जोसेफ शाइन बनाम भारत संघ एआईआर 2018 एससी 4898 के मामले में आईपीसी की धारा 497 को संविधान के अनुच्छेद 14, 15 और 21 का उल्लंघन होने के कारण असंवैधानिक करार दिया।

न्यायालय भारत के बाहर किसी देश या स्थान (अनुबंधित राज्य) में घोषित व्यक्ति से संबंधित संपत्ति की पहचान, कुर्की और जब्ती के लिए अध्याय VIII में दिए गए अनुरोध पत्र जारी करने की प्रक्रिया शुरू कर सकता है।

बीएनएसएस की धारा 105 में अध्याय VII या धारा 185 [सीआरपीसी 165] के तहत तलाशी और जब्ती की अनिवार्य ऑडियो-वीडियो रिकॉर्डिंग का प्रावधान है, जिसमें किसी स्थान की तलाशी लेने की प्रक्रिया, किसी संपत्ति, वस्तु या चीज को कब्जे में लेने की प्रक्रिया, जब्त की गई सभी चीजों की सूची तैयार करना और गवाहों द्वारा ऐसी सूची पर हस्ताक्षर करना शामिल हैं।[19]

बीएनएसएस की धारा 107 आपराधिक गतिविधि से प्राप्त या प्राप्त संपत्ति की कुर्की, जब्ती या बहाली की प्रक्रिया प्रदान करती है। जांच अधिकारी पुलिस अधीक्षक या पुलिस आयुक्त की मंजूरी से अदालत में इसकी कुर्की के लिए आवेदन कर सकता है। अदालत, यदि संतुष्ट होती है, तो चौदह दिनों के भीतर जवाब के लिए कारण बताओ नोटिस जारी करेगी। जवाबों, साक्ष्यों और सुनवाई पर विचार करने के बाद, न्यायालय अपराध की आय के रूप में संपत्ति की कुर्की का आदेश दे सकता है, यदि कोई प्रतिक्रिया नहीं मिलती है तो संभावित रूप से एकपक्षीय आदेश जारी कर सकता है। यदि न्यायालय को लगता है कि इससे कुर्की का उद्देश्य विफल हो जाएगा तो वह नोटिस को दरकिनार कर सकता है और अंतरिम एकपक्षीय आदेश जारी कर सकता है। यदि संपत्ति के अपराध की आय के रूप में पुष्टि की जाती है, तो न्यायालय जिला मजिस्ट्रेट को साठ दिनों के भीतर पीड़ितों को आय का समान वितरण करने का निर्देश देगा। अपराध की कोई भी अधिशेष या दावा न की गई आय सरकार द्वारा जब्त कर ली जाएगी।

बीएनएसएस की धारा 336- लोक सेवक, विशेषज्ञ और पुलिस अधिकारियों का साक्ष्य - जहां किसी लोक सेवक, वैज्ञानिक विशेषज्ञ या चिकित्सा अधिकारी द्वारा तैयार किया गया कोई दस्तावेज या रिपोर्ट इस संहिता के तहत किसी जांच, परीक्षण या अन्य कार्यवाही में साक्ष्य के रूप में इस्तेमाल किए जाने का दावा किया जाता है और यदि ऐसा लोक सेवक, विशेषज्ञ या अधिकारी स्थानांतरित हो जाता है या सेवानिवृत्त हो जाता है या मर जाता है, या नहीं मिल पाता है या गवाही देने में असमर्थ है, या उसकी उपस्थिति सुनिश्चित करने से देरी होगी, तो न्यायालय ऐसे दस्तावेज या रिपोर्ट पर गवाही देने के लिए उस पद पर आसीन उसके उत्तराधिकारी की उपस्थिति सुनिश्चित करेगा: बशर्ते कि इनमें से किसी को भी तब तक नहीं बुलाया जाएगा जब तक कि ऐसे दस्तावेज या रिपोर्ट पर किसी भी पक्ष द्वारा विवाद न किया जाए। बशर्ते कि ऐसे उत्तराधिकारी की गवाही ऑडियो-वीडियो इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से दी जा सकती है।[20]

नई जोड़ी गई बीएनएसएस की धारा 356 घोषित अपराधियों की अनुपस्थिति में जांच, परीक्षण या निर्णय[21] हमारे न्यायशास्त्र के इतिहास में एक क्रांतिकारी प्रावधान है। जब घोषित अपराधी परीक्षण से बचने के लिए फरार हो जाता है, और उसे गिरफ्तार करने की तत्काल कोई संभावना नहीं होती है, तो इसे ऐसे व्यक्ति के व्यक्तिगत रूप से उपस्थित होने और परीक्षण के अधिकार का परित्याग माना जाएगा, और न्यायालय न्याय के हित में लिखित रूप में कारणों को दर्ज करने के बाद, उसी तरह और उसी प्रभाव से परीक्षण को आगे बढ़ाएगा जैसे कि वह उपस्थित था और निर्णय सुनाता है। बशर्ते कि न्यायालय तब तक परीक्षण शुरू नहीं करेगा जब तक कि आरोप तय होने की तारीख से नब्बे दिन की अवधि बीत न जाए।

---

[19] इस नए जोड़ के साथ, प्रक्रिया अब शफी मोहम्मद बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य (2018) (2018) 5 एससीसी 311 में सुप्रीम कोर्ट के फैसले द्वारा उठाई गई चिंताओं का अनुपालन करती है।

[20] इस नवाचार से उन मामलों की सुनवाई में तेजी आने की उम्मीद है, जो लोक सेवक के न्यायालय में गवाही देने के लिए उपस्थित न होने के कारण प्रतिकूल रूप से प्रभावित होते हैं।

[21] भारतीय उपमहाद्वीप में, अनुपस्थिति में मुकदमे की पहली नवीनता बांग्लादेश द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 में अध्यादेश, 1982 (1982 का अध्यादेश संख्या XXIV) द्वारा धारा 339B और 339C को सम्मिलित करके पेश की गई थी। भारत में, झारखंड राज्य ने दंड प्रक्रिया संहिता (झारखंड संशोधन) अधिनियम, 2020 (झारखंड अधिनियम- 06, 2022) के माध्यम से CrPC की धारा 299 में संशोधन करके ऐसी अवधारणा पेश की।

न्यायालय यह सुनिश्चित करेगा कि अनुपस्थिति में इस तरह के परीक्षण से पहले कुछ प्रक्रियाओं का पालन किया जाए, जैसे गिरफ्तारी के दो लगातार वारंट जारी करना, समाचार पत्र में प्रकाशन, उसके रिश्तेदारों या दोस्तों को सूचित करना आदि। यदि उसका प्रतिनिधित्व किसी वकील द्वारा नहीं किया जाता है, तो उसे राज्य के खर्च पर उसके बचाव के लिए एक वकील उपलब्ध कराया जाएगा। यदि उसे गिरफ्तार किया जाता है और पेश किया जाता है, या ऐसे परीक्षण के दौरान न्यायालय के समक्ष उपस्थित होता है, तो न्यायालय न्याय के हित में उसे किसी भी साक्ष्य की जांच करने की अनुमति दे सकता है जो उसकी अनुपस्थिति में लिया गया हो। ऐसे निर्णय के विरुद्ध कोई अपील तब तक नहीं की जा सकती जब तक कि वह न्यायालय के समक्ष स्वयं उपस्थित न हो जाए। निर्णय की तिथि से तीन वर्ष की समाप्ति के पश्चात दोषसिद्धि के विरुद्ध कोई अपील नहीं की जा सकती।

बीएनएसएस की धारा 398 (नई) **गवाह संरक्षण योजना** - प्रत्येक राज्य सरकार गवाह की सुरक्षा सुनिश्चित करने के उद्देश्य से राज्य के लिए एक गवाह संरक्षण योजना तैयार और अधिसूचित करेगी।[22]

नई जोड़ी गई बीएनएसएस की **धारा 472** मृत्युदंड के तहत दोषी व्यक्ति या उसका कानूनी उत्तराधिकारी या कोई अन्य रिश्तेदार, अपील खारिज होने या सजा की पुष्टि के बारे में जेल अधीक्षक द्वारा सूचित किए जाने के तीस दिनों के भीतर अनुच्छेद 72 के तहत भारत के राष्ट्रपति या अनुच्छेद 161 के तहत राज्य के राज्यपाल के पास **दया याचिका** दायर कर सकता है। यदि राज्यपाल याचिका को खारिज कर देता है, तो इसे साठ दिनों के भीतर राष्ट्रपति को प्रस्तुत किया जा सकता है। अधीक्षक को यह सुनिश्चित करना होगा कि किसी मामले में सभी दोषी साठ दिनों के भीतर याचिका दायर करें और किसी भी गुम याचिका का विवरण सरकार को भेजें। केंद्र सरकार, राज्य सरकार से परामर्श करने के बाद, साठ दिनों के भीतर राष्ट्रपति को सिफारिशें करेगी। राष्ट्रपति किसी मामले में सभी याचिकाओं पर एक साथ निर्णय लेंगे। राष्ट्रपति का आदेश प्राप्त होने पर, उसे अड़तालीस घंटे के भीतर संबंधित को सूचित किया जाएगा, और राष्ट्रपति या राज्यपाल के निर्णय के खिलाफ किसी भी न्यायालय में कोई अपील नहीं की जाएगी।

बीएनएसएस की **धारा 530** (नई): इस धारा ने स्पष्ट रूप से न्यायालय को इलेक्ट्रॉनिक मोड में परीक्षण और कार्यवाही आयोजित करने का अधिकार दिया है - बीएनएसएस के तहत सभी परीक्षण, जांच और कार्यवाही, जिसमें सम्मन और वारंट जारी करना और निष्पादित करना, शिकायतकर्ताओं और गवाहों की जांच, साक्ष्य की रिकॉर्डिंग और अपीलीय कार्यवाही शामिल है, ऑडियो-वीडियो संचार का उपयोग करके इलेक्ट्रॉनिक रूप से आयोजित की जा सकती है।

बीएनएसएस में एफआईआर संबंधी सुधार

बीएनएसएस की धारा 173 [सीआरपीसी 154] किसी संज्ञेय अपराध के बारे में सूचना, चाहे वह जिस क्षेत्र में भी हो (**शून्य एफआईआर**), मौखिक रूप से या इलेक्ट्रॉनिक संचार (**ई-एफआईआर**) के माध्यम से पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी को दी जा सकती है। एफआईआर की एक प्रति सूचनाकर्ता या पीड़ित को निःशुल्क प्रदान की जानी चाहिए।

उप-धारा (3) में यह प्रावधान है कि किसी संज्ञेय अपराध के घटित होने से संबंधित सूचना प्राप्त होने पर, जो तीन वर्ष या उससे अधिक किन्तु सात वर्ष से कम के लिए दंडनीय है, पुलिस थाने का भारसाधक अधिकारी, अपराध की प्रकृति और गंभीरता को देखते हुए, पुलिस उपाधीक्षक या उससे उपर के अधिकारी की पूर्व अनुमति से, -

(i) चौदह दिनों की अवधि के भीतर मामले में कार्यवाही के लिए प्रथम दृष्टया मामला[23] मौजूद है या नहीं, यह पता लगाने के लिए प्रारंभिक जांच करना; या

(ii) प्रथम दृष्टया मामला मौजूद होने पर जांच के साथ आगे बढ़ना।

[22] संभवतः, गवाह संरक्षण योजना, 2018, जिसका संज्ञान सर्वोच्च न्यायालय ने महेंद्र चावला बनाम भारत संघ, गृह मंत्रालय एआईआर 2018 एससी (एसयूपीपी) 2561 में लिया है, को इस बीच संदर्भ दस्तावेज के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है और संबंधित राज्य की सरकार द्वारा ऐसी योजना की मसौदा तैयार करने की प्रक्रिया के दौरान भी इस्तेमाल किया जा सकता है।

[23] ललिता कुमारी बनाम उत्तर प्रदेश सरकार (उत्तर प्रदेश राज्य) एआईआर 2014 एससी 187 में संविधान पीठ का निर्णय उन मामलों में भी लागू होगा जो इस उपधारा के दायरे में नहीं आते हैं।

बीएनएसएस में निर्धारित विशिष्ट समय-सीमा

समय पर न्याय सुनिश्चित करने के लिए, बीएनएसएस में विभिन्न समय-सीमाएं स्थापित की गई हैं, जिनका संक्षेप में उल्लेख इस प्रकार है:

धारा 19(3) [सीआरपीसी 25] - राज्य सरकार को **चौदह दिन** का नोटिस देने के बाद सहायक लोक अभियोजक की नियुक्ति।

धारा 40 [सीआरपीसी 43] - निजी व्यक्ति द्वारा गिरफ्तारी, गिरफ्तारी के बाद उसे **छह घंटे** के भीतर अपराधी को पुलिस अधिकारी को सौंप देना चाहिए

धारा 50 [सीआरपीसी 52] - आक्रामक हथियार जब्त करने की शक्ति - गिरफ्तारी के **तुरंत** बाद इसे जब्त कर लिया जाना चाहिए

धारा 157[सीआरपीसी 138]- वह प्रक्रिया, जहां धारा 152 [सीआरपीसी 133] के तहत आदेश पारित करने वाला व्यक्ति कारण बताने के लिए उपस्थित होता है। बशर्ते कि इस धारा के तहत कार्यवाही यथासंभव शीघ्र, **नब्बे दिन** की अवधि के भीतर पूरी की जाएगी, जिसे लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों से **एक सौ बीस दिन** तक बढ़ाया जा सकता है।

धारा 173(1)(ii) [सीआरपीसी 154] यदि पहली सूचना इलेक्ट्रॉनिक संचार द्वारा दी जाती है, तो इसे देने वाले व्यक्ति द्वारा **तीन दिनों** के भीतर हस्ताक्षरित किए जाने पर प्रभारी अधिकारी द्वारा रिकॉर्ड पर लिया जाएगा।

धारा 173(3) [सीआरपीसी 154]- यह पता लगाने के लिए प्रारंभिक जांच कि क्या **चौदह दिनों** की अवधि के भीतर मामले में कार्यवाही करने के लिए प्रथम दृष्टया मामला मौजूद है;

धारा 174(1) [सीआरपीसी 155] - गैर-संज्ञेय अपराध की सूचना मजिस्ट्रेट को **पाक्षिक** रूप से भेजी जानी चाहिए।

धारा 176(2) [सीआरपीसी 157]- प्रभारी अधिकारी, दैनिक डायरी रिपोर्ट को **पाक्षिक** रूप से मजिस्ट्रेट को अग्रेषित करेगा।

धारा 184(6) [सीआरपीसी 164 ए]- पंजीकृत चिकित्सा अधिकारी, **सात दिनों** की अवधि के भीतर जांच अधिकारी को रिपोर्ट अग्रेषित करेगा।

धारा 185(5) [सीआरपीसी 165]- उप-धारा (1) या उप-धारा (3) के तहत बनाए गए किसी भी रिकॉर्ड की प्रतियां तुरंत, लेकिन **अड़तालीस घंटे** से अधिक नहीं, मजिस्ट्रेट को भेजी जाएंगी।

धारा 187(2) [सीआरपीसी 167] - यदि जांच **अड़तालीस घंटे** में पूरी नहीं होती है तो मजिस्ट्रेट अभियुक्त को ऐसी हिरासत में रखने का आदेश दे सकता है जिसे मजिस्ट्रेट उचित समझे (जिसमें पुलिस हिरासत भी शामिल है), जिसकी अवधि पूरे या आंशिक रूप से **पन्द्रह दिन** से अधिक नहीं होगी, जो **साठ दिन** या **नब्बे दिन** की हिरासत अवधि में से किसी भी समय हो सकती है।

धारा 193(9) [सीआरपीसी 173(8)] - मुकदमे के दौरान आगे की जांच मामले की सुनवाई कर रहे न्यायालय की अनुमति से की जा सकती है और इसे **नब्बे दिन** की अवधि के भीतर पूरा किया जाएगा जिसे न्यायालय की अनुमति से बढ़ाया जा सकता है।

धारा 194(2) - आत्महत्या की जांच रिपोर्ट पर पुलिस अधिकारी द्वारा हस्ताक्षर किए जाने चाहिए और इसे **चौबीस घंटे** के भीतर जिला मजिस्ट्रेट या उप मंडल मजिस्ट्रेट को भेजा जाना चाहिए।

धारा 218(1) [सीआरपीसी 197]- सरकार अभियोजन स्वीकृति के लिए अनुरोध प्राप्त होने की तिथि से **एक सौ बीस दिनों** की अवधि के भीतर अभियोजन स्वीकृति के बारे में निर्णय लेगी और यदि वह ऐसा करने में विफल रहती है, तो इसे सरकार द्वारा स्वीकृति प्रदान की गई मानी जाएगी।

धारा 230 [सीआरपीसी 207]- अभियुक्त के पेश होने या पेश होने की तिथि से अधिकतम **चौदह दिनों** के भीतर किसी भी मामले में पुलिस रिपोर्ट या अन्य दस्तावेजों की प्रति की आपूर्ति, अभियुक्त और पीड़ित (यदि अधिवक्ता द्वारा प्रतिनिधित्व किया जाता है) को प्रदान करें।

धारा 232 [सीआरपीसी 209]- सत्र न्यायालय को मामले की सुपुर्दगी संज्ञान लेने की तिथि से **नब्बे दिनों** की अवधि के भीतर पूरी की जाएगी, और ऐसी अवधि को मजिस्ट्रेट

द्वारा लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों से **एक सौ अस्सी दिनों** से अधिक की अवधि के लिए बढ़ाया जा सकता है:

धारा 250(1) [सीआरपीसी 227]- सत्र परीक्षण में आरोप मुक्त करने के लिए अभियुक्त धारा 232 के तहत मामले की प्रतिबद्धता की तारीख से **साठ दिनों** की अवधि के भीतर आरोप मुक्त करने के लिए आवेदन कर सकता है।

धारा 251(1) [सीआरपीसी 228]- सत्र परीक्षण में आरोप पर पहली सुनवाई की तारीख से **साठ दिनों** की अवधि के भीतर आरोप तय करना।

धारा 258 (1) [सीआरपीसी 235]- तर्कों के पूरा होने की तारीख से **तीस दिनों** की अवधि के भीतर निर्णय, जिसे लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों से **पैंतालीस दिनों** की अवधि तक बढ़ाया जा सकता है।

धारा 262- (1) [सीआरपीसी 239] वारंट ट्रायल में आरोप मुक्त होने के लिए अभियुक्त धारा 230 के तहत दस्तावेजों की प्रतियां उपलब्ध कराए जाने की तारीख से **साठ दिनों** की अवधि के भीतर आरोप मुक्त करने के लिए आवेदन कर सकता है।

धारा 263 [सीआरपीसी 240] - आरोप पर पहली सुनवाई की तारीख से **साठ दिनों** की अवधि के भीतर वारंट ट्रायल में आरोप तय करना।

धारा 272 [सीआरपीसी 249] - शिकायतकर्ता की अनुपस्थिति: मजिस्ट्रेट शिकायतकर्ता को उपस्थित होने के लिए **तीस दिन** का समय देने के बाद, अपने विवेक से, आरोप तय होने से पहले किसी भी समय, अभियुक्त को आरोपमुक्त कर सकता है।

धारा 279 [सीआरपीसी 256] - सम्मन परीक्षण में शिकायतकर्ता की गैरहाजिरी या मृत्यु: मजिस्ट्रेट, शिकायतकर्ता को उपस्थित होने के लिए **तीस दिन** का समय देने के बाद, अभियुक्त को दोषमुक्त कर देगा, जब तक कि किसी कारण से वह मामले की सुनवाई को किसी अन्य दिन के लिए स्थगित करना उचित न समझे:

धारा 290(1) [सीआरपीसी 265बी] - आरोप तय करने की तिथि से **तीस दिनों** के भीतर plea bargaining के लिए आवेदन

धारा 290(3) [सीआरपीसी 265बी] Plea bargaining के आवेदन पर दोनों पक्षों द्वारा मामले के पारस्परिक रूप से संतोषजनक निपटान पर पहुंचने के लिए - न्यायालय द्वारा आवेदन स्वीकार करने की तिथि से **साठ दिन**

धारा 316 [सीआरपीसी 281] - अभियुक्त की जांच का रिकॉर्ड: जहां अभियुक्त हिरासत में है और इलेक्ट्रॉनिक संचार के माध्यम से उसकी जांच की जाती है, ऐसी जांच के **बहत्तर घंटे** के भीतर उसका हस्ताक्षर लिया जाएगा।

धारा 330 (1) [सीआरपीसी 294] - दस्तावेजों की स्वीकृति/अस्वीकृति किसी भी मामले में दस्तावेज की आपूर्ति के **तीस दिन** बाद नहीं होगी, लेकिन न्यायालय लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों के साथ समय सीमा में छूट दे सकता है:

धारा 356(1) - न्यायालय अनुपस्थिति में मुकदमा तब तक शुरू नहीं करेगा जब तक कि आरोप तय किए जाने की तारीख से **नब्बे दिन** की अवधि बीत न गई हो।

धारा 392(4) [सीआरपीसी 353] - न्यायालय, जहां तक संभव हो, निर्णय की तिथि से **सात दिनों** की अवधि के भीतर अपने पोर्टल पर निर्णय की प्रति अपलोड करेगा।

धारा 497 [सीआरपीसी 451] उप-धारा 497(2) के अनुसार, संपत्ति प्राप्त होने पर, न्यायालय को राज्य के नियमों द्वारा निर्धारित प्रारूप का उपयोग करके **चौदह दिनों** के भीतर इसका विवरण दर्ज करना होगा। उप-धारा 497(5) संपत्ति के निपटान, विनाश, जब्ती या वापसी पर **तीस दिनों** के भीतर निर्णय लेने का आदेश देती है, इसके बाद इसका दस्तावेजीकरण और दृश्य साक्ष्य लेना होता है।

बीएनएसएस में प्रौद्योगिकी के उपयोग के बारे में विशिष्ट प्रावधान।

हमारी न्याय वितरण प्रणाली को और अधिक कुशल और आधुनिक बनाने के लिए, संहिता ऑडियो-वीडियो इलेक्ट्रॉनिक साधनों या संबंधित प्रौद्योगिकी के सबसे प्रभावी उपयोग का प्रावधान करती है। ऐसी धाराओं का संक्षिप्त उल्लेख नीचे संदर्भ हेतु दिया गया है:

54 [सीआरपीसी 54 ए] गिरफ्तार व्यक्ति की पहचान

63(ii) [सीआरपीसी 61] सम्मन का प्रारूप- एन्क्रिप्टेड या इलेक्ट्रॉनिक संचार के किसी अन्य रूप में तथा उस पर न्यायालय की मुहर या डिजिटल हस्ताक्षर की छवि अंकित होगी।

64(2) [सीआरपीसी 60ए] सम्मन कैसे तामील किया जाता है।

70(3) [सीआरपीसी 68] ऐसे मामलों में तामील का प्रमाण तथा जब तामील करने वाला अधिकारी उपस्थित न हो।

71(1),(2) [सीआरपीसी 69] गवाह पर सम्मन की तामील

94(1) [सीआरपीसी 91] दस्तावेज या अन्य चीज पेश करने के लिए सम्मन

105 ऑडियो वीडियो इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से तलाशी और जब्ती की रिकॉर्डिंग।

154[सीआरपीसी 135] (बी) वह व्यक्ति जिसे आदेश का पालन करने या कारण बताने के लिए संबोधित किया गया है।

173[सीआरपीसी 154] संज्ञेय मामलों में सूचना।

176. (1)(बी) (3) [सीआरपीसी 157] जांच की प्रक्रिया।

183. (6) [सीआरपीसी 164] इकबालिया बयान और बयान दर्ज करना

185. (2) [सीआरपीसी 165] पुलिस अधिकारी द्वारा तलाशी।

187. (4)(बी) [सीआरपीसी 167] प्रक्रिया जब जांच चौबीस घंटे में पूरी नहीं हो सकती।

193. (3)(i),(h)(i),(8) [सीआरपीसी 173] जांच पूरी होने पर पुलिस अधिकारी की रिपोर्ट।

202 [सीआरपीसी 182] (1) इलेक्ट्रॉनिक संचार, पत्र आदि के माध्यम से किए गए अपराध।

209 [सीआरपीसी 189] भारत के बाहर किए गए अपराधों से संबंधित साक्ष्य की प्राप्ति।

210. (1)(ए)(बी) [सीआरपीसी 190] मजिस्ट्रेट द्वारा अपराधों का संज्ञान।

227 [सीआरपीसी 204] प्रक्रिया जारी करना

230 [सीआरपीसी 207] अभियुक्त को पुलिस रिपोर्ट और अन्य दस्तावेजों की प्रतियों की आपूर्ति

231[सीआरपीसी 208] सत्र न्यायालय द्वारा विचारणीय अन्य मामलों में अभियुक्त को बयानों और दस्तावेजों की प्रतियों की आपूर्ति

251 (1), (2) [सीआरपीसी 228] आरोप तय करना

254. (1), (2) [सीआरपीसी 231] अभियोजन पक्ष के लिए साक्ष्य।

262. (1), (2) [सीआरपीसी 239] अभियुक्त को कब मुक्त किया जाएगा।

265. (3) [सीआरपीसी 242] अभियोजन पक्ष के लिए साक्ष्य।

308 [सीआरपीसी 273] अभियुक्त की मौजूदगी में साक्ष्य लिया जाना।

316. (4) [सीआरपीसी 281] अभियुक्त की परीक्षा का रिकॉर्ड।

336 कुछ मामलों में लोक सेवकों, विशेषज्ञों, पुलिस अधिकारियों का साक्ष्य।

355 [सीआरपीसी 317] कुछ मामलों में अभियुक्त की अनुपस्थिति में पूछताछ और सुनवाई का प्रावधान

356. (5) घोषित अपराधी की अनुपस्थिति में पूछताछ, सुनवाई या निर्णय।

392 (5) [सीआरपीसी 353] निर्णय

412[सीआरपीसी 371] पुष्टि के लिए उच्च न्यायालय में प्रस्तुत मामलों में प्रक्रिया।

497. (1) (2)(3)(4)(5) [सीआरपीसी 451] कुछ मामलों में लंबित मुकदमे में संपत्ति की हिरासत और निपटान के लिए आदेश।

530 इलेक्ट्रॉनिक मोड में परीक्षण और कार्यवाही आयोजित की जाएगी।

बीएनएसएस में किए गए अन्य आवश्यक सुधार

बीएनएसएस [सीआरपीसी 9] की धारा 8 में उप-धारा 7 और 8 को नए सिरे से जोड़ा गया है। ये उप-धाराएं सत्र न्यायाधीश को अतिरिक्त सत्र न्यायाधीशों के बीच कामकाज बांटने और उनकी अनुपस्थिति में किसी भी जरूरी आवेदन के निपटारे के लिए अधिकार सौंपने के लिए अधिकृत करती हैं।

बीएनएसएस [सीआरपीसी 21] की धारा 15 में यह भी कहा गया है कि राज्य सरकार किसी भी पुलिस अधिकारी को नियुक्त कर सकती है जो पुलिस अधीक्षक या समकक्ष के पद से नीचे न हो और जिसे विशेष क्षेत्रों या विशेष कार्यों के निष्पादन के लिए **विशेष कार्यकारी मजिस्ट्रेट** के रूप में जाना जाता हो।

बीएनएसएस [सीआरपीसी 24] की धारा 18 में एक नया प्रावधान जोड़ा गया है, जिसमें कहा गया है: "बशर्ते कि राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली के लिए, केंद्र सरकार, दिल्ली उच्च न्यायालय के परामर्श के बाद, इस उप-धारा के प्रयोजनों के लिए लोक अभियोजक या अतिरिक्त लोक अभियोजकों की नियुक्ति करेगी"।

मामलों के अभियोजन की प्रभावी निगरानी के लिए **जिला स्तर तक अभियोजन निदेशालय** के गठन और कामकाज को सुव्यवस्थित करने के लिए बीएनएसएस [सीआरपीसी 25] की धारा 20 में उप-धारा 20(1)(बी), 20(2)(बी), 20(8), 20(9), 20(10), और 20(11) जोड़ी गई हैं।

धारा 23 [सीआरपीसी 29] मजिस्ट्रेटों के वर्गीकरण और सामुदायिक सेवा की सजा के नए प्रावधान के साथ-साथ जुर्माने की संबंधित राशि जैसे नए विकास के कारण सजा सुनाने के लिए **मजिस्ट्रेटों की शक्तियों** को फिर से परिभाषित करती है।

बीएनएस की धारा 25 [सीआरपीसी 31] एक ही मुकदमे में कई अपराधों के लिए दोषसिद्धि के मामलों में सजा: इस प्रावधान में इस प्रकार सुधार किया गया है कि न्यायालय अपराधों की गंभीरता को देखते हुए ऐसी सजाओं को एक साथ या लगातार चलाने का आदेश देगा।

25(2)(ए): ऐसे मामलों में किसी व्यक्ति को भुगतने वाली अधिकतम कारावास की अवधि चौदह वर्ष से बढ़ाकर **बीस वर्ष** कर दी गई है।

बीएनएस की धारा 35 [सीआरपीसी 41-41ए] जब पुलिस बिना वारंट के गिरफ्तार कर सकती है –

बीएनएस की धारा 35 की उप-धारा 1 से 6 सीआरपीसी की दो धाराओं अर्थात् 41 और 41 ए की प्रतिकृतियां हैं। दूसरी अनुसूची में एक नया फॉर्म जोड़ा गया है, जिसका नाम **फॉर्म नंबर 1** है, जिसका शीर्षक है **पुलिस द्वारा उपस्थिति के लिए नोटिस।** लेकिन उक्त फॉर्म नंबर 1, 35(3) के अंतिम खंड अर्थात् 'या ऐसे अन्य स्थान पर जो नोटिस में निर्दिष्ट किया जा सकता है' को प्रभावी रूप से कवर नहीं करता है, क्योंकि उक्त फॉर्म इस आशय के लिए रचनात्मक रूप से उपयोग करने के लिए बहुत कठोर प्रतीत होता है। इन प्रावधानों के कार्यान्वयन में सुधार के लिए उप-धारा 190(1) के प्रावधान पर भी विचार किया जा सकता है।

नई जोड़ी गई उप-धारा 35(7) "तीन वर्ष से कम कारावास के लिए दंडनीय किसी अपराध के मामले में पुलिस उपाधीक्षक या उसके उपर के पद के अधिकारी की पूर्व अनुमति के बिना कोई गिरफ्तारी नहीं की जाएगी और ऐसा व्यक्ति **अशक्त है या साठ वर्ष से अधिक आयु** का है।"

बीएनएसएस की धारा 37 [सीआरपीसी 41सी] में पिछली उप-धारा (2) और (3) को अब उप-धारा (बी) से प्रतिस्थापित किया गया है, जिसमें कहा गया है कि "राज्य सरकार प्रत्येक जिले और प्रत्येक पुलिस थाने में एक पुलिस अधिकारी को नामित करेगी, जो सहायक पुलिस उपनिरीक्षक के पद से नीचे का न हो, जो गिरफ्तार किए गए व्यक्तियों के नाम और पते, आरोपित अपराध की प्रकृति के बारे में जानकारी रखने के लिए जिम्मेदार होगा, जिसे प्रत्येक पुलिस थाने और जिला मुख्यालय में डिजिटल मोड सहित किसी भी तरीके से प्रमुखता से प्रदर्शित किया जाएगा।"

इसी तरह, बीएनएसएस की धारा 82 [सीआरपीसी 80] में उप-धारा (2) जोड़ी गई है, जिसमें यह अनिवार्य किया गया है कि पुलिस अधिकारी ऐसी गिरफ्तारी और गिरफ्तार व्यक्ति को

जिस स्थान पर रखा जा रहा है, उसके बारे में जानकारी जिले के नामित पुलिस अधिकारी और दूसरे जिले के ऐसे अधिकारी को देगा, जहां गिरफ्तार व्यक्ति सामान्य रूप से रहता है।

नई जोड़ी गई बीएनएसएस की उप-धारा 43 (3) [46 सीआरपीसी] में यह प्रावधान है कि "पुलिस अधिकारी अपराध की प्रकृति और गंभीरता को ध्यान में रखते हुए, किसी व्यक्ति की गिरफ्तारी करते समय या ऐसे व्यक्ति को अदालत में पेश करते समय हथकड़ी का उपयोग कर सकता है जो आदतन या बार-बार अपराधी है, या जो हिरासत से भाग गया है, या जिसने संगठित अपराध, आतंकवादी कृत्य, नशीली दवाओं से संबंधित अपराध, या हथियारों और गोला-बारूद के अवैध कब्जे, हत्या, बलात्कार, एसिड अटैक, सिक्कों और करेंसी-नोटों की जालसाजी, मानव तस्करी, बच्चों के खिलाफ यौन अपराध, या राज्य के खिलाफ अपराध किया है।[24]

धारा 53. [सीआरपीसी 54] - इस धारा में एक प्रावधान जोड़ा गया है, जिसमें कहा गया है, "बशर्ते कि यदि चिकित्सा अधिकारी या पंजीकृत चिकित्सा अधिकारी की राय है कि ऐसे व्यक्ति की एक और परीक्षा आवश्यक है, तो वह ऐसा कर सकता है:"

बीएनएसएस की धारा 63-65 [61-63 सीआरपीसी], जो **सम्मन जारी करने** और उसकी तामील से संबंधित है, में सुधार किया गया है ताकि इलेक्ट्रॉनिक संचार प्रौद्योगिकी का उपयोग आपराधिक न्याय वितरण प्रणाली में सर्वोत्तम संभव तरीके से किया जा सके। सम्मन की तामील से संबंधित बीएनएसएस की धारा 70, 71 [सीआरपीसी 68, 69] में भी तदनुसार संशोधन किया गया है।

घोषित अपराधी बीएनएसएस की धारा 84(4) [82 सीआरपीसी]: किसी अभियुक्त को घोषित अपराधी घोषित करने का दायरा बहुत अधिक विस्तारित किया गया है। इससे पहले यह प्रावधान भारतीय दंड संहिता की धारा 302, 304, 364, 367, 382, 392 से लेकर 400, 402, 436, 449, 459 या 460 के तहत दंडनीय अपराधों के लिए था, जिसे अब दस वर्ष या उससे अधिक कारावास, आजीवन कारावास, बीएनएस के तहत मृत्युदंड या उस समय लागू किसी अन्य कानून के तहत दंडनीय सभी अपराधों के लिए विस्तारित किया गया है।

बीएनएसएस की धारा 175 [सीआरपीसी 156] को काफी हद तक संशोधित किया गया है, विशेष रूप से उप-धारा (3) और नई जोड़ी गई उप-धारा (4) को जोड़ा गया है। यह बेईमान वादियों द्वारा कानून की प्रक्रिया के दुरुपयोग को कम करने के लिए है, जिससे सर्वोच्च न्यायालय द्वारा *प्रियंका श्रीवास्तव और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य* में रेखांकित मुद्दों को भी संबोधित किया जा सके, ताकि ऐसे दुरुपयोग के खिलाफ सद्भावनापूर्वक अपने कर्तव्य का निर्वहन करने वाले लोक सेवकों की रक्षा की जा सके। उप-धारा (3) धारा 210 [190] के तहत सशक्त मजिस्ट्रेट को धारा 173 की उप-धारा (4) के तहत हलफनामे द्वारा समर्थित आवेदन की समीक्षा करने और पुलिस पूछताछ और प्रस्तुतियों पर विचार करने के बाद जांच का आदेश देने की अनुमति देती है। उप-धारा (4) ऐसे मजिस्ट्रेट को किसी लोक सेवक के विरुद्ध उसके आधिकारिक कर्तव्यों से संबंधित शिकायतों की जांच का आदेश देने में सक्षम बनाती है, बशर्ते कि लोक सेवक के वरिष्ठ अधिकारी से घटना का विवरण देने वाली रिपोर्ट प्राप्त हो और लोक सेवक के कथनों पर विचार किया जाए।

बीएनएसएस की धारा 176 [सीआरपीसी 157] जांच की प्रक्रिया से संबंधित है, जिसमें निम्नलिखित महत्वपूर्ण संशोधन किए गए हैं- **बलात्कार की पीड़िता** का बयान मोबाइल फोन सहित किसी भी ऑडियो-वीडियो इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से भी दर्ज किया जा सकता है। यदि प्रभारी अधिकारी घटनास्थल पर नहीं जाता है या किसी अधीनस्थ को जांच करने के लिए प्रतिनियुक्त करता है [176 (1) (क)] या मामले की जांच नहीं करने का फैसला करता है [176 (1) (ख)], तो वह मजिस्ट्रेट को दैनिक डायरी रिपोर्ट पाक्षिक रूप से अग्रेषित करेगा।

[24] सुनील बत्रा बनाम दिल्ली प्रशासन 1980 एआईआर 1579, प्रेम शंकर शुक्ला बनाम दिल्ली प्रशासन 1980 एआईआर 1535, सुनील गुप्ता बनाम मध्य प्रदेश राज्य एआईआर 1990 एससी 268, उसके बाद सिटीजन्स फॉर डेमोक्रेसी बनाम असम राज्य एआईआर 1996 एससी 2193 आदि मामले इस नए अधिनियमित प्रावधान के साथ असंगत होने पर निरस्त हो जाते हैं।

नई जोड़ी गई उप-धारा 176(3) में कहा गया है कि किसी ऐसे अपराध के होने से संबंधित प्रत्येक सूचना प्राप्त होने पर, जिसे सात वर्ष या उससे अधिक की सजा दी जा सकती है, पुलिस थाने का प्रभारी अधिकारी, उस तारीख से, जिसे राज्य सरकार द्वारा इस संबंध में पांच वर्ष की अवधि के भीतर अधिसूचित किया जा सकता है, अपराध में फोरेंसिक साक्ष्य एकत्र करने के लिए फोरेंसिक विशेषज्ञ को अपराध स्थल का दौरा कराएगा और मोबाइल फोन या किसी अन्य इलेक्ट्रॉनिक उपकरण पर प्रक्रिया की वीडियोग्राफी भी कराएगा, जहां किसी ऐसे अपराध के संबंध में फोरेंसिक सुविधा उपलब्ध नहीं है, राज्य सरकार, जब तक कि उस मामले के संबंध में सुविधा राज्य में विकसित या बनाई नहीं जाती है, किसी अन्य राज्य की ऐसी सुविधा के उपयोग को अधिसूचित करेगी।"

बीएनएसएस की धारा 179 [सीआरपीसी 160] गवाह की उपस्थिति की मांग - उनके निवास स्थान पर जांच किए जाने वाले व्यक्तियों की श्रेणी में, एक पुरुष व्यक्ति की आयु 65 वर्ष से घटाकर 60 वर्ष कर दी गई है, और गंभीर बीमारी वाले व्यक्ति की एक नई श्रेणी जोड़ी गई है। उप-धारा (1) में जोड़ा गया एक नया प्रावधान यह प्रावधान करता है कि यदि ऐसा व्यक्ति पुलिस स्टेशन में उपस्थित होने के लिए इच्छुक है, तो ऐसे व्यक्ति को ऐसा करने की अनुमति दी जा सकती है। यदि कोई लोक सेवक जानबूझकर इस प्रावधान की अवहेलना करता है, तो उसके खिलाफ बीएनएस की धारा 199 (ए) के तहत एफआईआर दर्ज की जा सकती है।

बीएनएसएस की धारा 183 [सीआरपीसी 164] स्वीकारोक्ति या बयानों की रिकॉर्डिंग, अन्य बातों के साथ-साथ, उप-धारा (6) में दो महत्वपूर्ण प्रावधान जोड़े गए हैं "बशर्ते कि ऐसा बयान, जहां तक संभव हो, एक महिला मजिस्ट्रेट द्वारा और उसकी अनुपस्थिति में एक पुरुष मजिस्ट्रेट द्वारा एक महिला की उपस्थिति में दर्ज किया जाएगा: इसके अलावा, दस साल या उससे अधिक कारावास या आजीवन कारावास या मृत्यु के साथ दंडनीय अपराधों से संबंधित मामलों में, मजिस्ट्रेट पुलिस अधिकारी द्वारा उसके सामने लाए गए गवाह का बयान दर्ज करेगा:"

बीएनएसएस की धारा 187 [सीआरपीसी 167] अन्य बातों के साथ-साथ, उप-धारा (2) में एक महत्वपूर्ण संशोधन यह प्रदान करता है कि मजिस्ट्रेट, इस बात पर ध्यान दिए बिना कि उसके पास मामले की सुनवाई करने का अधिकार क्षेत्र है या नहीं, इस बात पर विचार करने के बाद कि क्या ऐसे व्यक्ति को जमानत पर रिहा नहीं किया गया है या उसकी जमानत रद्द कर दी गई है, समय-समय पर, अभियुक्त को ऐसी हिरासत में रखने के लिए अधिकृत कर सकता है, जैसा कि मजिस्ट्रेट ठीक समझे, प्रारंभिक चालीस दिन या साठ दिन की हिरासत अवधि में से किसी भी समय, उप-धारा (3) के अनुसार, पूरे या भागों में **पंद्रह दिनों** से अधिक अवधि के लिए।

बीएनएसएस की धारा 190 [सीआरपीसी 170] की उप-धारा (1) में एक बहुत ही महत्वपूर्ण प्रावधान जोड़ा गया है, जिसमें कहा गया है कि यदि अभियुक्त हिरासत में नहीं है, तो पुलिस अधिकारी को मजिस्ट्रेट के समक्ष उसकी उपस्थिति के लिए व्यक्ति से बांड प्राप्त करना होगा और जिस मजिस्ट्रेट को ऐसी रिपोर्ट भेजी जाती है, वह इस आधार पर इसे स्वीकार करने से इनकार नहीं करेगा कि अभियुक्त को हिरासत में नहीं लिया गया है।" यह *सिद्धार्थ बनाम उत्तर प्रदेश राज्य* में सर्वोच्च न्यायालय के फैसले और उसके बाद *सतेंद्र कुमार अंतिल बनाम केंद्रीय जांच ब्यूरो* के फैसले से प्रेरित प्रतीत होता है।

बीएनएसएस की धारा 193 [सीआरपीसी 173] जांच पूरी होने पर पुलिस रिपोर्ट - (3)(i)(i) के अनुसार, इलेक्ट्रॉनिक डिवाइस के मामले में हिरासत का क्रम भी पुलिस रिपोर्ट में शामिल किया जाना है। (3)(ii) के अनुसार, पुलिस अधिकारी नब्बे दिनों की अवधि के भीतर मुखबिर या पीड़ित को इलेक्ट्रॉनिक संचार सहित किसी भी माध्यम से जांच की प्रगति की सूचना देगा। नई जोड़ी गई उप-धारा (8) के अनुसार जांच अधिकारी धारा 230 [सीआरपीसी 207] के तहत अभियुक्त को आपूर्ति के लिए मजिस्ट्रेट को अन्य दस्तावेजों के साथ पुलिस रिपोर्ट की उतनी आवश्यक प्रतियां प्रस्तुत करेगा तथा इलेक्ट्रॉनिक संचार द्वारा रिपोर्ट और अन्य दस्तावेजों की आपूर्ति को विधिवत तामील माना जाएगा। उप-धारा 193(9) [सीआरपीसी 173(8)] में एक प्रावधान जोड़ा गया है, मुकदमे के दौरान आगे की जांच मामले की सुनवाई करने वाले न्यायालय की अनुमति से की जा सके और इसे नब्बे दिनों की अवधि के भीतर पूरा किया जाएगा जिसे न्यायालय की अनुमति से बढ़ाया जा सकता है।"

बीएनएसएस की धारा 208, 209 [सीआरपीसी 188, 189] भारत के बाहर किए गए अपराध: अब ऐसे अपराधों को भारत के भीतर किसी भी स्थान पर निपटाया जा सकता है, जहां अपराध पंजीकृत है, उस स्थान के अलावा जहां ऐसा व्यक्ति पाया जा सकता है। धारा 209 के तहत, केंद्र सरकार निर्देश दे

सकती है कि साक्ष्य को भौतिक रूप में या इलेक्ट्रॉनिक रूप में प्रस्तुत किया जाए।

बीएनएसएस की धारा 218 [सीआरपीसी 197] अभियोजन स्वीकृति के लिए प्रावधान: नए जोड़े गए प्रावधान में यह प्रावधान है कि अभियोजन स्वीकृति के अनुरोध पर निर्णय ऐसी सरकार द्वारा ऐसे अनुरोध की प्राप्ति की तारीख से एक सौ बीस दिनों के भीतर लिया जाएगा, और यदि वह ऐसा करने में विफल रहती है, तो ऐसी सरकार द्वारा स्वीकृति प्रदान की गई मानी जाएगी।

बीएनएसएस की धारा 223 [सीआरपीसी 200] मजिस्ट्रेट को शिकायत और शिकायतकर्ता की जांच।

(1) उप-धारा (1) में एक नया प्रावधान जोड़ा गया है, "मजिस्ट्रेट द्वारा अभियुक्त को सुनवाई का अवसर दिए बिना किसी अपराध का संज्ञान नहीं लिया जाएगा"

नए जोड़े गए उप-धारा (2) "मजिस्ट्रेट किसी लोक सेवक के खिलाफ किसी भी अपराध के लिए शिकायत पर संज्ञान नहीं लेगा, जो उसके आधिकारिक कार्यों या कर्तव्यों के निर्वहन के दौरान किए गए कथित अपराध के लिए है, जब तक कि- (ए) ऐसे लोक सेवक को उस स्थिति के बारे में दावा करने का अवसर नहीं दिया जाता है जिसके कारण ऐसी कथित घटना हुई; और (बी) ऐसे लोक सेवक से वरिष्ठ अधिकारी से घटना के तथ्यों और परिस्थितियों को शामिल करने वाली रिपोर्ट प्राप्त नहीं होती है।"

बीएनएसएस की धारा 274 [सीआरपीसी 251] मजिस्ट्रेट द्वारा विचारणीय सम्मन-परीक्षण में अभियुक्त की रिहाई, मजिस्ट्रेट को लिखित में कारण दर्ज करने के बाद आरोपों को निराधार मानने पर अभियुक्त को (उसके समक्ष पेश किए जाने पर) रिहा करने के लिए सशक्त बनाने हेतु एक नया प्रावधान जोड़ा गया है, और ऐसी रिहाई का प्रभाव निर्वहन के समान होगा।

धारा 283 [सीआरपीसी 260] संक्षिप्त रूप से विचारण करने की शक्ति - चोरी की संपत्ति की मौजूदा सीमा को दो हजार रुपये से बढ़ाकर बीस हजार रुपये कर दिया गया है। संक्षिप्त रूप से विचारण करने की शक्ति को बढ़ाने के लिए उप-धारा (2) को हाल ही में जोड़ा गया है। "मजिस्ट्रेट, अभियुक्त को सुनवाई का उचित अवसर देने के बाद, लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों से, मृत्यु या आजीवन कारावास या तीन वर्ष से अधिक अवधि के कारावास से दंडनीय नहीं होने वाले सभी या किसी भी अपराध का संक्षिप्त रूप से विचारण कर सकता है: बशर्ते कि इस उप-धारा के तहत मामले का संक्षिप्त रूप से विचारण करने के मजिस्ट्रेट के निर्णय के खिलाफ कोई अपील नहीं होगी।"

बीएनएसएस की धारा 293 [265ई सीआरपीसी] उप-धारा (सी) और (डी) को संशोधित करके दलील सौदेबाजी पर **पहली बार अपराधियों** के लिए सजा को कम कठोर बना दिया गया है। (सी) यदि अभियुक्त बिना किसी पूर्व दोषसिद्धि के पहली बार अपराधी है, तो न्यायालय अभियुक्त को अपराध के लिए प्रदान की गई न्यूनतम सजा के एक-चौथाई की सजा दे सकता है। (डी) खंड (बी) या खंड (सी) के अंतर्गत नहीं आने वाले मामलों में, यदि अभियुक्त बिना किसी पूर्व दोषसिद्धि के पहली बार अपराधी है, तो न्यायालय अभियुक्त को उक्त अपराध के लिए प्रदान की गई या बढ़ाई जा सकने वाली सजा के एक-छठे हिस्से की सजा दे सकता है।

बीएनएसएस की धारा 346 [सीआरपीसी 309] स्थगन की संख्या पर सीमा निर्धारित की गई है, जिसमें नया खंड 2(बी) जोड़ा गया है, "जहां परिस्थितियां किसी पक्ष के नियंत्रण से परे हैं, वहां दूसरे पक्ष की आपत्तियों को सुनने के बाद और लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों के लिए न्यायालय द्वारा दो से अधिक स्थगन नहीं दिए जा सकते हैं।"

बीएनएसएस की धारा 349 [सीआरपीसी 311ए] नमूना हस्ताक्षर आदि देने का आदेश देने की मजिस्ट्रेट की शक्ति- मौजूदा प्रावधानों में उंगलियों के निशान और आवाज के नमूने जोड़े गए हैं। एक नया प्रावधान भी जोड़ा गया है "इसके अलावा यह भी प्रावधान है कि मजिस्ट्रेट लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों से किसी भी व्यक्ति को गिरफ्तार किए बिना ऐसा नमूना या नमूना देने का आदेश दे सकता है।

बीएनएसएस की धारा 360 [सीआरपीसी 321] **अभियोजन से वापसी** - दिल्ली विशेष स्थापना अधिनियम 1946 (1946 का 25) के तहत दिल्ली विशेष पुलिस स्थापना को किसी भी केंद्रीय अधिनियम के तहत प्रतिस्थापित करके खंड (बी) के प्रावधान (II) के दायरे का विस्तार किया गया है। एक नया प्रावधान भी जोड़ा गया है "इसके अलावा कोई भी अदालत मामले में पीड़ित को सुनवाई का अवसर दिए बिना ऐसी वापसी की अनुमति नहीं देगी।"

धारा 474 उपयुक्त सरकार, सजायाफ्ता व्यक्ति की सहमति के बिना: मृत्युदंड को आजीवन कारावास में बदल सकती है; आजीवन कारावास की अवधि कम से कम सात वर्ष; सात वर्ष या उससे अधिक की कैद की अवधि कम से कम तीन वर्ष; सात वर्ष से कम की कैद की अवधि जुर्माने में; और कठोर कारावास की अवधि को किसी भी लागू अवधि के साधारण कारावास में बदल सकती है।

बीएनएसएस की धारा 479 [सीआरपीसी 436ए] विचाराधीन कैदियों के लिए अधिकतम हिरासत अवधि - इस धारा के संबंध में सुधार एक परंतुक और दो उप-धाराओं को जोड़कर किए गए हैं ताकि यह प्रावधान किया जा सके कि: बिना किसी पूर्व दोषसिद्धि के पहली बार अपराध करने वाले व्यक्तियों को न्यायालय द्वारा बांड पर रिहा किया जाएगा यदि उन्होंने अपराध के लिए निर्दिष्ट अधिकतम कारावास अवधि के एक तिहाई तक हिरासत में रखा है। यदि किसी व्यक्ति के खिलाफ कई जांच, पूछताछ या परीक्षण लंबित हैं, तो उन्हें जमानत पर रिहा नहीं किया जाएगा। जेल अधीक्षक को उप-धारा (1) में निर्दिष्ट हिरासत अवधि का आधा या एक तिहाई पूरा करने पर व्यक्ति की जमानत पर रिहाई के लिए न्यायालय में आवेदन करना चाहिए।

बीएनएसएस की धारा 497 [सीआरपीसी 451]: बीएनएसएस ने कुछ मामलों में लंबित मुकदमे में संपत्ति की हिरासत और निपटान के आदेश के बारे में प्रक्रिया को कारगर बनाने के लिए चार उप-धाराएँ जोड़ी हैं।

बीएनएसएस की धारा 514 [सीआरपीसी 468]: स्पष्टीकरण जोड़ा गया है ताकि यह स्पष्ट किया जा सके कि सीमा अवधि की गणना करने के उद्देश्य से, प्रासंगिक तिथि धारा 223 [सीआरपीसी 200] के तहत शिकायत दर्ज करने की तिथि या धारा 173 [सीआरपीसी 154] के तहत सूचना दर्ज करने की तिथि होगी।

बीएनएसएस की धारा 531 [सीआरपीसी 484] निरसन और व्यावृत्ति - यह धारा, मूलतः 484 सीआरपीसी का प्रतिकृति है।

बीएनएसएस में हटाई गईं सीआरपीसी की धाराएँ

सीआरपीसी की धारा 2(एफ), 2(के), 2(क्यू), 2(टी) के तहत दी गई भारत, महानगरीय क्षेत्र, प्लीडर और निर्धारित की परिभाषाओं को हटाया गया है। इसी तरह, आपराधिक न्यायालयों के समाप्त वर्गों और अधिकार क्षेत्रों से संबंधित सीआरपीसी की धारा 8, 10, 16, 17, 18 और 19 को हटाया गया है। सीआरपीसी की धारा 355 और 404 को भी हटाया गया है क्योंकि वे महानगरीय मजिस्ट्रेट वर्ग से संबंधित हैं जिसे समाप्त कर दिया गया है।

किशोरों के मामले में अधिकार क्षेत्र से संबंधित सीआरपीसी की धारा 27 को हटाया गया है क्योंकि किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2015 इस विषय और अधिकार क्षेत्र को पूरी तरह से कवर करता है।

सीआरपीसी की धारा 144 ए को भी हटाया गया है।[25]

वजन और माप के निरीक्षण का प्रावधान करने वाली सीआरपीसी की धारा 153 को अलग विशेष अधिनियम के रूप में हटाया गया है, विधिक माप विज्ञान अधिनियम, 2009 इस विषय को व्यापक रूप से कवर करता है।

बीएसए में शामिल किए गए मुख्य सुधारों का सार

बीएसए में परिभाषा संबंधी सुधार

धारा 2(1)(डी) [आईईए 3 पैरा 5]: '**दस्तावेज**' की परिभाषा का विस्तार करके इसमें ईमेल, सर्वर लॉग, कंप्यूटर, लैपटॉप या स्मार्टफोन पर दस्तावेज, संदेश, वेबसाइट, क्लाउड, स्थान संबंधी साक्ष्य और डिजिटल उपकरणों पर संग्रहीत वॉयस मेल संदेश सहित इलेक्ट्रॉनिक या डिजिटल रिकॉर्ड को शामिल किया गया है।

धारा 2(1)(ई) खंड (आई) [आईईए 3 पैरा 6]: '**मौखिक साक्ष्य**' की परिभाषा का विस्तार करके इसमें इलेक्ट्रॉनिक रूप से

[25] उपर्युक्त नोट#15 का संदर्भ लें

दिया गया कोई भी बयान शामिल किया गया है। इससे गवाहों, अभियुक्तों और विशेषज्ञों आदि को इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से अपने साक्ष्य पेश करने की अनुमति मिल जाएगी। खंड (ii) में **'दस्तावेजी साक्ष्य'** को परिभाषित करने के लिए "या डिजिटल" शब्दों को भी जोड़ा गया है।

उप-धारा 2(2) को नया जोड़ा गया है जिसमें कहा गया है कि, "इसमें प्रयुक्त और परिभाषित नहीं किए गए लेकिन सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 (2000 का 21), भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता और भारतीय न्याय संहिता में परिभाषित शब्दों और अभिव्यक्तियों का वही अर्थ होगा जो उन्हें उक्त अधिनियम और संहिताओं में दिया गया है।"

बीएसए में जोड़ी गईं नई धाराएं

नई जोड़ी गई बीएसए की धारा 61 में कहा गया है कि "इस अधिनियम में ऐसा कुछ भी लागू नहीं होगा जो साक्ष्य में किसी इलेक्ट्रॉनिक या डिजिटल रिकॉर्ड की स्वीकार्यता को इस आधार पर अस्वीकार करे कि यह एक इलेक्ट्रॉनिक या डिजिटल रिकॉर्ड है और ऐसा रिकॉर्ड, धारा 63 के अधीन, अन्य दस्तावेज़ के समान ही कानूनी प्रभाव, वैधता और प्रवर्तनीयता रखेगा।"

बीएसए में अन्य महत्वपूर्ण सुधार

धारा 24 [आईईए 30]: एक नई व्याख्या II जोड़ी गई है, जिसमें उल्लेख किया गया है कि "आरोपी की अनुपस्थिति में एक से अधिक व्यक्तियों का परीक्षण, जो फरार हो गया है या जो भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 की धारा 84 के तहत जारी की गई घोषणा का पालन करने में विफल रहता है, इस धारा के प्रयोजन के लिए एक संयुक्त परीक्षण माना जाएगा।" यह परिवर्धन नई जोड़ी बीएनएसएस की धारा 356 (अनुपस्थिति में परीक्षण) को बढ़ाता है।

धारा 31[आईईए 37] औपनिवेशिक अवशेषों को हटा दिया गया है क्योंकि "संसद के किसी अधिनियम (यूनाइटेड किंगडम के) या किसी केंद्रीय अधिनियम, प्रांतीय अधिनियम या राज्य अधिनियम या सरकारी अधिसूचना या क्राउन प्रतिनिधि द्वारा आधिकारिक राजपत्र में या किसी मुद्रित पत्र में दिखाई देने वाली अधिसूचना जो लंदन राजपत्र या किसी डोमिनियन, कॉलोनी या महामहिम के कब्जे के सरकारी राजपत्र होने का दावा करती है, एक प्रासंगिक तथ्य है।" को "किसी भी केंद्रीय अधिनियम या राज्य अधिनियम या केंद्र सरकार या राज्य सरकार की अधिसूचना में संबंधित आधिकारिक राजपत्र में या किसी मुद्रित पत्र में या इलेक्ट्रॉनिक या डिजिटल रूप में ऐसा राजपत्र होने का दावा करते हुए, एक प्रासंगिक तथ्य है" द्वारा प्रतिस्थापित किया गया है।

धारा 39 [आईईए 45 और 45 ए]: 'विशेषज्ञ' वाक्यांश का दायरा 'किसी अन्य क्षेत्र' में विशेष रूप से कुशल व्यक्तियों को शामिल करने के लिए विस्तारित किया गया है।

बीएसए [आईईए 57] की धारा 52 उन तथ्यों से संबंधित है जिनका न्यायालय न्यायिक संज्ञान लेगा। इस धारा के अंतर्गत, उप-धारा (ए) को "अतिरिक्त-क्षेत्रीय संचालन वाले कानूनों सहित" शब्दों को जोड़कर विस्तारित किया गया है, और साथ ही उप-धारा (बी), (डी), और (ई) को दायरे को और विस्तारित करने के लिए जोड़ा गया है। ये संशोधन अदालतों को अतिरिक्त-क्षेत्रीय संचालन वाले कानूनों, भारत द्वारा देशों के साथ अंतरराष्ट्रीय संधियों, समझौतों या सम्मेलनों, या अंतरराष्ट्रीय संघों या अन्य निकायों में किए गए निर्णयों; राज्य विधानसभाओं की कार्यवाहियों; सभी न्यायालयों और न्यायाधिकरणों की मुहरों आदि का न्यायिक संज्ञान लेने में सक्षम बनाते हैं।

धारा 57 [आईईए 62] प्राथमिक साक्ष्य का विस्तार चार नए स्पष्टीकरण जोड़कर किया गया है। स्पष्टीकरण 4 में कहा गया है कि एक साथ या क्रमिक रूप से कई फाइलों में बनाए गए या संग्रहीत इलेक्ट्रॉनिक या डिजिटल रिकॉर्ड प्राथमिक साक्ष्य माने जाते हैं। स्पष्टीकरण 7 निर्दिष्ट करता है कि कंप्यूटर संसाधन के भीतर एकाधिक स्थानों पर संग्रहीत इलेक्ट्रॉनिक या डिजिटल रिकॉर्ड, जिसमें अस्थायी फाइलें भी शामिल हैं, सभी प्राथमिक साक्ष्य हैं।

धारा 58 [आईईए 63] में तीन नए प्रावधानों के साथ द्वितीयक साक्ष्य का दायरा बढ़ाया गया है, जो इस प्रकार हैं: (vi) मौखिक स्वीकारोक्ति, (vii) लिखित स्वीकारोक्ति, और (viii) एक कुशल व्यक्ति से साक्ष्य जिसने कई खातों या अन्य दस्तावेजों से युक्त एक दस्तावेज की जांच की है, जिसकी अदालत में आसानी से जांच नहीं की जा सकती है।

अब, साक्ष्य के प्रमाण के रूप में मूल रिकॉर्ड के मिलान वाली hash value को देना द्वितीयक साक्ष्य के रूप में स्वीकार्य होगा। किसी विशिष्ट फ़ाइल की सत्यनिष्ठा को महत्व दिया जाता है, न कि संपूर्ण भंडारण माध्यम को।

इलेक्ट्रॉनिक अभिलेखों की स्वीकार्यता से संबंधित बीएसए [आईईए 65बी] की धारा 63 में, उप-धारा (1) में "या अर्धचालक मेमोरी" "या कोई संचार उपकरण या अन्यथा किसी भी इलेक्ट्रॉनिक रूप में संग्रहीत, रिकॉर्ड किया गया या कॉपी किया गया" शब्द जोड़े गए हैं। उप-धारा (2) के प्रत्येक खंड और अन्य उप-धाराओं में भी "संचार उपकरण" शब्द जोड़े गए हैं। इस धारा को कई अन्य स्थानों पर अधिक समकालीन वाक्यांशविज्ञान आदि के उपयोग द्वारा संशोधित किया गया है। अधिनियम की धारा 63(4)(सी) के संदर्भ में एक नई अनुसूची जोड़ी गई है। इसमें आवश्यक प्रमाणपत्रों के लिए प्रारूप दिए गए हैं। भाग ए को पक्षकार द्वारा और भाग बी को विशेषज्ञ द्वारा भरा जाना आवश्यक है।

धारा 80 और 81 [आईईए 81 और 81ए] में, स्पष्टीकरण जोड़े गए हैं जो दस्तावेजों की उचित अभिरक्षा की व्याख्या करते हैं।

धारा 165 [आईईए 162]: एक प्रावधान "कोई भी न्यायालय मंत्रियों और भारत के राष्ट्रपति के बीच किसी भी संचार को उसके समक्ष प्रस्तुत करने की आवश्यकता नहीं रखेगा।" इस नए जोड़े गए प्रावधान के प्रभाव से, मंत्रियों और भारत के राष्ट्रपति के बीच किसी भी संचार को किसी भी अदालत के समक्ष प्रस्तुत करने पर सख्ती से रोक लगाई जाएगी, जो कई न्यायविदों को काफी दिलचस्प घटनाक्रम लग सकता है।

बीएसए में हटाई गईं भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धाराएं

धारा 3, पैरा 10 भारत की परिभाषा; मौखिक प्रवेश में इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड की प्रासंगिकता से संबंधित धारा 22ए; मुहर या हस्ताक्षर के सबूत के बिना इंग्लैंड में स्वीकार्य दस्तावेज़ के रूप में अनुमान निर्धारित करने वाली धारा 82; टेलीग्राफिक संदेशों के बारे में अनुमान प्रदान करने वाली धारा 88; क्षेत्र के अधिग्रहण के सबूत से संबंधित धारा 113, और जूरी या मूल्यांकनकर्ताओं की शक्ति निर्धारित करने वाली धारा 166 को हटाया गया है।

संदर्भ

1. बीएनएस, बीएनएसएस और बीएसए जैसा कि 25 दिसंबर, 2023 को भारत के राजपत्र में अधिसूचित और प्रकाशित किया गया।

2. भारतीय दंड संहिता, 1860, (1860 का 45)।

3. दंड प्रक्रिया संहिता, 1973, (1974 का 2)।

4. भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872, (1872 का 1)।

5. विधिक माप विज्ञान अधिनियम, 2009, (2010 का 1)।

6. मानसिक स्वास्थ्य देखभाल अधिनियम, 2017 (2017 का 10)।

7. यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण अधिनियम, 2012 (2012 का 32)

8. गृह मामलों पर विभाग-संबंधित संसदीय स्थायी समिति की 246वीं रिपोर्ट

9. किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2015 (2016 का 2)

10. दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 (1898 का 5) बांग्लादेश

11. दंड प्रक्रिया संहिता (झारखंड संशोधन) अधिनियम, 2020 (झारखंड अधिनियम- 06, 2022)

12. 20 दिसंबर, 2023 को लोकसभा में माननीय केंद्रीय गृह मंत्री का भाषण, https://www.youtube.com/watch?v=6lhME2LiXos

भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 – एक परिचय

श्री डी.सी. जैन, भा.पु.से. (से.नि.)*

सार

इस लेख का उद्देश्य नव अधिनियमित भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 में किए गए परिवर्तनों का सार प्रस्तुत करना है। इस प्रमुख प्रक्रियात्मक कानून में दूरगामी परिवर्तन किए गए हैं जो आपराधिक न्याय प्रणाली के सभी स्तंभों - पुलिस, अभियोजन, न्यायपालिका और जेलों के कामकाज को काफी हद तक प्रभावित करेंगे। नए कानून का व्यापक उद्देश्य एक कानूनी ढांचा प्रदान करना है, जहां सभी स्तंभ अपने-अपने कर्तव्यों का अधिक परिश्रम और कुशलता से निर्वहन कर सकें, ताकि सभी को न्याय प्रदान करके समाज में शांति और सुरक्षा सुनिश्चित हो सके।

मुख्य शब्द : गिरफ्तारी, कुर्की, ऑडियो-वीडियो इलेक्ट्रॉनिक साधन, आरोप पत्र, न्यायालय, इलेक्ट्रॉनिक संचार, पूछताछ, हथकड़ी, जांच, अन्वेषण, मजिस्ट्रेट, पुलिस, उद्घोषित अपराधी, अभियोजन, जेल, रिमांड, तलाशी, जब्ती, परीक्षण और पीड़ित।

परिचय

भारत की संसद ने पिछले वर्ष दिसंबर माह में तीन पुराने प्रमुख आपराधिक कानूनों अर्थात भारतीय दंड संहिता, 1860 (भारतीय न्याय संहिता, 2023 द्वारा प्रतिस्थापित), दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 द्वारा प्रतिस्थापित) और भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 द्वारा प्रतिस्थापित) को प्रतिस्थापित करके एक इतिहास रचा था। जैसा कि हम जानते हैं कि पहले के कानून अंग्रेजों द्वारा अपने हितों के अनुरूप और मूल निवासियों को वश में करने के लिए बनाए गए थे। स्वतंत्र भारत की हमारी अपनी संसद द्वारा अधिनियमित नए प्रमुख आपराधिक कानून हमारे संविधान में निहित लोकाचार और मूल्यों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

संसद में नए कानूनों पर बहस का जवाब देते हुए माननीय गृह मंत्री श्री अमित शाह ने इस बात पर जोर दिया कि नए कानूनों का मुख्य उद्देश्य सज़ा नहीं बल्कि न्याय प्रदान करना है। न्याय, सज़ा से कहीं ज़्यादा व्यापक अवधारणा है और इसमें पीड़ित,

* पूर्व विशेष निदेशक, सीबीआई

आरोपी और समाज के अधिकारों और हितों की रक्षा शामिल हैं। इसी उद्देश्य और लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए नए कानूनों को भारतीय न्याय संहिता, भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता और भारतीय साक्ष्य अधिनियम नाम दिया गया है।

नए आपराधिक कानूनों में, न्याय सुनिश्चित करने के लिए आपराधिक न्याय प्रणाली का कुशल और प्रभावी प्रशासन एक अनिवार्य शर्त है। आपराधिक न्याय प्रणाली का उद्देश्य त्वरित न्याय सुनिश्चित करके शांति और सुरक्षा प्रदान करना है। उपरोक्त व्यापक उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए तीन नए आपराधिक कानूनों में महत्वपूर्ण बदलाव किए गए हैं। नए प्रक्रियात्मक कानून का नामकरण अर्थात भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, इन नए कानूनों को लागू करने के पीछे विधायिका की मंशा को पूरी तरह से दर्शाता है।

पुलिस, अभियोजन, न्यायपालिका और जेल, आपराधिक न्याय प्रणाली के चार महत्वपूर्ण स्तंभ हैं। ये चारों ही मिलकर न्याय प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। तीन प्रमुख आपराधिक कानूनों में से यह प्रक्रियात्मक कानून है, जो उपरोक्त स्तंभों के कामकाज को सबसे अधिक प्रभावित करता है। पुलिस और अदालतें, घटित हुए आपराधिक कृत्यों से संबंधित सूचना को संभालने के चरण से ही, प्रक्रियात्मक कानून, पुलिस, अभियोजन और न्यायपालिका की शक्तियों और कर्तव्यों से संबंधित है, जिसमें पूछताछ, जांच, अन्वेषण, अभियोजन और न्यायालय निर्णय शामिल हैं। यह निचली अदालतों के आदेशों और निर्णयों के विरुद्ध पुनरीक्षण और अपीलों पर विचार करने में अपीलीय अदालतों की शक्तियों से भी संबंधित है।

इस लेख का उद्देश्य पुलिस, अभियोजन, न्यायपालिका और जेलों के कामकाज को प्रभावित करने वाले प्रक्रियात्मक कानून में किए गए महत्वपूर्ण परिवर्तनों का सारांश प्रस्तुत करना है।

तीन नये आपराधिक कानूनों में से अधिकतम परिवर्तन प्रक्रियात्मक कानून में किए गए हैं, जैसा कि नीचे दर्शाया गया है।

- कुल धाराओं की संख्या: सीआरपीसी – 484, बीएनएसएस - 531
- नई धाराएं/खण्ड/उप-धारा: 92
- संशोधित कुल धाराएं/खंड: 177
- हटाई गई धाराएं: 14
- ऑडियो वीडियो इलेक्ट्रॉनिक साधन: 35
- समय-सीमा: 35 स्थान

उपरोक्त परिवर्तनों के प्रभाव को संक्षेप में बताने के लिए इन्हें मोटे तौर पर निम्नलिखित शीर्षकों के अंतर्गत विभाजित किया जा सकता है।

1. पीड़ित केंद्रित कानून
2. कुशल अभियोजन
3. जवाबदेही और कुशल पुलिसिंग
4. साक्ष्य एकत्र करने और न्याय प्रदान करने में प्रौद्योगिकी का उपयोग
5. अधिक कुशल न्यायिक प्रणाली और
6. जेलों से भीड़-भाड़ हटाना
7. विविध प्रावधान

इनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है:-

1. पीड़ित केंद्रित कानून

बीएनएसएस में पीड़ितों के अधिकारों की रक्षा और उन्हें त्वरित न्याय दिलाने के लिए कई प्रावधान शामिल किए गए हैं। इनमें से कुछ महत्वपूर्ण प्रावधान इस प्रकार हैं।

i. **पुलिस स्टेशन में एफआईआर दर्ज करना आसान बनाना** – एफआईआर दर्ज करने से संबंधित बीएनएसएस की धारा 173 (पहले सीआरपीसी की धारा 154) में इस संबंध में, 3 बदलाव किए गए हैं –

   क. अपराध चाहे किसी भी स्थान पर हुआ हो, पीड़ित निकटतम पुलिस स्टेशन में एफआईआर दर्ज करा सकेगा।

   ख. पीड़ित को एफआईआर दर्ज कराने के लिए पुलिस स्टेशन जाने की जरूरत नहीं है, बल्कि वह इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से शिकायत भेज सकता है।

   ग. यदि सूचक और पीड़ित एक ही व्यक्ति नहीं हैं, तो पीड़ित को एफआईआर की एक प्रति निःशुल्क प्राप्त करने का अधिकार होगा।

ii. **पीड़ित को जांच की प्रगति की सूचना दी जाएगी** - बीएनएसएस की धारा 3) 193) (ii) के अनुसार, पुलिस को एफआईआर दर्ज होने के 90 दिनों की अवधि के भीतर पीड़ित को जांच की प्रगति के बारे में सूचित करना होगा।

iii. **अभियोजन से मामला वापस लेने से पहले पीड़ित की सुनवाई अनिवार्य है** - बीएनएसएस की धारा 360 के अनुसार, न्यायालय पीड़ित को सुनवाई का अवसर प्रदान किए बिना अभियोजन से मामला वापस लेने के किसी भी अनुरोध को स्वीकार नहीं करेगा।

iv. **अपराध की आय के निपटान में पीड़ित को हिस्सा** - बीएनएसएस की धारा 107 के अनुसार, यदि न्यायालय को जांच या परीक्षण के दौरान कुर्क या जब्त की गई संपत्ति अपराध की आय लगती है, तो वह जिला मजिस्ट्रेट को निर्देश देगा कि वह अपराध की ऐसी आय को प्रभावित व्यक्तियों में समान रूप से वितरित करे।

v. **महिला मजिस्ट्रेट द्वारा पीड़िता का बयान दर्ज करना** - बीएनएसएस की धारा 183(6) में, यौन अपराधों की पीड़िता का बयान मजिस्ट्रेट द्वारा अनिवार्य रूप से दर्ज करने से संबंधित, जहां तक संभव हो, महिला मजिस्ट्रेट द्वारा और उसकी अनुपस्थिति में एक महिला की उपस्थिति में पुरुष मजिस्ट्रेट द्वारा बयान दर्ज किया जाएगा ।

vi. बीएनएसएस की धारा 183(6) में आगे प्रावधान है कि *अस्थायी या स्थायी रूप से मानसिक या शारीरिक रूप से विकलांग* व्यक्तियों के बयान *ऑडियो-वीडियो इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से, मुख्यतया,* मोबाइल फोन द्वारा रिकॉर्ड किए जाएंगे ।

vii. **बलात्कार की पीड़िता की चिकित्सा जांच रिपोर्ट अग्रेषित करने की समय सीमा** - बीएनएसएस की धारा 184 (6) में प्रावधान है कि चिकित्सा विशेषज्ञ 7 दिनों की अवधि के भीतर जांच अधिकारी को चिकित्सा जांच रिपोर्ट अग्रेषित करेगा।

2. कुशल अभियोजन

बीएनएसएस की धारा 20 के तहत राज्य सरकार को न केवल राज्य स्तर पर बल्कि राज्य के प्रत्येक जिले में अभियोजन निदेशालय स्थापित करने का निर्देश देती है। अभियोजन निदेशक, उप-अभियोजन निदेशक और सहायक अभियोजन निदेशक के पदों पर नियुक्ति के लिए पात्रता शर्तों को बदलने के अलावा, नया अधिनियम उनकी शक्तियों और कार्यों को परिभाषित करता है, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ, अदालत में दाखिल करने से पहले पुलिस रिपोर्ट की जांच और छानबीन करना, उनके शीघ्र निपटान के लिए अदालतों में कार्यवाही की निगरानी करना और अपील दायर करने पर राय देना शामिल है। इन अधिकारियों की अन्य शक्तियों और कार्यों को राज्य सरकारों द्वारा अधिसूचित किया जाना है।

3. अधिक जवाबदेह और कुशल पुलिसिंग

पुलिस, आपराधिक न्याय प्रणाली की प्रथम प्रत्युत्तरकर्ता है, जो अपराधों से संबंधित शिकायतों या सूचनाओं पर विचार करके आपराधिक कानूनों को क्रियान्वित करती है। शांति और सुरक्षा बनाए रखने के लिए, पुलिस को अपराध की रोकथाम, पता लगाने और जांच से संबंधित शक्तियां और कर्तव्य प्राप्त हैं। यह सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त सुरक्षा उपाय होना अनिवार्य है कि पुलिस, कानून के तहत उसे दी गई शक्तियों का दुरुपयोग न करे। नए अधिनियम इन दोहरे उद्देश्यों को संतुलित करता है। इस संबंध में, नए अधिनियम में प्रमुख प्रावधानों पर नीचे चर्चा की गई है -

i. तलाशी/जब्ती की रिकॉर्डिंग ऑडियो-वीडियो इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों से

अगर किसी को नए अधिनियम में एक धारा चुनने के लिए कहा जाए, जो पुलिस को सबसे अधिक जवाबदेह बनाती है, तो वह बीएनएसएस की धारा 105 है। पुलिस साक्ष्य एकत्र करने के उद्देश्य से जांच के दौरान तलाशी और जब्ती करती है। इन शक्तियों का प्रयोग करते समय पुलिस की जवाबदेही सुनिश्चित करने के लिए, नए अधिनियम में पुलिस के लिए प्रत्येक तलाशी (धारा 105 बीएनएसएस के अनुसार वारंट के साथ या धारा 185 बीएनएसएस के अनुसार उसके बिना) की संपूर्ण कार्यवाही (तलाशी लेने की प्रक्रिया, किसी संपत्ति, वस्तु या चीज को कब्जे में लेना, जब्त की गई सभी चीजों की सूची तैयार करना और गवाहों द्वारा ऐसी सूची पर हस्ताक्षर करना) को ऑडियो-वीडियो इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों, *मुख्यतया,* मोबाइल फोन के माध्यम से रिकॉर्ड करना अनिवार्य कर दिया गया है।

धारा 105 में आगे कहा गया है कि ऐसी रिकॉर्डिंग को बिना देरी के जिला मजिस्ट्रेट, उप-विभागीय मजिस्ट्रेट या प्रथम श्रेणी के न्यायिक मजिस्ट्रेट को भेजा जाना चाहिए। यह ध्यान देने योग्य है कि डीएम और एसडीएम को बीएनएसएस के अध्याय

VII के भाग बी के तहत तलाशी वारंट जारी करने की शक्तियां भी प्राप्त हैं।

ii. संपत्ति की कुर्की, जब्ती और बहाली

यदि बीएनएसएस की धारा 105 के तहत पुलिस को पहले की तुलना में अधिक जवाबदेह बनाती है तो नई जोड़ी गई बीएनएसएस की धारा 107 पुलिस को जांच के दौरान अपराध की आय को कुर्क/जब्त करने का अधिकार भी देती है। आपराधिक कानून (संशोधन) अध्यादेश, 1944 के प्रावधानों का उपयोग करते हुए पुलिस के सामने आने वाली व्यावहारिक बाधाओं को इस धारा में दूर कर दिया गया है। अब अपराध की आय मानी जाने वाली संपत्ति की कुर्की के लिए, जांच अधिकारी पुलिस अधीक्षक या पुलिस आयुक्त (1944 के कानून में यह सरकार है) की मंजूरी से क्षेत्राधिकार वाली अदालत (1944 के कानून में यह जिला न्यायालय है) में आवेदन कर सकता है। यदि न्यायालय संतुष्ट हो, तो संबंधित व्यक्ति (यदि लागू हो तो संपत्ति के बेनामी धारक सहित) को कारण बताओ नोटिस जारी करेगा, जिसमें जवाब देने के लिए 14 दिन का समय दिया जाएगा। दोनों पक्षों के जवाब और प्रस्तुतियों पर विचार करने के बाद , यदि न्यायालय संतुष्ट होता है, तो संपत्ति की कुर्की का आदेश पारित कर सकता है।

यदि 14 दिनों की अवधि के भीतर कोई जवाब नहीं मिलता है, तो न्यायालय *एकपक्षीय आदेश जारी कर सकता है। यदि न्यायालय को यह विश्वास हो जाता है कि नोटिस जारी करने से कुर्की/जब्ती का उद्देश्य विफल हो जाएगा, तो न्यायालय अंतरिम एकपक्षीय आदेश* द्वारा ऐसी संपत्ति को कुर्क/जब्ती कर सकता है, *जो न्यायालय द्वारा अंतिम निर्णय दिए जाने तक प्रभावी रहेगा*।

यदि न्यायालय अपने निर्णय में यह पाता है कि कुर्क/जब्त की गई संपत्ति अपराध की आय है, तो वह जिला मजिस्ट्रेट को आदेश प्राप्त होने की तिथि से साठ दिनों के भीतर अपराध की आय को ऐसे अपराध से प्रभावित व्यक्तियों में समान रूप से वितरित करने का निर्देश देगा। यदि कोई दावेदार नहीं मिलता है, तो आय सरकार के पास जब्त हो जाएगी।

iii. गिरफ्तार व्यक्ति की पुलिस रिमांड से संबंधित परिवर्तन

अनुपम कुलकर्णी बनाम सीबीआई (1992) में, माननीय सुप्रीम कोर्ट ने यह निर्णय दिया कि सीआरपीसी की धारा 167 के प्रावधानों के अनुसार, न्यायालय केवल गिरफ्तारी की तारीख से पहले पंद्रह दिनों के भीतर गिरफ्तार व्यक्ति की कुल 15 दिनों की पुलिस हिरासत रिमांड दे सकता है। हिरासत का आगे विस्तार केवल न्यायिक हो सकता है। इससे जांच एजेंसियों के सामने कई मुश्किलें खड़ी हो गईं, खासकर तब जब जांच को विशेष शाखाओं/एजेंसियों जैसे कि अपराध शाखा, आर्थिक अपराध शाखा या सीबीआई को सौंपना था। जब तक ये एजेंसियां जांच अपने हाथ में लेती हैं, तब तक आम तौर पर पहले 15 दिनों की अवधि खत्म हो जाती है और ये गिरफ्तार किए गए व्यक्तियों की पुलिस हिरासत हासिल करने में सक्षम नहीं होती हैं। नए अधिनियम ने इन चिंताओं को दूर किया है। बीएनएसएस की धारा 2)187) के अनुसार, मजिस्ट्रेट समय-समय पर अभियुक्त को ऐसी हिरासत में रखने को अधिकृत कर सकता है, जिसे मजिस्ट्रेट उचित समझे, जिसकी अवधि पूरी तरह से या भागों में 15 दिनों से अधिक नहीं होगी, 60 दिनों या 90 दिनों की हिरासत अवधि में से प्रारंभिक 40 दिनों या 60 दिनों के दौरान किसी भी समय, जैसा भी मामला हो, उप-धारा (3) में प्रावधान किया गया है। इस उप- धारा में संदर्भित हिरासत पुलिस हिरासत है।

iv. पुलिस को अधिक जवाबदेह बनाने के लिए अन्य प्रावधान

क. बीएनएसएस की धारा 7)35) के अनुसार, किसी पुलिस अधिकारी को 3 वर्ष से कम कारावास से *दंडनीय* अपराध में किसी अशक्त या 60 वर्ष से *अधिक आयु के* व्यक्ति को गिरफ्तार करने के लिए उप पुलिस अधीक्षक या उससे ऊपर के पद के अधिकारी की पूर्व अनुमति लेनी होगी ।

ख. धारा 37 ,36 और 48 धारा किए गए बदलावों से गिरफ्तार व्यक्तियों के अधिकारों से संबंधित मामलों में पुलिस की जवाबदेही और मजबूत हुई है। अब गिरफ्तार व्यक्ति अपनी गिरफ्तारी के बारे में जानकारी देने के लिए परिवार के किसी सदस्य या रिश्तेदार या मित्र के अलावा, ‹किसी अन्य व्यक्ति› को नामित कर सकता है {धारा 36 (सी) और 48}। राज्य सरकार गिरफ्तार व्यक्तियों और अपराध की प्रकृति के बारे में जानकारी एकत्र करने के लिए एक अधिकारी नामित करेगी जो सहायक उप निरीक्षक पद से नीचे का न हो तथा इसे प्रत्येक जिला

मुख्यालय और पुलिस स्टेशन में प्रमुखता से प्रदर्शित कराएगी {धारा 37(बी)}।

ग. बीएनएसएस की धारा 1)174) के अनुसार, पुलिस को अब असंज्ञेय अपराधों से संबंधित सभी शिकायतों/सूचनाओं की दैनिक डायरी रिपोर्ट हर पखवाड़े मजिस्ट्रेट को भेजनी होगी।

घ. जैसा कि बीएनएसएस की धारा 1)185) में प्रावधान है, पुलिस इस धारा के अंतर्गत तलाशी (बिना तलाशी वारंट के) करने के कारणों को केस डायरी में दर्ज करेगी।

ड. धारा 8)173) सीआरपीसी के अनुसार आरोप पत्र दाखिल करने के बाद आगे की जांच जारी रखने के लिए पुलिस की शक्तियों को बरकरार रखते हुए, बीएनएसएस में इन शक्तियों पर कुछ प्रतिबंध लगाए गए हैं। धारा 9)193) बीएनएसएस के अनुसार, *मुकदमे के अन्वीक्षण के दौरान आगे की जांच करने के लिए न्यायालय की अनुमति लेनी होगी,* और *इसे 90 दिनों के भीतर पूरा करना होगा* जिसे न्यायालय की अनुमति से बढ़ाया जा सकता है।

v. पुलिस की कार्यकुशलता में सुधार के लिए अन्य प्रावधान

क. पुलिस द्वारा हथकड़ी का प्रयोग - *सिटीजन फॉर डेमोक्रेसी बनाम असम राज्य और अन्य (1995)* में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निर्देश दिए कि पुलिस किसी व्यक्ति की गिरफ्तारी करते समय हथकड़ी का प्रयोग नहीं करेगी और यदि आवश्यक समझा जाए तो न्यायालय की अनुमति प्राप्त करने के बाद ऐसा करेगी। इसके कारण पुलिस को अपराधियों की गिरफ्तारी और न्यायालयों में उनकी पेशी से निपटने में व्यावहारिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा।

नए अधिनियम में बीएनएसएस की धारा 3)43) के तहत पुलिस अधिकारी को *किसी ऐसे व्यक्ति को गिरफ्तार करते समय या ऐसे गिरफ्तार व्यक्ति को अदालत के समक्ष पेश करते समय हथकड़ी लगाने की शक्तियां दी गई हैं, जो* आदतन अपराधी है या जो हिरासत से भाग गया है या जिसने इस उप-धारा में सूचीबद्ध आतंकवादी कृत्य, हत्या, बलात्कार जैसे गंभीर अपराध किए हैं।

ख. एसएचओ द्वारा प्रारंभिक जांच का पंजीकरण - *ललिता कुमारी बनाम यूपी राज्य (2013)* में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्देशों को कुछ संशोधनों के साथ नए अधिनियम में शामिल किया गया है। बीएनएसएस की धारा 3)173) के अनुसार, यदि अपराध 3 वर्ष या उससे अधिक परंतु 7 वर्ष से कम कारावास से दंडनीय है, तो डीएसपी या उससे ऊपर के अधिकारी की अनुमति से, एसएचओ, अपराध की प्रकृति और गंभीरता को देखते हुए, 14 दिनों की अवधि के भीतर यह पता लगाने के लिए प्रारंभिक जांच (पीई) कर सकता है कि क्या मामले में कार्यवाही के लिए प्रथम दृष्टया मामला मौजूद है।

ग. पुलिस के अनुरोध पर न्यायालय द्वारा बयान दर्ज करना अनिवार्य है - बीएनएसएस की धारा 6)183) के अनुसार, 10 वर्ष या उससे अधिक कारावास या आजीवन कारावास या मृत्यु दंड से दंडनीय अपराधों में, मजिस्ट्रेट पुलिस अधिकारी द्वारा उसके समक्ष लाए गए गवाह के बयान दर्ज करेगा।

घ. अभियुक्त को गिरफ्तार किए बिना आरोप पत्र दाखिल करना - सीआरपीसी की धारा 170 के प्रावधान की व्याख्या कई न्यायालयों द्वारा इस तरह से की जा रही थी कि वे सीआरपीसी की धारा 173 के तहत दायर की जाने वाली पुलिस रिपोर्ट को स्वीकार करने से इनकार कर देंगे, जब तक कि अभियुक्त को गिरफ्तार नहीं किया जाता है और पुलिस रिपोर्ट के साथ नहीं लाया जाता है, बावजूद इसके कि सीआरपीसी की धारा 41 में संशोधन किया गया और 2009 में धारा 41 ए डाली गई, जिसका अर्थ था कि पुलिस द्वारा तभी गिरफ्तारी की जानी चाहिए जब उसे आवश्यक समझा जाए। इन संशोधित प्रावधानों के अनुपालन पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने *अर्नेश कुमार बनाम बिहार राज्य (2014) में* जोर दिया था। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने *सतेंद्र कुमार अंतिल बनाम सीबीआई (2022)* में अपने उपरोक्त निर्देशों को दोहराया

और आरोप पत्र दायर करने के उद्देश्य से व्यक्तियों को गिरफ्तार करने और फिर उनकी जमानत का विरोध करने के लिए एजेंसियों की खिंचाई की।

सर्वोच्च न्यायालय के उपरोक्त निर्णयों को ध्यान में रखते हुए, बीएनएसएस की धारा 1)190) यह स्पष्ट करती है कि, यदि अभियुक्त हिरासत में नहीं है, तो पुलिस अधिकारी मजिस्ट्रेट के समक्ष उसकी उपस्थिति के लिए ऐसे व्यक्ति से सुरक्षा लेगा और *मजिस्ट्रेट इस आधार पर पुलिस रिपोर्ट को स्वीकार करने से इनकार नहीं करेगा कि अभियुक्त को हिरासत में नहीं लिया गया है* ।

ड. जांच के दौरान किसी व्यक्ति की आवाज का नमूना लेना - माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने *रितेश सिन्हा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (2019)* में माना कि मजिस्ट्रेट किसी आरोपी व्यक्ति को जांच/पूछताछ के उद्देश्य से अपनी आवाज का नमूना देने का आदेश दे सकता है। इसे बीएनएसएस की धारा 349 में शामिल किया गया है। न्यायालय अब किसी भी व्यक्ति को, जिसमें आरोपी भी शामिल है, इस संहिता के तहत जांच या कार्यवाही के उद्देश्य से नमूना हस्ताक्षर या उंगलियों के निशान या लिखावट या आवाज का नमूना देने का आदेश दे सकता है, बिना उसे गिरफ्तार किए।

च. जांच के दौरान जब्त संपत्ति का निपटान - जांच के दौरान ही जब्त की गई संपत्तियों के निपटान की सुविधा के लिए धारा 497 बीएनएसएस में बदलाव किए गए हैं। आवेदन पर, यदि न्यायालय संतुष्ट हो, तो वह संपत्ति के विवरण वाला एक बयान तैयार करेगा और संपत्ति के उसके समक्ष प्रस्तुत होने के 14 दिनों के भीतर ली गई संपत्ति की फोटोग्राफी/ वीडियोग्राफी कराएगा। इस बयान और फोटोग्राफी/ वीडियोग्राफी का उपयोग संहिता के तहत मुकदमे या अन्य कार्यवाही में साक्ष्य के रूप में किया जाना है। उपरोक्त अनुसार कार्य करने के बाद, न्यायालय ऐसा बयान तैयार करने और फोटो/वीडियोग्राफी लेने के 30 दिनों की अवधि के भीतर संपत्ति के निपटान का आदेश देगा।

4. प्रौद्योगिकी का उपयोग

इस प्रौद्योगिकी-चालित युग में, नया अधिनियम, पुलिस, अभियोजन और न्यायालयों के आधुनिकीकरण तथा कार्यवाही के दौरान इलेक्ट्रॉनिक/डिजिटल साक्ष्य एकत्र करने के लिए प्रौद्योगिकी का उपयोग करने का प्रावधान करता है। इसकी कुछ प्रमुख विशेषताएं इस प्रकार हैं।

क. न्यायालयों द्वारा इलेक्ट्रॉनिक/डिजिटल रूप में समन जारी करना {धारा 63(ii)} तथा पुलिस {धारा 64(2)} न्यायालयों {धारा 71(1)} द्वारा इलेक्ट्रॉनिक संचार के माध्यम से इसकी तामील

ख. बीएनएसएस की धारा 94 पुलिस अधिकारी और न्यायालय को किसी व्यक्ति को इलेक्ट्रॉनिक/डिजिटल साक्ष्य एकत्र करने के उद्देश्य से किसी दस्तावेज या अन्य चीज के अतिरिक्त संचार उपकरणों सहित इलेक्ट्रॉनिक संचार उपलब्ध कराने का निर्देश देने का अधिकार देती है ।

ग. बलात्कार की पीड़िता का बयान मोबाइल फोन सहित ऑडियो-वीडियो इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से भी दर्ज किया जा सकता है {धारा 176(1}.

घ. वर्ष या उससे अधिक की सजा वाले अपराधों के लिए, एसएचओ, राज्य सरकार द्वारा अधिसूचित तारीख से 5 वर्ष के भीतर फोरेंसिक साक्ष्य एकत्र करने के लिए फोरेंसिक विशेषज्ञ को अपराध स्थल पर भेजेगा {धारा 176(3}) ।

ड. *इलेक्ट्रॉनिक संचार* के माध्यम से आरोपी व्यक्तियों और पीड़ित (यदि वकील द्वारा प्रतिनिधित्व किया जाता है) को पुलिस रिपोर्ट और दस्तावेजों की प्रतियां प्रदान कर सकती है और इसे *विधिवत* रूप से तामील माना जाएगा।

च. अभियुक्त को आरोप सुनाने और निर्णय सुनाने के समय, ऑडियो-वीडियो इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से भी न्यायालय में उसकी उपस्थिति सुनिश्चित की जा सकती है (धारा 251 और 392)

छ. बीएनएसएस की धारा 265 ,254 और 336 ऑडियो-वीडियो इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों से गवाहों, सरकारी

कर्मचारियों, विशेषज्ञों और चिकित्सा विशेषज्ञों के साक्ष्य को रिकॉर्ड करने में सक्षम बनाती हैं। धारा 530 ऑडियो-वीडियो इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों और इलेक्ट्रॉनिक संचार का उपयोग करके जो कुछ भी किया जा सकता है, उसके लिए एक व्यापक व्यवस्था प्रदान करती है, जिसमें अपील सहित इस संहिता के तहत सभी कार्यवाहियाँ शामिल हैं।

5. कुशल न्यायिक प्रणाली

i. कार्यवाही के दौरान विभिन्न प्रक्रियाओं के लिए समय-सीमा

हमारी न्याय प्रणाली की सबसे बड़ी आलोचना जांच और सुनवाई दोनों के दौरान कार्यवाही में होने वाली देरी है। जांच में तेजी लाने के लिए नए अधिनियम में शुरू की गई कुछ समय सीमाओं पर पहले ही चर्चा हो चुकी है। यहां न्यायालयों में कार्यवाही से संबंधित समय सीमा पर चर्चा की गई है।

क. *दस्तावेजों की आपूर्ति* – अभियुक्त के न्यायालय में पेश होने की तिथि से 14 दिन के भीतर (धारा 230)

ख. *दस्तावेजों की स्वीकृति/अस्वीकृति* – आपूर्ति की तारीख से 30 दिन *लेकिन न्यायालय इसमें छूट दे सकता है* (धारा 330)

ग. *मामले को सत्र न्यायालय को सौंपना* – संज्ञान लेने की तारीख से 90 दिन *जिसे 180 दिन तक बढ़ाया जा सकता है* (धारा 232)

घ. *अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा उन्मोचन आवेदन दाखिल करना* – सत्र मामले में प्रतिवेदन की तारीख से (धारा 250) और वारंट मामले में दस्तावेजों की आपूर्ति की तारीख से 60 दिन (धारा 262)

ड. *आरोप तय करना* – आरोप पर पहली सुनवाई की तारीख से 60 दिन (धारा 251 और 263)

च. *प्ली बार्गेनिंग का आवेदन दाखिल करने के लिए* - आरोप तय होने की तारीख से 30 दिन (धारा 290) - यह समय-सीमा सीआरपीसी की धारा 265बी में नहीं थी और इस तरह का आवेदन मुकदमे के दौरान किसी भी चरण में दाखिल किया जा सकता था। हालाँकि, नए अधिनियम में, एक पात्र आरोपी व्यक्ति मुकदमे की सुनवाई की शुरुआत से पहले ऐसा आवेदन दाखिल कर सकता है।

छ. *उपरोक्त में दोनों पक्षों द्वारा मामले का पारस्परिक रूप से संतोषजनक निपटारा करने के लिए* – न्यायालय द्वारा आवेदन स्वीकार करने की तिथि से 60 दिन (धारा 290)

ज. निर्णय की घोषणा – अंतिम बहस के समापन की तारीख से 45 दिन (धारा 258 और 392)

झ. पोर्टल पर निर्णय की प्रति अपलोड करना – निर्णय की घोषणा की तारीख से 7 दिन के भीतर, जहां तक संभव हो (धारा 392)

ii. स्थगन की संख्या सीमा

बीएनएसएस की धारा 2)346) के अनुसार, प्रत्येक जांच या परीक्षण में, किसी पक्ष के अनुरोध पर, दूसरे पक्ष की आपत्तियों को सुनने के बाद न्यायालय द्वारा *दो बार से अधिक* स्थगन नहीं दिया *जा सकता है।*

iii. समन मामले में मजिस्ट्रेट को अतिरिक्त शक्ति

समन मामले में, मजिस्ट्रेट अभियुक्त को रिहा कर सकता है, यदि आरोपों को निराधार माना जाता है और ऐसी रिहाई का प्रभाव उन्मोचन के समान होगा (धारा 274)

iv. संक्षिप्त सुनवाई करने के लिए मजिस्ट्रेट की शक्तियां बढ़ाई गईं

क. सीआरपीसी की धारा 260 में मजिस्ट्रेट द्वारा अनिवार्य संक्षिप्त सुनवाई का कोई प्रावधान नहीं था। बीएनएसएस की धारा 1)283)(बी) में मजिस्ट्रेट निर्दिष्ट अपराधों की संक्षिप्त सुनवाई करेगा जिसमें 20000 रुपये से कम मूल्य की चोरी और चोरी की गई संपत्ति प्राप्त करना शामिल है।

ख. जैसा कि बीएनएसएस की धारा 2)283) में प्रावधान है, मजिस्ट्रेट **3 साल** से कम सजा वाले अपराधों की भी संक्षिप्त सुनवाई कर सकते हैं (सीआरपीसी में यह 2 साल था)। इसके अलावा, मजिस्ट्रेट के ऐसे फैसले के खिलाफ कोई अपील नहीं की जा सकेगी।

v. लोक सेवकों और विशेषज्ञों के साक्ष्य के लिए विशेष प्रावधान

एक नई धारा 336 जोड़ी गई है, जिसमें लोक सेवक, वैज्ञानिक विशेषज्ञ या चिकित्सा अधिकारी के साक्ष्य के लिए विशेष प्रावधान किए गए हैं , जहां उनके द्वारा तैयार किए गए दस्तावेज़ की रिपोर्ट को न्यायालय में साक्ष्य के रूप में इस्तेमाल किया जाना है। इनमें से किसी को भी तब तक नहीं बुलाया जाएगा जब तक कि उनके दस्तावेज़ या रिपोर्ट पर विवाद न हो। इसके अलावा, यदि ऐसा अधिकारी स्थानांतरित हो जाता है या सेवानिवृत्त हो जाता है या मर जाता है या नहीं मिल पाता है या गवाही देने में असमर्थ है या उसकी उपस्थिति सुनिश्चित करने से देरी होगी , तो न्यायालय ऐसे दस्तावेज़ या रिपोर्ट पर गवाही देने के लिए उस पद पर आसीन उसके उत्तराधिकारी की उपस्थिति सुनिश्चित करेगा।

6. जेलों से भीड़-भाड़ हटाना

i. कुछ विचाराधीन कैदियों की जमानत पर शीघ्र रिहाई

बीएनएसएस की धारा 479 के अनुसार, यदि कोई विचाराधीन कैदी *बिना किसी पूर्व दोषसिद्धि के पहली बार अपराध करता है* और मृत्यु या *आजीवन कारावास से दंडनीय अपराध का आरोपी नहीं है* , तो उसे न्यायालय द्वारा जमानत पर रिहा किया जाएगा, यदि वह उस अपराध के लिए निर्दिष्ट *कारावास की अधिकतम अवधि के एक-तिहाई तक हिरासत में रह चुका है (पहले के कानून में यह सभी अपराधियों के लिए आधी अवधि थी)।* ऐसे विचाराधीन कैदियों की रिहाई के लिए न्यायालय में आवेदन करना *जेल अधीक्षक का कर्तव्य* होगा।

ii. पहली बार अपराध करने वालों द्वारा दलील सौदेबाजी के लिए नरम सजा

बीएनएसएस की धारा 293 के प्रावधानों के अनुसार, सफल दलील सौदेबाजी के मामले में यदि अपराध के लिए न्यूनतम सजा का प्रावधान किया गया है और यदि अभियुक्त बिना किसी पूर्व दोषसिद्धि के प्रथम बार अपराधी है, तो न्यायालय अभियुक्त को *ऐसी न्यूनतम सजा के एक-चौथाई* या अन्यथा *सजा के छठे भाग की सजा दे सकता है।*

7. विविध प्रावधान

i. घोषित अपराधियों से संबंधित

क. सीआरपीसी की धारा 4)82) के अनुसार, केवल वे भगोड़े ही घोषित अपराधी हो सकते हैं जो इसमें सूचीबद्ध 19 आईपीसी अपराधों में से किसी एक में वांछित हों। इसमें बलात्कार और अन्य कानूनों सहित आईपीसी के कई गंभीर अपराध शामिल नहीं होंगे। बीएनएसएस की धारा 4)84) इस विसंगति को दूर करती है, क्योंकि इसमें भगोड़ों को घोषित अपराधी घोषित करने को विशिष्ट अपराधों *के बजाय कानून के तहत दी गई सज़ा से जोड़ा गया है। इस धारा के अनुसार, भारतीय न्याय संहिता (बीएनएस) या किसी अन्य कानून* के तहत *10 साल या उससे अधिक कारावास या आजीवन कारावास या मृत्युदंड से दंडनीय* अपराध में वांछित फरार व्यक्तियों को न्यायालय द्वारा घोषित अपराधी घोषित किया जा सकता है।

ख. *किसी बाहरी देश में घोषित अपराधियों की संपत्ति की पहचान, कुर्की और जब्ती* के लिए एक नई धारा 86 जोड़ी गई है । अध्याय VIII में दिए गए प्रावधान के अनुसार पुलिस अधीक्षक या पुलिस आयुक्त और उससे ऊपर के रैंक के अधिकारी के लिखित अनुरोध पर, न्यायालय उपरोक्त उद्देश्य के लिए उस देश के न्यायालय को अनुरोध पत्र (एलआर) जारी कर सकता है।

ग. बीएनएसएस की धारा 356 *(नया) में न्यायशास्त्र का एक नया सिद्धांत पेश किया गया है* **, जो घोषित अपराधियों की अनुपस्थिति में सुनवाई से संबंधित है,** जो पर्याप्त अवसर दिए जाने के बावजूद सुनवाई में शामिल नहीं होते हैं। नए कानून में कहा गया है कि यदि कोई पीओ सुनवाई से बचने के लिए फरार हो जाता है, और उसे गिरफ्तार करने की तत्काल कोई संभावना नहीं है, तो इसे ऐसे व्यक्ति के व्यक्तिगत रूप से उपस्थित होने और सुनवाई के अधिकार का परित्याग माना जाएगा, और न्यायालय लिखित में कारणों को दर्ज करने के बाद सुनवाई के साथ आगे बढ़ेगा और निर्णय सुनाएगा।

दोषसिद्धि के निर्णय के विरुद्ध अपील निर्णय के तीन वर्ष के भीतर ही दायर की जा सकती है और वह भी तब जब पीओ स्वयं अपीलीय न्यायालय के समक्ष उपस्थित हो।

ii. प्रभावी निवारक कार्रवाई के लिए पुलिस को अतिरिक्त शक्ति

धारा 172 (नई) के अनुसार सभी व्यक्ति पुलिस की निवारक कार्रवाई के संबंध में अध्याय XII के तहत अपने किसी भी कर्तव्य की पूर्ति में दिए गए पुलिस अधिकारी के वैध निर्देशों का पालन करने के लिए बाध्य होंगे और ऐसे किसी भी व्यक्ति को ऐसे निर्देशों की अवहेलना करने पर, पुलिस अधिकारी द्वारा *हिरासत में लिया जा सकता है* या हटाया जा सकता है, जो ऐसे व्यक्ति को या तो मजिस्ट्रेट के सामने ले जा सकता है या *छोटे मामलों में, उसे 24 घंटे की अवधि के भीतर यथाशीघ्र रिहा कर सकता है।*

iii. दुर्भावनापूर्ण शिकायतों से लोक सेवकों की सुरक्षा

नए अधिनियम में, मजिस्ट्रेट की जांच या पूछताछ के आदेश देने की शक्तियों से संबंधित दो महत्वपूर्ण धाराओं - 175 और 223 बीएनएसएस - में लोक सेवकों को उनके आधिकारिक कर्तव्यों के निर्वहन के दौरान उत्पन्न होने वाले मामलों में दुर्भावनापूर्ण शिकायतों से बचाने के लिए अतिरिक्त सुरक्षा उपाय प्रदान किए गए हैं। धारा 175(3) बीएनएसएस के तहत एफआईआर दर्ज करने का आदेश देने या धारा 223 बीएनएसएस के तहत ऐसी शिकायत पर संज्ञान लेने से पहले, मजिस्ट्रेट लोक सेवक के वरिष्ठ अधिकारी से घटना के तथ्यों और परिस्थितियों के बारे में एक रिपोर्ट प्राप्त करेगा और लोक सेवक द्वारा उस स्थिति के बारे में किए गए कथनों पर विचार करने के बाद जिसके कारण कथित घटना हुई। इससे लोक सेवकों में यह विश्वास पैदा होगा कि वे दुर्भावनापूर्ण अभियोजन का शिकार हुए बिना निष्पक्ष और निडर होकर अपने आधिकारिक कर्तव्यों का निर्वहन कर सकते हैं।

iv. बीएनएसएस की धारा 175 के तहत मजिस्ट्रेट को शक्ति के दुरुपयोग को रोकना

माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने *प्रियंका श्रीवास्तव बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (2015)* मामले में मजिस्ट्रेटों को धारा 156(3) सीआरपीसी के तहत एफआईआर दर्ज करने का आदेश देने की शक्तियों के दुरुपयोग को रोकने के लिए निर्देश जारी किए थे। सर्वोच्च न्यायालय के इन निर्देशों को नए अधिनियम में शामिल किया गया है। बीएनएसएस की धारा 174(4) और 175(3) के संयुक्त अध्ययन से पता चलता है कि कोई शिकायत पुलिस स्टेशन और पुलिस अधीक्षक को मामले की सूचना देने के बाद ही न्यायालय में जा सकती है। बीएनएसएस की धारा 175(3) में यह प्रावधान है कि मजिस्ट्रेट एफआईआर दर्ज करने का आदेश दे सकता है, बशर्ते कि शिकायतकर्ता द्वारा हलफनामे के साथ धारा 173(4) के तहत आवेदन दाखिल किया जाए, मजिस्ट्रेट आवश्यक जांच करे और इस संबंध में पुलिस अधिकारी द्वारा प्रस्तुत प्रस्तुतियों पर विचार करे।

v. पुलिस द्वारा गवाहों को बुलाना – महत्वपूर्ण बदलाव

बीएनएसएस की धारा 179 में, पुरुष व्यक्ति की आयु 65 वर्ष से घटाकर 60 वर्ष कर दी गई है तथा उनके निवास स्थान पर जांच किए जाने वाले व्यक्तियों की सूची में गंभीर बीमारी से ग्रस्त व्यक्ति की एक नई श्रेणी जोड़ी गई है, अन्य व्यक्ति 15 वर्ष से कम आयु के पुरुष या महिला या मानसिक या शारीरिक रूप से विकलांग व्यक्ति हैं।

उप-धारा (1) में आगे प्रावधान जोड़ा गया है कि यदि ऐसा व्यक्ति पुलिस स्टेशन में उपस्थित होने के लिए इच्छुक है, तो ऐसे व्यक्ति को ऐसा करने की अनुमति दी जा सकती है। यह ध्यान में रखते हुए कि धारा 179 बीएनएसएस में निर्देशों का उल्लंघन धारा 199 बीएनएस के तहत एक संज्ञेय अपराध है और इस अपराध के लिए धारा 218 बीएनएसएस के तहत अभियोजन स्वीकृति प्राप्त करने की कोई आवश्यकता नहीं है, यह सलाह दी जाती है कि पुलिस अधिकारी ऊपर बताए अनुसार अनुरोध करने वाले व्यक्ति को अनुमति देते समय विशेष सावधानी बरतें और इस संबंध में आवश्यक साक्ष्य रिकॉर्ड पर रखें।

vi. बीएनएसएस की धारा 183 का प्रतिबंधित दायरा

बीएनएसएस की धारा 183 का दायरा सीआरपीसी की धारा 164 की तुलना में सीमित कर दिया गया है, इस अर्थ में कि अब *जिस जिले में एफआईआर दर्ज की गई है, वहां* का मजिस्ट्रेट ही इस धारा के तहत अभियुक्त का इकबालिया बयान तथा गवाह के बयान दर्ज कर सकेगा। पुराने कानून में देश में कहीं भी कोई भी मजिस्ट्रेट ऐसा कर सकता था।

vii. स्थानीय अभियोजन से संबंधित बीएनएसएस की धारा 208 का दायरा बढ़ाया गया

ऐसे स्थानों का दायरा बढ़ाने के लिए जहां किसी ऐसे देश द्वारा *स्थानीय अभियोजन के लिए* भेजे गए अनुरोधों पर कार्रवाई शुरू की जा सकती है, जिसके साथ भारत की प्रत्यर्पण संधि नहीं है या संधि में एक दूसरे के नागरिकों के प्रत्यर्पण का प्रावधान नहीं है, बीएनएसएस की धारा 208 में यह जोड़ा गया है कि ऐसे अपराधों से भारत के भीतर किसी भी स्थान पर निपटा जा सकता है, *जहां अपराध पंजीकृत है*, इसके अतिरिक्त उस स्थान पर भी जहां ऐसा व्यक्ति पाया जा सकता है।

viii. बीएनएसएस की धारा 218 में अभियोजन स्वीकृति दी गई मानी जाने का प्रावधान

अभियोजन स्वीकृति चाहने वाले अनुरोधों पर शीघ्र निर्णय लेने के लिए, बीएनएसएस की धारा 218(1) में प्रावधान किया गया है कि यदि सरकार प्राप्ति की तारीख से 120 दिनों के भीतर ऐसे अनुरोधों पर निर्णय लेने में विफल रहती है, तो इसे सरकार द्वारा स्वीकृति प्रदान की गई मानी जाएगी।

ix. राज्य बीएनएसएस की धारा 398 के तहत गवाह संरक्षण योजना अधिसूचित करेंगे

प्रत्येक राज्य सरकार गवाहों की सुरक्षा सुनिश्चित करने के उद्देश्य से राज्य के लिए गवाह संरक्षण योजना तैयार करेगी और अधिसूचित करेगी।

x. बीएनएसएस की धारा 531 के अनुसार पुराने और नए कानून की प्रयोज्यता

यद्यपि 1 जुलाई 2024 से सीआरपीसी निरस्त हो जाएगी, लेकिन इस तिथि से पहले लंबित सभी अपील, आवेदन, परीक्षण, जांच या अन्वेषण सीआरपीसी के प्रावधानों के अनुसार जारी रख निपटाए जाएंगे, जैसे कि यह संहिता लागू ही नहीं हुई हो।

यह भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि 1 जुलाई 2024 से प्राप्त या पंजीकृत सभी नई शिकायतों या एफआईआर पर, बीएनएसएस के प्रावधान लागू होंगे, यहां तक कि ऐसे मामले में भी जो भारतीय दंड संहिता के प्रावधानों के तहत पंजीकृत होगा।

निष्कर्ष:

उपरोक्त चर्चा यह दर्शाती है कि नए प्रक्रियात्मक कानून में आपराधिक न्याय प्रणाली के सभी स्तंभों को प्रभावित करने वाले दूरगामी परिवर्तन किए गए हैं। जीरो-एफआईआर, ई-एफआईआर, अन्वेषण की प्रगति की जानकारी देना, अभियोजन पक्ष से मामला वापस लेने से पहले पीड़ित की सुनवाई, त्वरित अन्वेषण और सुनवाई, इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से अदालत में बयान दर्ज करना जैसे प्रावधान इसे पीड़ित केंद्रित कानून बनाते हैं। जांच एजेंसियों को कुशल और प्रभावी अन्वेषण करने में सक्षम बनाने के लिए कदम उठाए गए हैं, वहीं इन एजेंसियों की जवाबदेही बढ़ाने के लिए भी पर्याप्त प्रावधान किए गए हैं। प्रभावी और कुशल जांच, अन्वेषण और सुनवाई तथा डिजिटल और वैज्ञानिक साक्ष्य एकत्र करने के लिए प्रौद्योगिकी का उपयोग करने से सभी प्रभावित व्यक्तियों और समाज को समय पर न्याय सुनिश्चित करने के लिए आपराधिक न्याय प्रणाली में सुधार करने में काफी मदद मिलेगी।

भारतीय न्याय संहिता, 2023: औपनिवेशिक दंड कानूनों का भारतीयकरण

डॉ. नीरज तिवारी[1]

सार

हाल ही में, भारत सरकार ने विक्टोरियन आपराधिक कानूनों की समीक्षा कर एक ऐतिहासिक कदम उठाया है और तीन कानून भारतीय न्याय संहिता, 2023, भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 और भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 पारित किए हैं, जो 1 जुलाई 2024 से भारतीय दंड संहिता, 1860, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 और भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की जगह लेंगे। आपराधिक कानून जो दशकों से भारतीय आपराधिक न्याय प्रणाली का आधार रहे हैं उनमें परिवर्तन को आरंभ करने के पीछे जो मुख्य कारण समझ में आते हैं, वे हैं कानूनों को मौजूदा समकालीन स्थिति के लिए प्रासंगिक बनाकर उन्हें औपनिवेशिक अतीत से मुक्ति दिलाना।[2] इस लेख में, भारतीय न्याय संहिता, 2023 में किए गए परिवर्तनों के उद्देश्यों और सामग्री को रेखांकित करने के लिए विश्लेषणात्मक पद्धति का उपयोग किया गया है। प्रस्तुत लेख में पुलिस की कार्यप्रणाली पर बदलावों के प्रभाव का आलोचनात्मक मूल्यांकन किया गया है, जिसमें मॉब लिंचिंग, संगठित अपराध और आतंकवादी कृत्य जैसे नए अपराध शामिल हैं। इसके अलावा, इसमें भारतीय न्याय संहिता, 2023 में शुरू की गई सामुदायिक सेवा, आयु समानता और लिंग तटस्थता जैसी प्रमुख विशेषताओं पर प्रकाश डाला गया है। लेख के अंत में उन चिंताओं पर भी प्रकाश डाला गया है, जिनका भारतीय न्याय संहिता, 2023 में अपर्याप्त रूप से समाधान किया गया है या जिन पर बिल्कुल भी ध्यान नहीं दिया गया है।

मुख्य शब्द : मॉब-लिंचिंग, संगठित अपराध, आतंकवादी कृत्य, लिंग तटस्थता, सजा, भारतीय न्याय संहिता, 2023।

[1] सहायक प्रोफेसर, राष्ट्रीय विधि विश्वविद्यालय, दिल्ली

[2] उद्देश्यों और कारणों के कथन का पैरा 3, भारतीय न्याय संहिता, 2023।

परिचय

यह पहली बार नहीं है कि भारतीय दंड संहिता, 1860 (जिसे आगे 'आईपीसी' कहा जाएगा) में सुधार करने का प्रयास किया जा रहा है। बेंथमाइट दर्शन से प्रभावित आईपीसी को बनाने में दो दशक से अधिक का समय लगा। मैकाले की अध्यक्षता में पहले विधि आयोग ने दंड संहिता, 1837 का मसौदा प्रस्तुत किया। इस मसौदे की दो समीक्षा समितियों द्वारा जांच की गई- पहली रिपोर्ट 1846, रिपोर्ट 1851, भारतीय दंड संहिता विधेयक 1856, दूसरा रीडिंग विधेयक 1857, विधान परिषद द्वारा अंतिम पारित और अंततः 6 अक्टूबर, 1860 को गवर्नर जनरल द्वारा स्वीकृति। भारत में स्वतंत्रता के बाद दंड कानून बनाने के संबंध में कुछ इसी तरह का विलंबकारी अनुभव था। हालाँकि प्रक्रियात्मक आपराधिक कानून जो कई विधि आयोग रिपोर्टों, जैसे कि 14वीं रिपोर्ट और 41वीं रिपोर्ट में केंद्र में रहा था, ने दंड प्रक्रिया संहिता 1973 के अधिनियमन के लिए एक सुचारु प्रक्रिया अपनाई, लेकिन दंड संहिता सुधार में कठिनाइयाँ आईं। दंड संहिता में सुधार के संबंध में पहल विधि आयोग की 42वीं रिपोर्ट द्वारा अनुशंसित की गई थी, जिसे सरकार ने भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक 1972 की शुरूआत के साथ लगभग तुरंत ही अपना लिया था। विधेयक पर मतभेद और असहमति के कारण 1978 में विधेयक को फिर से पेश करना आवश्यक हो गया। हालाँकि, दंड संहिता सुधार बाधित हो गया और विधेयक फिर कभी पेश नहीं हो सका।

लगभग पाँच दशकों के बाद, भारतीय न्याय संहिता, 2023 (जिसे आगे 'बीएनएस' कहा जाएगा) लाकर सफल प्रयास किया गया है, जिसमें आईपीसी से उन्नीस धाराएँ हटा दी गईं हैं और सोलह उप-धाराओं के साथ दस नई धाराएँ शामिल की गईं हैं। इसके अतिरिक्त, कई बड़े और छोटे परिवर्तन और संशोधन किए गए हैं, जिसके परिणामस्वरूप अध्यायों और धाराओं का पुनर्गठन हुआ है। बीएनएस में किए गए परिवर्तनों को दोषसिद्धि मानकों, दंड, गैर-अपराधीकरण, अति-अपराधीकरण और न्यायिक घोषणाओं के पालन के परिप्रेक्ष्य से देखा जा सकता है।

अध्यायों और प्रावधानों का पुनर्गठन: परिवर्तन के साथ निरंतरता

जैसा कि ऊपर बताया गया है, बीएनएस के उद्देश्य और कारण स्पष्ट रूप से एक कानूनी संरचना बनाने के उद्देश्य को बताते हैं जो अधिक नागरिक केंद्रित है और इसलिए, राज्य और उसकी संपत्ति की सुरक्षा पर, नागरिकों के जीवन और स्वतंत्रता को प्राथमिकता देता है।[3] आईपीसी में संशोधन करने के बजाय एक नया दंड कानून बनाने के पीछे मुख्य उद्देश्यों में से एक अपराध और दंड से संबंधित प्रावधानों को सुव्यवस्थित करना था।[4] इसे प्रभावी बनाने के लिए, अधिकांश धाराओं को पुनर्व्यवस्थित किया गया है, नए अध्याय जोड़े गए हैं और अप्रचलित धाराओं को हटा दिया गया है। पहली बार 'महिला और शिशु के विरूद्ध अपराध' पर एक अध्याय प्रस्तुत किया गया है और इनके विरूद्ध अपराध से संबंधित प्रावधान, जो पूरे आईपीसी में बिखरे हुए थे, को एक अध्याय के तहत लाया गया है। रोचक तथ्य यह है कि बीएनएस में इस अध्याय को रखा गया है जो कि अपूर्ण अपराधों पर अध्याय के बाद बीएनएस के तहत मूल अपराधों से निपटने वाला पहला अध्याय है।[5] इसे समाज में महिलाओं और बच्चों की कमजोर स्थिति को ध्यान में रखते हुए उनके खिलाफ अपराध के प्रति शून्य सहिष्णुता की सरकार की प्रतिबद्धता के रूप में देखा जा सकता है।

अध्याय के इस तरह के पुनर्व्यवस्थापन की एक और महत्वपूर्ण विशेषता 'अधूरे अपराधों' के क्षेत्र में देखी जाती है। तीनों अधूरे अपराध यानी प्रयास, उकसाना और आपराधिक साजिश को एक अध्याय के अंतर्गत लाया गया है।[6]

इसके अलावा, यह ध्यान देने योग्य है कि आधुनिक विधायी प्रारूपण के अनुसार, सभी परिभाषाओं को वर्णमाला क्रम में एक खंड के अंतर्गत रखा गया है। पिछले कुछ वर्षों में निरस्त

[3] Ibid

[4] पैरा 4 पर

[5] अध्याय V, भारतीय न्याय संहिता, 2023

[6] अध्याय IV, भारतीय न्याय संहिता, 2023

की गई धाराओं को अंततः पाठ से हटा दिया गया है और न्यायिक निर्णयों द्वारा सुझाए गए महत्वपूर्ण परिवर्तनों को बीएनएस के अध्याय में शामिल किया गया है।[7]

बीएनएस ने एक ही तरह के अपराधों के कई प्रावधानों को मिलाकर कुल धाराओं की संख्या को 358 (जो मूल रूप से आईपीसी में 511 थी) तक कम कर दिया है।[8] हालांकि, यह एक निर्विवाद तथ्य है कि आईपीसी की स्थापना के बाद से इसमें कई बदलाव हुए हैं। आईपीसी में कुल 78 संशोधन किए गए थे। आजादी से पहले 11 भारतीय दंड संहिता (संशोधन) अधिनियम बनाए गए थे और आजादी के बाद से आईपीसी में 12 बार संशोधन हुए हैं।[9] इन सभी वर्षों में धाराएँ जोड़ी या निरस्त की गई हैं, लेकिन भ्रम से बचने के लिए मूल क्रमांक में कोई बदलाव नहीं किया गया है। पहली नज़र में, धारा संख्याओं को फिर से व्यवस्थित करके उन्हें बदलने की मौजूदा कवायद बेकार लगती है, लेकिन मौजूदा अवसर को देखते हुए, विभिन्न धाराओं को सुव्यवस्थित करना और संशोधनों के ज़रिए जोड़ी गई धाराओं के साथ-साथ हाल ही में पेश की गई धाराओं को फिर से क्रमांकित करना तर्कसंगत लगता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि नई धारा संख्याओं के साथ समायोजित होने में समय लग सकता है, फिर भी न्यायालय के निर्णयों में दी गई व्याख्या पहले की तरह ही लागू होगी, जहाँ अपराधों के परिभाषात्मक भाग में कोई बदलाव नहीं किया गया है।

वि-उपनिवेशीकरण का कार्य: विक्टोरियन विरासत को खत्म करने की दिशा में कदम

आईपीसी को निरस्त करने और बीएनएस के रूप में पुनः लागू करने के पीछे एक उद्देश्य हमारे आपराधिक न्याय प्रणाली से औपनिवेशिक छाप को हटाना था। वि-औपनिवेशीकरण का मतलब जरूरी नहीं है कि पहले के तीन कानूनों में पूरी तरह से बदलाव किया जाए। बदलावों की प्रकृति और उन उद्देश्यों पर ध्यान केंद्रित किया जाना चाहिए जिन्हें ऐसे बदलावों से हासिल किया जाना है। नए विधेयकों को पेश करते समय केंद्रीय गृह मंत्री ने लोकसभा में कहा था कि इन कानूनों का उद्देश्य ब्रिटिश काल के कानूनों को बदलना है। इसका उद्देश्य किसी को दंडित करना नहीं बल्कि न्याय सुनिश्चित करना होगा। कानून का उद्देश्य भारत के संविधान में निहित नागरिकों के अधिकारों की रक्षा करना होगा।[10] नई दंड संहिता के नाम से परिलक्षित 'दंड' से 'न्याय' की ओर बदलाव का वादा किया गया है। किसी भी कानून का नाम उस विशेष कानून को बनाने के लिए विधायकों की मंशा को दर्शाता है। इस मामले में, उद्देश्य पीड़ित को, समाज को और पहली बार छोटे-मोटे अपराध करने वालों को भी 'न्याय' पहुंचाना प्रतीत होता है। यह एक छोटा सा संशोधन प्रतीत हो सकता है, लेकिन यह न्याय वितरण प्रक्रिया के प्रति सम्पूर्ण दृष्टिकोण को बदल देता है।

उपर्युक्त बातों को अमल में लाने के लिए कई बड़े और छोटे बदलाव किए गए हैं,[11] जिनमें महारानी,[12] ब्रिटिश भारत,[13] ब्रिटिश कैलेंडर[14] आदि के सभी संदर्भों को हटाने से लेकर

[7] भारत की संसद, राज्य सभा, गृह मामलों पर विभाग-संबंधित संसदीय स्थायी समिति (भारतीय न्याय संहिता 2023, 2023 पर दो सौ छियालीसवीं रिपोर्ट) पैरा 1.11

[8] सिद्धार्थ लूथरा, 'नए कानून, वही व्यवस्था' द इंडियन एक्सप्रेस (नई दिल्ली, 23 अगस्त 2023)। उदाहरण के लिए, दंगा, घर में जबरन घुसना, आपराधिक-अतिचार और शरारत से संबंधित अपराध।

[9] ताहिर महमूद, 'इतिहास के आईने में आईपीसी' द ट्रिब्यून (नई दिल्ली, 14 अगस्त 2023)।

[10] 'केंद्रीय गृह मंत्री और सहकारिता मंत्री, श्री अमित शाह ने आज लोकसभा में भारतीय न्याय संहिता विधेयक 2023, भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता विधेयक, 2023 और भारतीय साक्ष्य विधेयक, 2023 पेश किए' (प्रेस सूचना ब्यूरो, भारत सरकार, 11 अगस्त 2023) <https://pib.gov.in/PressReleseDetailm.aspx?PRID=1947941> 11 नवंबर 2023 को एक्सेस किया गया

[11] धारा 263A, भारतीय दंड संहिता 1860

[12] धारा 13, भारतीय दंड संहिता 1860

[13] धारा 15, भारतीय दंड संहिता 1860

[14] धारा 49, भारतीय दंड संहिता 1860

राजद्रोह,[15] व्यभिचार,[16] समलैंगिकता,[17] आत्महत्या का प्रयास[18] आदि से संबंधित अपराधों को खत्म करने जैसे छोटे-बड़े कदम शामिल हैं।

बीएनएस ने राजद्रोह के अपराध को कोई स्थान नहीं दिया है।[19] इससे पहले सुप्रीम कोर्ट ने एस. जी. वोम्बटकेरे बनाम भारत संघ [20] मामले में कानून प्रवर्तन एजेंसियों द्वारा इसके दुरुपयोग का हवाला देते हुए धारा 124ए को स्थगित कर दिया था। कानून की किताब से इसे हटाए जाने के बावजूद यह तर्क दिया जा रहा है कि बीएनएस में नई डाली गई धारा 152 के रूप में 'राजद्रोह' कानून को फिर से पेश किया गया है। हालांकि, धारा 152 आईपीसी की धारा 124ए से बिल्कुल अलग है। धारा 152 भारत की संप्रभुता, एकता और अखंडता को खतरे में डालने वाले कृत्यों को आपराधिक बनाती है, जो कानून द्वारा स्थापित सरकार के प्रति घृणा या अवमानना या असंतोष पैदा करने के समान नहीं है। इसके अलावा, धारा 152 में Mens Rea मानक पेश किया गया है जो धारा 124 ए, आईपीसी में अनुपस्थित था। इसलिए, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर अंकुश लगाने या असहमति को दबाने के लिए धारा 152 को लागू करने के बारे में चिंताएं केवल अटकलें लगती हैं और उनमें दम नहीं है।

समान लिंग वाले वयस्कों के बीच सहमति से यौन कृत्यों को दंडित करने वाला प्रावधान (आईपीसी की धारा 377) भी बीएनएस में हटा दिया गया है। संबंधित धारा को पहले ही *नवतेज सिंह जौहर बनाम भारत संघ* [22] में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा असंवैधानिक घोषित किया जा चुका है, क्योंकि यह समान लिंग वालों में सहमति वाले संबंधों को अपराध बनाती है।

आईपीसी में एक पुराना प्रावधान व्यभिचार से संबंधित था,[23] जिसे बीएनएस में भी जगह नहीं मिली। *जोसेफ शाइन बनाम भारत संघ* [24]मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने व्यभिचार से संबंधित प्रावधान को पितृसत्तात्मक दृष्टिकोण का परिचायक तथा संविधान के अनुच्छेद 14, 15 और 21 का उल्लंघन करने वाला घोषित किया है, जिसके अनुसार विवाहित महिला की स्थिति उसके पति की संपत्ति के बराबर है। बीएनएस ने सर्वोच्च न्यायालय के विचारों को अपनाया है तथा 'व्यभिचार' के अपराध को समाप्त कर दिया है। उपनिवेशवाद के उन्मूलन की दिशा में एक और कदम आईपीसी की धारा 498 से 'उस व्यक्ति से, या उस व्यक्ति की ओर से उसकी देखभाल करने वाले किसी व्यक्ति से' संदर्भ को हटाने में देखा जा सकता है, जो समान आधारों पर टिक नहीं सकता है, जिसके आधार पर व्याभिचार को असंवैधानिक घोषित किया गया है।[25]

बीएनएस में बदलाव से आत्महत्या के प्रयास को भी अपराधमुक्त किया गया है।[26] 2017 में मानसिक स्वास्थ्य सेवा अधिनियम के पारित होने से आईपीसी की धारा 309[27] में अपवाद बनाकर आत्महत्या के प्रयास को प्रभावी रूप से अपराधमुक्त कर दिया गया। इससे पहले, विधि आयोग ने कई मौकों पर सिफारिश की है कि 'आत्महत्या के प्रयास' को अमानवीय और कालबाह्य होने के आधार पर निरस्त किया जाना चाहिए।[28] हालांकि

[15] धारा 124A, भारतीय दंड संहिता 1860

[16] धारा 497, भारतीय दंड संहिता 1860

[17] धारा 377, भारतीय दंड संहिता 1860

[18] धारा 309, भारतीय दंड संहिता 1860

[19] धारा 124A, भारतीय दंड संहिता 1860

[20] (2022) 7 एससीसी 433

[21] यशोवर्धन आज़ाद, 'भीड़ द्वारा हत्या से लड़ने के लिए पुलिस सुधार जरूरी' हिंदुस्तान टाइम्स (नई दिल्ली, 23 अगस्त 2023)

[22] (2018) 10 एससीसी 1

[23] धारा 497, भारतीय दंड संहिता 1860

[24] (2019) 3 एससीसी 39

[25] धारा 84, भारतीय न्याय संहिता, 2023

[26] धारा 309, भारतीय दंड संहिता 1860

[27] धारा 115, मानसिक स्वास्थ्य देखभाल अधिनियम, 2017

[28] 42वीं रिपोर्ट और 210वीं रिपोर्ट, भारतीय विधि आयोग।

बीएनएस में 'आत्महत्या के प्रयास' को आपराधिक कृत्य बनाने वाले प्रावधान को हटा दिया गया है, लेकिन 'आत्महत्या के प्रयास' के तहत सरकारी कर्मचारी को उसके कर्तव्यों के निर्वहन में बाध्य या बाधित करना दंडनीय बना दिया गया है।[29] यह देखना दिलचस्प है कि पहले 'आत्महत्या के प्रयास' को मानव शरीर को प्रभावित करने वाला अपराध माना जाता था और इसे आईपीसी के अध्याय XVI में स्थान दिया गया था। हालांकि, बीएनएस में 'आत्महत्या के प्रयास' का कृत्य अध्याय XIII में आता है जो 'सरकारी कर्मचारी के वैध अधिकार की अवमानना' से संबंधित है। इससे पता चलता है कि 'आत्महत्या का प्रयास' करने का उद्देश्य स्वयं के शरीर को नुकसान पहुंचाना नहीं है, बल्कि इसका उपयोग लोक सेवक को अपने कर्तव्यों के निर्वहन में मजबूर करने या रोकने के लिए एक उपकरण के रूप में किया जाता है।

बीएनएस में किए गए सभी बदलावों को ध्यान में रखते हुए, यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि दंड कानून को उपनिवेशवाद से मुक्त करने का एक उचित प्रयास किया गया है। हालांकि, एक प्रावधान जिसे बरकरार रखा गया है, जिस पर औपनिवेशिक छाप बहुत मजबूत है, वह है 'आपराधिक साजिश'।[30] शुरू में आईपीसी ने साजिश को केवल दो मामलों में दंडनीय बनाया था, यानी 'उकसाने के माध्यम से साजिश' और 'कुछ अपराधों के हिस्से के रूप में साजिश'। एक स्वतंत्र मूल अपराध के रूप में 'साजिश' के कृत्य को 1913 में एक संशोधन के माध्यम से आईपीसी में पेश किया गया था। साजिश के कानून को शामिल करने का कारण 1913 के संशोधन अधिनियम के उद्देश्यों और कारणों के कथन से पता चलता है, जिसमें कहा गया था कि "भारत में खतरनाक साजिशें की जाती हैं और मौजूदा कानून आधुनिक परिस्थितियों से निपटने के लिए अपर्याप्त हैं"। हालांकि, यह बिल्कुल स्पष्ट है कि एक मूल और स्वतंत्र अपराध के रूप में 'आपराधिक साजिश' को तत्कालीन सरकार के खिलाफ जाने के विचार को हतोत्साहित करने और दंडित करने के लिए डाला गया था। इस तरह के पुराने और दमनकारी प्रावधान को केवल अंग्रेजों के उद्देश्य की पूर्ति के लिए जोड़ा गया था, लेकिन अब बीएनएस में बदलाव किया गया है, जिसमें 'आपराधिक साजिश' के अपराध से निपटने वाली धारा 61(1) में 'समान उद्देश्य' की अभिव्यक्ति जोड़ी गई है। इसके लिए अभियोजन पक्ष को प्रत्येक साजिशकर्ता पर दायित्व तय करने के लिए समान उद्देश्य के अस्तित्व को स्थापित करना होगा। इससे पहले, आईपीसी ने धारा 149 में 'समान उद्देश्य' का इस्तेमाल किया था, जिसके लिए दायित्व तय करने के लिए कम से कम पांच व्यक्तियों की आवश्यकता होती थी। इसके विपरीत, आपराधिक साजिश के लिए कम से कम दो व्यक्तियों की ही आवश्यकता होती है। आने वाले समय में इसके लिए न्यायिक व्याख्या की भी आवश्यकता होगी।

सजा सम्बन्धी सुधार: निवारण से सुधार तक

बीएनएस में किए गए सुधारों में सबसे प्रतीक्षित सुधारों में से एक सजा के क्षेत्र में था। मोटे तौर पर, बीएनएस में सजा के क्षेत्र में पाँच प्रमुख बदलावों की पहचान की गई है, जो हैं, सजा के रूप में सामुदायिक सेवा की शुरूआत, अनिवार्य न्यूनतम सजा वाले अपराधों की संख्या में वृद्धि, कारावास की सजा की मात्रा में वृद्धि, जुर्माने की राशि में वृद्धि, और अधिक संख्या में अपराधों के लिए मृत्युदंड।

बीएनएस ने सजा सुनाने वाली अदालतों के लिए एक विकल्प के रूप में 'सामुदायिक सेवा' प्रदान करके सजा में सुधारात्मक दृष्टिकोण की दिशा में एक सराहनीय कदम उठाया है। छह अपराधों में 'सामुदायिक सेवा' की सजा निर्धारित की गई है। इसके अलावा, यह देखा गया है कि कई मामलों में या तो कारावास की अवधि बढ़ा दी गई है या जुर्माने की राशि बढ़ा दी गई है।[31] इसके अलावा, कई अपराधों में अनिवार्य न्यूनतम सजा को शामिल करना भी चिंताजनक है क्योंकि यह सजा सुनाने वाली अदालत के विवेक को कम करता है और साथ ही आरोपी को कुछ लाभकारी उपचार के लिए पात्र होने से वंचित करता है।[32] सजा के 'निवारक' और 'प्रतिशोधी' दृष्टिकोण को

[29] धारा 226, भारतीय न्याय संहिता 2023

[30] धारा 61, भारतीय न्याय संहिता 2023

[31] भारतीय न्याय संहिता 2023 में कुल 41 अपराधों में कारावास की अवधि में वृद्धि देखी गई है और 83 अपराधों में जुर्माने की राशि को युक्तिसंगत बनाया गया है।

[32] भारतीय न्याय संहिता 2023 में कुल 23 अपराधों में अनिवार्य न्यूनतम सजा की शुरूआत देखी गई है। हालाँकि, इनमें से कई अपराध विशेष कानूनों से उधार लिए गए हैं जिनमें ऐसी अनिवार्य न्यूनतम सजा का प्रावधान है।

सजा के सुधारात्मक रूप के साथ संतुलित किया गया है। बीएनएस में एक मजबूत कथन दिया है कि मृत्युदंड जारी रहेगा। विधि आयोग की सिफारिशों[33] और मृत्युदंड के खिलाफ दुनिया भर में आंदोलन के बावजूद, बीएनएस मृत्युदंड को आकर्षित करने वाले अपराधों की संख्या में वृद्धि को दर्शाता है जो अब आईपीसी में 11 की तुलना में 15 है। हालाँकि, यह वृद्धि 'संगठित अपराध' और 'आतंकवादी कृत्य' जैसे अपराधों को इसमें शामिल किए जाने के कारण हुई है, जो संबंधित विशेष कानूनों के तहत मृत्युदंड से दंडनीय हैं।

आपराधिक कानून (संशोधन) अधिनियम 2013 द्वारा सीमित संख्या में अपराधों के लिए पहली बार 'किसी व्यक्ति के प्राकृतिक जीवन के शेष भाग के लिए आजीवन कारावास' शब्द का इस्तेमाल किया गया था, जिसे 2018 में बढ़ा दिया गया था। बीएनएस में, इस तरह की सज़ा ऐसे अपराधों के लिए निर्धारित की गई है, जैसे गंभीर चोट लगने से स्थायी अक्षमता अवस्था या स्थायी विकलांगता हो सकती है।[34] यह ध्यान देने योग्य है कि 'किसी व्यक्ति के प्राकृतिक जीवन के शेष भाग के लिए आजीवन कारावास' शब्द का इस्तेमाल कठोर सजा को दर्शाने के लिए किया जाता है, जो सरकारी स्तर पर छूट के दायरे से बाहर होगी। यह अधिक कठोर सजा को दर्शाता है।

नये अपराधों को शामिल करना : आज की आवश्यकता

भारतीय न्याय संहिता कुछ नए अपराधों को जोड़कर, हटाए गए अपराधों की भरपाई करता है और इस तरह आपराधिक दायित्व के दायरे को बढ़ाता है। हाल ही में, जोड़े गए कुछ अपराध पूरी तरह से नए हैं, जबकि कुछ की उत्पत्ति राज्य कानूनों या विशेष कानूनों से हुई है।[35] यह ध्यान रखना दिलचस्प है कि जो अपराध पहले से ही राज्य के कानूनों या विशेष कानूनों के तहत आते हैं, उन्हें बीएनएस में कुछ महत्वपूर्ण संशोधनों के साथ प्रस्तुत किया गया है।

सबसे पहले और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि महिलाओं और बच्चों के विरूद्ध होने वाली आपराधिक गतिविधियों को केन्द्र पर रखा गया है और इस क्षेत्र में, कुछ प्रमुख अपराध जोड़े गए हैं। शादी के झूठे वादे या पहचान छिपा कर यौन संबंध बनाने के बढ़ते मामलों को दंडनीय बनाया गया है।[36] यह गलतफहमी हो सकती है कि यह महिला की यौन स्वायत्तता को उससे दूर करता है, लेकिन आपराधिक प्रक्रिया शुरू करने का विकल्प पीड़िता को दिया गया है और केवल तभी जब उसे लगता है कि उसे यौन संभोग के कृत्य में 'धोखा' दिया गया है, वह आपराधिक प्रक्रिया शुरू कर सकती है।[37] इसके अलावा, बीएनएस की धारा 95 उन मामलों पर अंकुश लगाने का प्रयास करती है जहां अपराध करने के लिए बच्चों का प्रयोग किया जाता है।[38] कानून से संघर्षरत बच्चे किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2015 के सुरक्षात्मक छत्र के अंतर्गत आते हैं। चूंकि एक बच्चे को वयस्क अदालत और जेल प्रणाली के अधीन नहीं किया जा सकता है, इसलिए गिरोहों या समूहों द्वारा अपराध करने के लिए बच्चों को काम पर रखना एक आम बात रही है। दिलचस्प बात यह है कि इसे अपराध में लाने की सिफारिश भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 में भी की गई थी। ऐसे कृत्य को आपराधिक कृत्य बनाना, बच्चों को आपराधिक गतिविधियों में शामिल गिरोहों और समूहों का शिकार बनने से बचाने की दिशा में एक स्वागत योग्य कदम है।

बीएनएस में कुछ राज्य केंद्रित और राष्ट्रीय सुरक्षा से जुड़े अपराध शामिल किए गए हैं। जैसा कि पहले चर्चा की गई है, धारा 152 भारत की संप्रभुता, एकता और अखंडता को खतरे में डालने वाले कृत्यों को दंडित करती है।[39] विभिन्न राज्यों के संगठित अपराध रोकथाम कानूनों की तर्ज पर, बीएनएस

[33] मृत्यु दंड पर 2वीं रिपोर्ट, भारतीय विधि आयोग

[34] धारा 117(3), भारतीय न्याय संहिता 2023

[35] अनूप सुरेन्द्रनाथ, 'द बिल्स, इन पर्सपेक्टिव' द इंडियन एक्सप्रेस (नई दिल्ली, 12 अगस्त 2023)

[36] धारा 69, भारतीय न्याय संहिता 2023।

[37] नीतीका विश्वनाथ, 'महिलाओं की यौन स्वायत्तता पर नियंत्रण' द हिंदू (नई दिल्ली, 31 अगस्त 2023)।

[38] धारा 95, भारतीय न्याय संहिता 2023।

[39] महाराष्ट्र संगठित अपराध नियंत्रण अधिनियम (MACOCA), 1999, कर्नाटक संगठित अपराध नियंत्रण अधिनियम, 2000, आंध्र प्रदेश संगठित अपराध नियंत्रण अधिनियम, 2001, गुजरात आतंकवाद और संगठित अपराध नियंत्रण अधिनियम, 2015

ने भी 'संगठित अपराध' को अपराध में शामिल किया है।[40] हालांकि, बीएनएस में 'संगठित अपराध' का दायरा इस विषय से निपटने वाले किसी भी राज्य कानून से व्यापक है। यह अपने दायरे में ड्रग्स, हथियार, अवैध सामान आदि की तस्करी जैसी कई गतिविधियों को शामिल करता है। 'आर्थिक अपराध' को संगठित अपराध के दायरे में लाया गया है जिसे 'संगठित अपराध' से निपटने वाले किसी भी कानून में शामिल नहीं किया गया है। जहां तक इस अपराध की प्रयोज्यता का सवाल है, 'निरंतर गैरकानूनी गतिविधि' की अभिव्यक्ति के बारे में कुछ स्पष्टता की आवश्यकता हो सकती है। क्या सभी गैरकानूनी गतिविधियों को 1 जुलाई, 2024 से पहले स्थान दिया जाना चाहिए या उनमें से एक को बीएनएस की धारा 111 के लागू होने के लिए 1 जुलाई के बाद जारी रखा जाना चाहिए। गुजरात आतंकवाद एवं संगठित अपराध नियंत्रण अधिनियम, 2015 पर गुजरात राज्य बनाम संदीप ओमप्रकाश गुप्ता[41] मामले में सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय ऐसी स्थिति को समझने में उपयोगी साबित हो सकता है।

किसी आपराधिक कृत्य को सामान्य कानून से अलग करके उसे विशेष कानून के तहत अपराध बना देने की प्रथा बहुत आम है।[42] हालांकि, 'संगठित अपराध' और 'आतंकवादी कृत्य' दोनों ही अपराध विपरीत व्यवहार दर्शाते हैं, जहां सामान्य दंड कानून विशेष कानूनों से अपराधों को लेता है। इसका उद्देश्य, ऐसी आपराधिक गतिविधियों के खिलाफ सरकार के रुख का एक मजबूत संदेश देना हो सकता है, जो राष्ट्रीय सुरक्षा, अखंडता और अर्थव्यवस्था को गंभीर रूप से प्रभावित करती हैं। दोनों प्रावधान राज्य और विशेष कानूनों में अपने समकक्षों से आगे निकल गए हैं। ऐसे अपराधों को नियंत्रित करने वाली प्रक्रियात्मक व्यवस्था भी बीएनएस में अन्य दंडात्मक प्रावधानों पर लागू सामान्य प्रक्रियात्मक मानदंडों से भिन्न है।

दिलचस्प बात यह है कि 'संगठित अपराध' के अलावा बीएनएस 'छोटे संगठित अपराध' को भी शामिल करता है, जिसमें आम जनता द्वारा रोजाना किए जाने वाले आपराधिक कृत्य जैसे कि जेबकतरी, चोरी आदि शामिल हैं।

बीएनएस में एक महत्वपूर्ण जोड़ 'मॉब लिंचिंग' का अपराध है। हालांकि बीएनएस 'मॉब लिंचिंग' शब्द का इस्तेमाल नहीं करता है, लेकिन धारा 103 (2) की भावना और सार समान अर्थ व्यक्त करते हैं। धारा 103 (2) हत्या के अपराध के लिए सजा का प्रावधान करती है यदि यह पांच या अधिक व्यक्तियों के समूह द्वारा किया गया हो। इसलिए, आपराधिक कृत्य में शामिल व्यक्तियों की संख्या के आधार पर समूह दायित्व प्रावधानों की सूची में एक नई श्रेणी जोड़ी गई है। जो बात इसे अलग करती है वह है हत्या करने का आधार, जो पूरी तरह से पीड़ित की पहचान पर आधारित है। इसलिए, किसी व्यक्ति को हत्या के मामले के विपरीत मॉब लिंचिंग के तहत दंडित करने से पहले कुछ चीजों को स्पष्ट करने की आवश्यकता होती है। पहले कारावास या जुर्माने की वैकल्पिक सजा के स्थान पर, लापरवाही या जल्दबाजी में की गई किसी कार्रवाई से मृत्यु के सभी मामलों में जुर्माने के साथ अनिवार्य कारावास की अवधि का प्रावधान किया गया है।

यह कहना गलत नहीं होगा कि देश के हर हिस्से में 'स्नैचिंग' एक अभिशाप बन गई है। हालांकि हरियाणा, पंजाब और गुजरात जैसे कुछ राज्यों ने आईपीसी में संशोधन करके 'स्नैचिंग' को चोरी और डकैती के बीच एक अलग अपराध बना दिया है, लेकिन इस पर पूरे भारत में ध्यान देने की जरूरत है। इसे ध्यान में रखते हुए, बीएनएस में 'स्नैचिंग' को एक अपराध के रुप में सम्मिलित किया गया है, जिसे अब तक आईपीसी की धारा 356 या धारा 379 या धारा 392 के तहत निपटाया जाता था।[43] 'स्नैचिंग' के अपराध को चोरी और डकैती के बीच का अपराध माना जाता है, बीएनएस में 'स्नैचिंग' के लिए निर्धारित सजा 'चोरी' के अपराध के लिए निर्धारित सजा के समान है, केवल इतना बदलाव है कि 'स्नैचिंग' के लिए जुर्माने की सजा कारावास की सजा के अतिरिक्त है और 'चोरी' के अपराध के मामले में इसके विकल्प के रूप में नहीं है। इसके अलावा, 'स्नैचिंग' के कृत्य को ऊपर वर्णित राज्य संशोधनों के तहत कठोर दंड दिया गया है। अब यह देखना दिलचस्प होगा कि क्या ये राज्य ऐसे अपराध के लिए बीएनएस का पालन करना

[40] धारा 111, भारतीय न्याय संहिता 2023

[41] 2022 लाइवलॉ (एससी) 1031

[42] धारा 112, भारतीय न्याय संहिता 2023

[43] धारा 304, भारतीय न्याय संहिता 2023

जारी रखेंगे या पहले की तरह 'छीनने' के अपराध के लिए कठोर सजा का प्रावधान करने के लिए संशोधन लाएंगे।

इसके अलावा, संपत्ति के विरुद्ध अपराध के क्षेत्र में मोटर वाहन चोरी से निपटने के लिए विशिष्ट प्रावधान किए गए हैं। धारा 305, बीएनएस चोरी की चार उप-श्रेणियाँ निर्धारित करती है, जिसमें मोटर वाहन चोरी,[44] मोटर वाहन से चोरी,[45] पूजा स्थल से मूर्ति या प्रतीक की चोरी [46]और सरकारी या स्थानीय प्राधिकरण की संपत्ति की चोरी शामिल है।[47] इसके अलावा, चोरी के अपराध में दो महत्वपूर्ण बदलाव हुए हैं। पहला, चोरी के बार-बार अपराध करने पर पांच साल तक की सज़ा होगी और दूसरा, छोटी-मोटी चोरी करने पर पहली बार अपराध करने पर, जिसमें चोरी की गई संपत्ति का मूल्य पांच हजार रुपये तक है, सामुदायिक सेवा दी जाएगी।[48]

कुछ अन्य उल्लेखनीय परिवर्धन 'भारत में अपराध के लिए भारत के बाहर से उकसाना'[49] और 'भारत की संप्रभुता, एकता और अखंडता या सुरक्षा को खतरे में डालने वाली झूठी या भ्रामक जानकारी बनाना या प्रकाशित करना' के रूप में हैं।[50] 'भारत में अपराध के लिए भारत के बाहर से उकसाना' का अपराध सिंगापुर दंड संहिता, 1871 की धारा 108 बी से प्रेरित प्रतीत होता है।[51] 'झूठी या भ्रामक जानकारी बनाना या प्रकाशित करना' का अपराध फर्जी खबरों के खतरे को लक्षित करता है जो वर्तमान तकनीक की दुनिया में प्रकाश से भी तेज गति से फैलती है। यह अपराध उन झूठी या भ्रामक सूचनाओं को पूरा करता है जो भारत की एकता, संप्रभुता, अखंडता और सुरक्षा को खतरे में डालने की प्रवृत्ति रखती हैं।

न्यायिक निर्णयों को विधायी प्रभाव में शामिल करना:

बीएनएस की एक सराहनीय विशेषता यह है कि यह पिछले कुछ वर्षों में पारित सुप्रीम कोर्ट के कई महत्वपूर्ण फैसलों को विधायी प्रभाव देता है।[52] सुप्रीम कोर्ट द्वारा लोगों के अधिकारों और स्वतंत्रताओं को दी गई संविधान उन्मुख व्याख्या को कानून के पाठ में उचित रूप से मान्यता दी गई है। संहिता के उद्देश्यों और कारणों के कथन में संकेत के अनुसार बीएनएस को समकालीन संदर्भ के लिए प्रासंगिक बनाने का एक ईमानदार प्रयास किया गया है।

आपराधिक कानूनों में सबसे महत्वपूर्ण विकास में से एक मानसिक स्वास्थ्य सेवा अधिनियम, 2017 के अधिनियमन के बाद हुआ। यह अधिनियम आईपीसी की धारा 309 को पहले जिस तरह से समझा और लागू किया जाता था, उसमें उल्लेखनीय बदलाव लाया। इस प्रावधान की संवैधानिकता पर कई वर्षों से बहस चल रही है और न्यायपालिका द्वारा बार-बार दोहराया गया है कि यह प्रावधान असंवैधानिक है और भारत के संविधान का अनुच्छेद 21 अपने जीवन जीने के अधिकार के साथ-साथ अपने जीवन को समाप्त करने के अधिकार को भी समाहित करता है।[53] बीएनएस के अधिनियमन के साथ, प्रावधान को हटा दिया गया है और सुप्रीम कोर्ट की टिप्पणियों को आखिरकार कानून के पाठ में बदल दिया गया है।

बीएनएस ने *इंडिपेंडेंट थॉट बनाम यूनियन ऑफ इंडिया* के मामले में सुप्रीम कोर्ट के 2017 के फैसले को विधायी प्रभाव दिया है।[54]

[44] धारा 305(बी), भारतीय न्याय संहिता 2023

[45] धारा 305(सी), भारतीय न्याय संहिता 2023

[46] धारा 305 (डी), भारतीय न्याय संहिता 2023

[47] धारा 305 (ई), भारतीय न्याय संहिता 2023

[48] धारा 303, भारतीय न्याय संहिता 2023

[49] धारा 48, भारतीय न्याय संहिता 2023

[50] धारा 197 (1) (डी), भारतीय न्याय संहिता 2023

[51] दंड संहिता 1871 यहां उपलब्ध है: https://sso.agc.gov.sg/Act/PC1871

[52] जी.एस. बाजपेयी, 'नए विधेयक और आपराधिक कानून सुधारों के लिए एक सैद्धांतिक पाठ्यक्रम' द हिंदू (नई दिल्ली, 17 अगस्त 2023)

[53] प. Rathinam v. Union of India, 1994 SCC (3) 394

[54] (2017) 10 SCC 800

विवाहित महिला की सहमति की आयु अब 15 वर्ष के बजाय 18 वर्ष है।[55] इसलिए, कानून की स्थिति को यौन अपराधों से बच्चों के संरक्षण अधिनियम, 2012 के अनुरूप लाने के लिए कदम उठाया गया है।

तहसीन एस पूनावाला बनाम भारत संघ[56] के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने भीड़ द्वारा हत्या की बढ़ती घटनाओं पर चिंता व्यक्त की है। कानून के शासन द्वारा शासित सभ्य समाज में निजी नागरिकों द्वारा कानून को अपने हाथ में लेना और किसी व्यक्ति को किसी अपराध का दोषी मानकर 'न्याय' करना अस्वीकार्य है। बीएनएस ने गौरक्षकों द्वारा की जाने वाली हिंसा, बच्चों की चोरी आदि के ऐसे मामलों पर उचित प्रतिक्रिया दी है।

इसके अलावा, *नवतेज सिंह जौहर बनाम भारत संघ*[57] के मामले में सर्वोच्च न्यायालय के बहुचर्चित निर्णय को भी बीएनएस में शामिल किया गया है, जिसके तहत वयस्कों के बीच सहमति से यौन क्रियाकलापों को अपराध घोषित करने वाले प्रावधान को हटा दिया गया है। *जोसेफ शाइन बनाम भारत संघ*[58] के मामले में सर्वोच्च न्यायालय के एक अन्य महत्वपूर्ण निर्णय को भी बीएनएस में शामिल किया गया है, जिसमें व्याभिचार को अपराध को समाप्त घोषित किया गया था।

यह देखा जा सकता है कि बीएनएस का मसौदा तैयार करते समय सुप्रीम कोर्ट के प्रमुख फैसलों पर विचार किया गया और उन्हें अपनाया गया है। दिलचस्प बात यह है कि बीएनएस में *मिठू बनाम पंजाब राज्य*[59] के मामले में आईपीसी की धारा 303 को असंवैधानिक घोषित करने के लिए बताई गई कमियों को सुधारा गया है और अब आजीवन कारावास की सजा पाने वाले व्यक्ति द्वारा हत्या के अपराध के लिए मृत्युदंड के साथ-साथ वैकल्पिक सजा निर्धारित की गई है।[60]

लिंग तटस्थ प्रावधान: अधिक समावेशिता की ओर

बीएनएस ने विभिन्न अपराधों में लैंगिक तटस्थता लाने का सराहनीय प्रयास किया है, जो लैंगिक समानता और समावेशिता के विचार को बढ़ावा देता है।[61] 'हमला या आपराधिक बल का प्रयोग' और 'ताक-झांक' की श्रेणी के तहत दो अपराधों को अपराधी के दृष्टिकोण से लैंगिक तटस्थ बनाया गया है। प्रस्तावित परिवर्तन के साथ, अब 'महिला के कपड़े उतारने[62] के इरादे से उस पर हमला या आपराधिक बल का प्रयोग' और 'ताक-झांक'[63] जैसे अपराध पुरुष, महिला या ट्रांसजेंडर व्यक्ति द्वारा किए जा सकते हैं। 'किसी भी पुरुष' के संदर्भ को क्रमशः "जो कोई भी" शब्द से प्रतिस्थापित किया गया है।

इसके अलावा, पीड़ित के लिंग के संबंध में दो अपराधों को लिंग तटस्थ बनाया गया है। बीएनएस की धारा 96 किसी भी बच्चे की खरीद को अपराध बनाकर प्रावधान के दायरे को बढ़ाती है।[64] पहले आईपीसी में, केवल नाबालिग लड़की की खरीद दंडनीय अपराध थी।[65] इसके अलावा, लड़की या लड़के के आयात के मामले में लिंग तटस्थता लाई गई है। पहले यह प्रावधान केवल 21 वर्ष से कम उम्र की लड़की तक ही सीमित था, लेकिन प्रस्तावित बदलाव के साथ 18 वर्ष से कम उम्र के लड़के को भी आयात के ऐसे किसी भी कार्य से संरक्षण दिया गया है जिसे दंडनीय अपराध बनाया गया है।[66]

---

[55] Section 63, Exception 2, Bharatiya Nyaya Sanhita 2023

[56] (2018) 9 SCC 501

[57] 2018) 10 SCC 1

[58] (2019) 3 SCC 39

[59] AIR 1983 SC 473

[60] Section 104, Bharatiya Nyaya Sanhita 2023

[61] Kanav N. Sahgal, 'The BNS: A missed opportunity for gender inclusivity and LGBTQ+ rights', Deccan Herald (21 September 2023)

[62] Section 76, Bharatiya Nyaya Sanhita 2023

[63] Section 77, Bharatiya Nyaya Sanhita 2023

[64] Section 96, भारतीय न्याय संहिता 2023

[65] धारा 366ए, भारतीय दंड संहिता 1860

[66] धारा 141, भारतीय न्याय संहिता 2023

अपराधों को लिंग-तटस्थ बनाने की दिशा में प्रयास किए गए हैं। साथ ही, अन्य लिंग के व्यक्तियों को सुरक्षा प्रदान करने की अधिक आवश्यकता है। बीएनएस ने पहली बार धारा 2(10) में 'लिंग' की परिभाषा में ट्रांसजेंडर व्यक्तियों को जोड़कर समावेशिता लाई है।

लिंग तटस्थता के साथ, बीएनएस ने कई अपराधों में, विशेष रूप से अपहरण के अपराध[67] में, आयु समानता प्रदान करने में भी सफलता प्राप्त की है। अपहरण[68] में लड़की और लड़के के लिए अलग-अलग आयु मानदंड के पहले के मानक को बीएनएस में हटा दिया गया है। अब, 'बच्चा' शब्द का उपयोग अपहरण और भीख मांगने[69] के उद्देश्य से बच्चे को अगवा करने या अपंग बनाने के अपराध के लिए 18 वर्ष से कम आयु के किसी भी व्यक्ति को संदर्भित करने के लिए किया जाता है।

निष्कर्ष

सरकार ने प्रमुख आपराधिक कानूनों की समीक्षा करने में एक बड़ा कदम उठाया है। सितंबर, 2019 में शुरू हुआ यह कार्य और 2020 में आपराधिक कानूनों में सुधार के लिए समिति का गठन 25 दिसंबर 2023 को तीन नए आपराधिक कानूनों पर राष्ट्रपति की सहमति के साथ पूरा हो गया है। स्वतंत्र भारत में यह एक ऐतिहासिक घटना है। दंड कानून को उपनिवेशवाद से मुक्त करने के कार्य को 'औपनिवेशिक आपराधिक मूल्यों' से 'संविधान उन्मुख आपराधिक मूल्यों' के परिप्रेक्ष्य में बदलाव के रूप में समझा जाना चाहिए। इसका मतलब कभी भी मैकाले के बेहतरीन काम को पूरी तरह से खारिज करना नहीं था, बल्कि ऐसा लगता है कि इसे समकालीन घटनाक्रमों के लिए प्रासंगिक बनाने का प्रयास किया गया है। 'विक्टोरियन नैतिकता' की छाप वाले कई अपराधों को बीएनएस से हटा दिया गया है। संसद की स्थायी समिति द्वारा 'समलैंगिकता' और 'व्याभिचार' को फिर से अपराध बनाने की सिफ़ारिशें करने के बावजूद, सरकार ने 'विक्टोरियन नैतिकता' के बजाय 'संवैधानिक नैतिकता' को तरजीह दी और इन विक्टोरियन अवशेषों को क़ानून की किताब से हटा दिया। 'सामुदायिक सेवा' को सज़ा के रूप में शामिल करने का कदम 'निवारक' से 'सुधारात्मक' सज़ा के दृष्टिकोण में बदलाव को दर्शाता है जो ब्रिटिश राज का कभी उद्देश्य नहीं था। बीएनएस ने आईपीसी को अपने अधीन कर लिया और भारतीय संसद में भारतीयों द्वारा और भारतीयों के लिए पारित एक ऐसा कानून बन गया जो लोकतांत्रिक और संवैधानिक मूल्यों के अनुरूप है और कानून के शासन को कायम रखता है।

संदर्भ

1. अभिषेक सिंघवी, 'नए मसौदा संहिताओं पर व्यापक विचार-विमर्श की आवश्यकता है' हिंदुस्तान टाइम्स (नई दिल्ली, 17 अगस्त 2023)
2. अनूप सुरेंद्रनाथ, 'बिल, परिप्रेक्ष्य में' द इंडियन एक्सप्रेस (नई दिल्ली, 12 अगस्त 2023)
3. बिबेक देबरॉय, 'औपनिवेशिक विरासत को दूर करने के लिए एक महत्वपूर्ण कदम' हिंदुस्तान टाइम्स (नई दिल्ली, 14 अगस्त 2023)
4. जी.एस. बाजपेयी, 'नए विधेयक और आपराधिक कानून सुधारों के लिए एक सैद्धांतिक पाठ्यक्रम' द हिंदू (नई दिल्ली, 17 अगस्त 2023)
5. कनव एन. सहगल, 'बीएनएस: लैंगिक समावेशिता और एलजीबीटीक्यू+ अधिकारों के लिए एक छूटा अवसर', डेक्कन हेराल्ड (21 सितंबर 2023)
6. नीतिका विश्वनाथ, 'महिलाओं की यौन स्वायत्तता को नियंत्रित करना' द हिंदू (नई दिल्ली, 31 अगस्त 2023)
7. सिद्धार्थ लूथरा, 'नए कानून, वही व्यवस्था' द इंडियन एक्सप्रेस (नई दिल्ली, 23 अगस्त 2023)
8. ताहिर महमूद, 'इतिहास के आईने में आईपीसी' द ट्रिब्यून (नई दिल्ली, 14 अगस्त 2023)
9. यशोवर्धन आज़ाद, 'मॉब लिंचिंग से लड़ने के लिए पुलिस सुधार ज़रूरी' हिंदुस्तान टाइम्स (नई दिल्ली, 23 अगस्त 2023)

[67] धारा 361 और धारा 363ए, भारतीय दंड संहिता 1860

[68] धारा 137, भारतीय न्याय संहिता 2023

[69] धारा 139, भारतीय न्याय संहिता 2023

भारतीय कानूनों में गवाह संरक्षण की रूपरेखा

डॉ. के.पी. सिंह, भा.पु.से. (से.नि.)[1]

सार

अपराधियों के स्वतंत्र और निष्पक्ष परीक्षण को सुनिश्चित करने के लिए गवाहों की सुरक्षा आवश्यक है; गवाहों को किसी भी प्रकार की धमकियों और डराने-धमकाने से बचाने का दायित्व राज्य सरकार का है ताकि वे सच्चाई से गवाही दे सकें। यदि गवाह अदालत के सामने स्वतंत्र रूप से गवाही देने में असमर्थ हैं, तो परीक्षण व्यर्थ हो जाता है। भारतीय आपराधिक कानूनों और प्रक्रियाओं में यहां-वहां कुछ सतही प्रावधान हैं, जिनका उद्देश्य आपराधिक कार्यवाही में गवाहों और अन्य हितधारकों को सुरक्षा की गारंटी देना है। आपराधिक प्रक्रिया संहिता में व्यापक गवाह सुरक्षा योजना (WPS) प्रदान नहीं की गई थी; हालांकि अदालतों ने लगभग नियमित रूप से इस तरह के कार्यक्रमों पर जोर दिया है। हाल ही में, महेंद्र चावला और अन्य के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने एक व्यापक डब्ल्यूपीएस 2018 का ब्लू-प्रिंट दिया है, और राज्यों को अपने-अपने अधिकार क्षेत्र में एक उपयुक्त योजना तैयार करने को कहा है। भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 की धारा 398 भी यही अधिदेश है।

एक सार्थक गवाह सुरक्षा योजना में न केवल गवाहों को बल्कि उन व्यक्तियों की सुरक्षा भी शामिल होनी चाहिए जो गवाह के लिए आवश्यक हो; इसके अतिरिक्त, संपूर्ण आपराधिक कार्यवाही के दौरान और उसके बाद भी सुरक्षा उपलब्ध होनी चाहिए। शारीरिक सुरक्षा के अलावा, WPS में पहचान छिपाने और स्थानांतरण आदि जैसे कई उपाय शामिल होने चाहिए। सरकारों को योजना के कार्यान्वयन के लिए आवश्यक संसाधनों की व्यवस्था करने के लिए एक गवाह सुरक्षा कोष (WPF) स्थापित करने की आवश्यकता है। योजना में सुरक्षा के लिए आवेदन करने की विस्तृत प्रक्रिया निर्धारित की जानी चाहिए। आधुनिक राज्य को नैतिक और कानूनी दोनों रूप से अपराधियों के लिए निष्पक्ष सुनवाई सुनिश्चित करके अपने लोगों को न्याय की गारंटी देने के लिए स्वीकार किया जाता है।

मुख्य शब्द : मुख्य शब्द: गवाह, शत्रुतापूर्ण गवाह, झूठी गवाही, गवाह संरक्षण, गवाह संरक्षण योजना, पुनर्वास, पहचान की सुरक्षा।

[1] हरियाणा के पूर्व पुलिस महानिदेशक।

परिचय

सभ्य समाज में आपराधिक कार्यवाही के दौरान सच्चाई का पता लगाने के लिए गवाह एक अपरिहार्य मदद है। तदनुसार, दंड प्रक्रिया संहिता 1973 (Cr.PC)[2] की धारा 39 के अनुसार, देश के नागरिक अपराध और अपराधियों के बारे में पुलिस को जानकारी देने के लिए कानूनी और नैतिक रूप से उत्तरदायी हैं, जिसे भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता 2023 (BNSS)[3] में 33 के रूप में पुनः क्रमांकित किया गया है। यह एक तथ्य है कि पुलिस जांच में सहायता के लिए स्वतंत्र गवाह शायद ही उपलब्ध हों; यह माना जाता है कि जनता द्वारा पुलिस को असहयोग बिना कारण नहीं है; गवाहों को, विशेष रूप से जघन्य अपराधों में, अपराधियों द्वारा धमकाया जाता है और यहां तक कि शारीरिक नुकसान की धमकी का भी सामना करना पड़ता है।

बीएनएसएस के लागू होने से पहले, गैरकानूनी गतिविधि रोकथाम अधिनियम[4] (यूएपीए) जैसे कुछ विशेष कानूनों को छोड़कर, आपराधिक प्रक्रियाओं में नाम के अनरूप डब्ल्यूपीएस प्रदान नहीं किया गया था। अब, बीएनएसएस की धारा 398 में यह अनिवार्य किया गया है कि राज्य सरकारों को अपने-अपने अधिकार क्षेत्र में गवाहों की सुरक्षा के लिए एक योजना तैयार करनी चाहिए। इसी पृष्ठभूमि में वर्तमान लेख की परिकल्पना "गवाह", "शत्रु गवाह" और "झूठी गवाही" जैसी अवधारणाओं को सही कानूनी परिप्रेक्ष्य में रखने और भारतीय संदर्भ में एक सार्थक और व्यावहारिक डब्ल्यूपीएस के तत्वों पर चर्चा करने के उद्देश्य से की गई है।

गवाह

गवाह वह व्यक्ति होता है जो शपथ और प्रतिज्ञान के बाद न्यायालय में गवाही देता है। भारतीय साक्ष्य अधिनियम[5] (आईईए) की धारा 118, जिसे भारतीय साक्ष्य अधिनियम 2023[6] (बीएसए) में 124 के रूप में पुनः क्रमांकित किया गया है, सक्षम गवाह के लिए पात्रता मानदंड प्रदान करती है; न्यायालय गवाह की योग्यता की जांच करने के लिए प्रश्न पूछ सकता है।

मामले की सच्चाई जानने और आरोपी व्यक्ति के दोषी होने या न होने का फैसला सुनाने के लिए गवाह का बयान अदालत के लिए बहुत महत्वपूर्ण होता है। एक गवाह बहुत कमज़ोर व्यक्ति होता है जो बयान देने के लिए अदालत में आने का कष्ट उठाता है; वह खुद को जिरह के लिए प्रस्तुत करता है और इस आधार पर सवालों के जवाब देने से इनकार नहीं कर सकता कि जवाब उसे दोषी ठहराएगा; वह विपरीत पक्ष की नाराज़गी का शिकार होता है और न्याय के लिए अपनी जान जोखिम में डालता है। इसलिए, एक गवाह आपराधिक कार्यवाही के दौरान सभी शिष्टाचार और सम्मान का हकदार है।

शत्रुतापूर्ण गवाह

शपथ अधिनियम, 1969[7] की धारा 8 में प्रावधान है कि गवाह कानूनी रूप से विषय पर सच बताने के लिए बाध्य है। एक विशेषज्ञ संबंधित क्षेत्र में अपने कौशल और योग्यता के आधार पर अदालत के समक्ष गवाही देता है।

एक शत्रुतापूर्ण गवाह वह होता है जिसका जांच के दौरान पुलिस को दिया गया बयान, अदालत के समक्ष उसके बयान से मेल नहीं खाता; हालांकि, यह एक वास्तविकता है कि विभिन्न कारणों से, गवाह नियमित रूप से अदालतों में पक्षद्रोही हो रहे हैं, विशेष रूप से जघन्य अपराध के मामलों में ।

भारत में साक्ष्य के कानून में 'शत्रुतापूर्ण गवाह' एक परिभाषित अवधारणा नहीं है; लेकिन यह अंग्रेजी कानून में जाना जाता है। शत्रुतापूर्ण गवाह द्वारा दिए गए बयान को कूड़ेदान में नहीं फेंका जा सकता; अदालत इस बात पर विचार कर सकती है और

[2] दंड प्रक्रिया संहिता, 1973, अधिनियम संख्या 2, 1974

[3] अधिनियम संख्या 46, 2023

[4] अधिनियम संख्या 37, 1967

[5] अधिनियम संख्या 1, 1872

[6] अधिनियम संख्या 47, 2023

[7] अधिनियम संख्या 44, 1969

तय कर सकती है कि बयान का मिलान कितना विश्वसनीय है। साक्ष्य कानून किसी पक्ष को पीठासीन अधिकारी की अनुमति से शत्रुतापूर्ण गवाह से कोई भी प्रश्न पूछने का अधिकार देता है ताकि उसकी विश्वसनीयता पर सवाल उठाया जा सके।

किसी गवाह के मुकरने के आचरण को समझने के लिए, यह जानना ज़रूरी है कि किन परिस्थितियों में गवाह ने उस पक्ष के खिलाफ़ गवाही दी है जिसने उसे गवाही के लिए बुलाया था। बीएनएसएस की धारा 180 (3) में शामिल प्रावधान पुलिस अधिकारी को जांच के दौरान गवाहों के बयान लेने का अधिकार देते हैं; उन्हें गवाह की सत्यता की जांच करने के लिए संदर्भ बिंदु के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। यदि कोई गवाह पुलिस द्वारा दर्ज किए गए पहले के बयान से अलग हो जाता है, तो उसे मुकरने वाला घोषित किया जा सकता है। भारत जैसे देश में, जहाँ पुलिस अभियोजन पक्ष की कहानी को साबित करने के लिए धारा 161 सीआरपीसी (180 बीएनएसएस) के तहत झूठ बोलने वाले बयान दर्ज करने के लिए बदनाम है; उस बयान को देने वाले की सत्यता स्थापित करने के लिए संदर्भ चिह्न के रूप में मानना वांछनीय नहीं है।

किसी गवाह को पक्षद्रोही घोषित करने से पहले कई अन्य जमीनी हकीकतों को भी ध्यान में रखना चाहिए; एक अनिच्छुक गवाह, अगर किसी पक्ष द्वारा गवाही देने के लिए बुलाया जाता है, तो अक्सर पक्षद्रोही हो सकता है; कभी-कभी, गवाह अदालत के डराने वाले माहौल में बोलने से कतराते हैं। कई मामलों में, जहाँ अपराधी आर्थिक रूप से मजबूत और सामाजिक रूप से प्रभावशाली होते हैं, वहां सरकारी गवाहों को जान से खत्म करने सहित कई धमकियों का सामना करना पड़ता है, और उन्हें सच बोलने से मना करने के लिए मजबूर किया जाता है।[8] कभी-कभी, लंबे समय तक चलने वाली सुनवाई और अदालत का अप्रिय माहौल गवाहों को कार्यवाही के दौरान असहयोगी रवैया अपनाने के लिए मजबूर करता है।[9]

भारतीय कानून में गवाह सुरक्षा योजना

पुलिस जांच में मुखबिर, शिकायतकर्ता या गवाह के रूप में नागरिक ही भाग लेते हैं और उन्हें न्यायालय परिसर में, न्यायालय के बाहर, न्यायालय की कार्यवाही के दौरान तथा मुकदमा समाप्त होने के बाद भी सुरक्षा पाने का अधिकार है।

(i) न्यायालय परिसर में सुरक्षा

अदालतों में उपस्थित होने वाले गवाहों को सुविधाओं की कमी का सामना करना पड़ता है; शायद ही कोई ऐसा स्थान हो जहाँ गवाह सम्मानपूर्वक बैठ सके; न्यायालय कक्ष तक उसे ले जाने वाला कोई नहीं होता। शौचालय की सुविधाएँ अपर्याप्त हैं, पीने का पानी और भोजन तथा जलपान जैसी अन्य सुविधाएँ उपलब्ध नहीं हैं और दैनिक भरण-पोषण भत्ते व्यय को पूरा करने के लिए अपर्याप्त हैं। यही कारण हैं कि स्वतंत्र गवाह पुलिस की मदद करने से कतराते हैं और आमतौर पर वे लोग ही पुलिस की मदद करने के लिए सहमत होते हैं जिनका कोई निजी स्वार्थ होता है।

(ii) न्यायालय कक्ष में सुरक्षा

सामान्यतः गवाहों को न्यायालय की कार्यवाही के दौरान उत्पीड़न और अपमान का सामना करना पड़ता है; जबकि, वे पीठासीन अधिकारी से सभी प्रकार की सुरक्षा और संरक्षण के हकदार हैं, जिन्होंने उन्हें अपने समक्ष लंबित मामले की सच्चाई जानने में मदद करने के लिए, आगे आने के लिए बुलाया है। इसलिए, न्यायाधीश का यह दायित्व है कि वे देखें कि गवाहों को विपक्षी पक्ष द्वारा धमकाया न जाए और वे न्यायालय कक्ष में सहज महसूस करें।[10]

यह सुनिश्चित करने के लिए कि कोई गवाह सत्यता से गवाही दे और साथ ही उसकी गरिमा और सम्मान की रक्षा के लिए, बीएसए की धारा 137 में यह प्रावधान किया गया है कि यदि किसी गवाह द्वारा दिया गया उत्तर उसे दोषी ठहराता है, तो उसका उपयोग आपराधिक कार्यवाही शुरू करने के लिए नहीं किया जा सकता है, सिवाय झूठे बयान देने के लिए। बीएसए की धारा 154 के प्रावधानों के तहत, पीठासीन अधिकारी विपक्षी वकील को कोई भी अभद्र या निंदनीय प्रश्न पूछने से

[8] राष्ट्रीय पुलिस आयोग, भारत सरकार की चौथी रिपोर्ट, जून 1980, पृष्ठ 15016 से उद्धत।

[9] डॉ. के.पी. सिंह द्वारा लिखित, कल्पना प्रिंटिंग हाउस, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित, डॉ. के.पी. सिंह द्वारा लिखित, गवाह संरक्षण की तत्काल आवश्यकता नामक मोनोग्राफ के लिए शंकर सेन, वरिष्ठ फेलो, सामाजिक विज्ञान संस्थान, नई दिल्ली और पूर्व निदेशक, राष्ट्रीय पुलिस अकादमी, हैदराबाद द्वारा लिखित प्रस्तावना।

[10] मलीमठ समिति की रिपोर्ट, खंड I, आपराधिक न्याय प्रणाली में सुधार पर एक समिति, गृह मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा गठित, मार्च 2003, संख्या 137।

रोक सकता है; न्यायालय का यह भी कर्तव्य है कि वह ऐसे प्रश्नों को अस्वीकार करे जो गवाह को अपमानित या परेशान कर सकते हैं, या जो आपत्तिजनक हैं। इन सभी सुरक्षात्मक प्रावधानों के बावजूद, यह सच है कि गवाह न्यायालय कक्ष के वातावरण में सहज महसूस नहीं करते हैं।

(iii) न्यायालय के बाहर सुरक्षा

जहीरा शेख एवं अन्य बनाम गुजरात राज्य मामले[11] में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा है कि गवाहों को असामाजिक तत्वों से सुरक्षा की आवश्यकता है। राष्ट्रीय पुलिस आयोग ने अपनी चौथी रिपोर्ट (1980) में विपक्षी पक्ष द्वारा गवाहों के साथ छेड़छाड़ को रोकने की आवश्यकता जताई है। आयोग ने अपनी 14वीं रिपोर्ट (1958), 154वीं रिपोर्ट (1996), 178वीं रिपोर्ट (2001) और 198वीं रिपोर्ट (2006) में गवाह सुरक्षा के मुद्दे के विभिन्न आयामों पर चर्चा की है और पहचान को गोपनीय रखने सहित सिफारिशें की हैं। विधि आयोग की सिफारिशों के अनुपालन में, आईपीसी में एक नई धारा 195ए डाली गई, जिसके तहत गवाहों को आपराधिक रूप से डराने-धमकाने पर 7 साल के कारावास का दंड है। गवाहों की सुरक्षा से संबंधित प्रावधानों का उल्लेख कुछ विशेष कानूनों में भी मिलता है।

किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम 2015[12] में यह निर्धारित किया गया है कि बच्चों के अनुकूल विशेष न्यायालय कक्ष स्थापित किए जाएंगे ताकि न्यायालय में उपस्थित होने वाले बच्चे पारंपरिक न्यायालय के माहौल में भयभीत न हों; कार्यवाही भी अनौपचारिक तरीके से की जानी चाहिए। POCSO अधिनियम 2012[13] में भी बच्चों के अनुकूल प्रक्रियाएं निर्धारित की गई हैं

भ्रष्ट लोक सेवकों के खिलाफ सूचना देने वाले मुखबिरों की सुरक्षा के लिए व्हिसल ब्लोअर संरक्षण अधिनियम 2014[14] लागू किया गया था; वर्ष 2016 में, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम 1989[16] में "पीड़ितों और गवाहों के अधिकार"[15] शीर्षक से एक नया अध्याय IVA जोड़ा गया था। अधिनियम के अनुसार स्थापित विशेष अदालतों को यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि गवाहों को स्थानांतरण, यात्रा और रखरखाव भत्ते और सामाजिक-आर्थिक पुनर्वास के लिए पैकेज सहित पूर्ण सुरक्षा मिले।

यूएपीए (supra) की धारा 44 गवाहों की पहचान छिपाने, स्थानांतरण और अन्य उपायों से संबंधित प्रावधानों सहित एक व्यापक डब्ल्यूपीएस प्रदान करती है: राष्ट्रीय जांच एजेंसी अधिनियम, 2008 (एनआईए अधिनियम)[17] की धारा 17 में भी इसी तरह के प्रावधान हैं। इन दोनों कानूनों के प्रावधानों के तहत, सरकारी वकील (पीपी) अदालत से, गवाह जिसे धमकी दी गई है, की सुरक्षा के लिए उपयुक्त उपाय करने का अनुरोध कर सकता है: सरकारी वकील अदालत से अनुपस्थिति में मुकदमा चलाने का अनुरोध भी कर सकता है।

गवाह संरक्षण योजना, 2018

महेंद्र चावला एवं अन्य बनाम भारत सरकार एवं अन्य मामले में[18], बलात्कार के दोषी आसाराम बापू के खिलाफ गवाही देने की हिम्मत करने पर 3 गवाहों की हत्या कर दी गई थी और एक अन्य गवाह महेंद्र चावला जानलेवा हमले में बच गया था। महेंद्र चावला ने 4 अन्य लोगों के साथ मिलकर सुप्रीम कोर्ट में सुरक्षा के लिए आवेदन किया था। सुनवाई के दौरान सुप्रीम कोर्ट ने आवेदन को जनहित याचिका (पीआईएल) में बदल दिया। परिणामस्वरूप, केंद्र सरकार ने WPS 2018 तैयार किया और इसे सर्वोच्च न्यायालय से मंजूरी दिलाई। इस योजना

[11] (2004) 4 एससीसी 158

[12] अधिनियम संख्या 2, 2016

[13] लैंगिक अपराधों से बालकों का संरक्षण अधिनियम 2012" अधिनियम संख्या 32, 2012

[14] अधिनियम संख्या 17, 2014

[15] [अधिनियम 1, 2016 की धारा 11 द्वारा (26-1-2016 से प्रभावी)]

[16] अधिनियम संख्या 13, 1989

[17] अधिनियम संख्या 34, 2008

[18] [WP (आपराधिक) 156, 2016; AIR 2018 SC (SUPP) 2561]

को संविधान के अनुच्छेद 141/142 के तहत इस विषय पर सर्वोच्च न्यायालय द्वारा कानून घोषित किया गया, जब तक कि उपयुक्त कानून नहीं बन जाता।

WPS, 2018 के प्रावधानों के अनुसार, 7 वर्ष से अधिक कारावास, मृत्युदंड और आजीवन कारावास से दंडनीय अपराधों के सभी गवाह इस योजना के तहत सुरक्षा पाने के हकदार हैं। इसके अतिरिक्त, आईपीसी की धारा 354, 354 ए से डी और 509 में परिभाषित महिलाओं के विरुद्ध अपराध के सभी मामलों में अदालत में गवाही देने आने वाले व्यक्ति भी WPS, 2018 के तहत सुरक्षा का लाभ प्राप्त कर सकते हैं। जिला और सत्र न्यायाधीश सक्षम प्राधिकारी हैं और जिले की अभियोजन एजेंसी के प्रमुख को गवाह की सुरक्षा के मामलों पर निर्णय लेने के लिए प्राधिकरण के सदस्य सचिव के रूप में नामित किया गया है। जिले के पुलिस अधीक्षक गवाह के संबंध में एक खतरा विश्लेषण रिपोर्ट तैयार करने और इसे सक्षम प्राधिकारी को प्रस्तुत करने के लिए जिम्मेदार हैं। सुरक्षा के लिए आवेदन धमकी दिए गए गवाह या उसकी ओर से उसके परिवार के सदस्यों, वकील, मामले के जांच अधिकारी, संबंधित थाने के प्रभारी अधिकारी, संबंधित जेल अधीक्षक सहित किसी अन्य व्यक्ति द्वारा निर्धारित प्रपत्र में दायर किया जा सकता है। गवाह संरक्षण के लिए अंतिम आदेश सक्षम प्राधिकारी द्वारा पारित किया जाएगा। प्रत्येक राज्य और केंद्र शासित प्रदेश में एक गवाह संरक्षण प्रकोष्ठ का गठन किया जाएगा या केंद्रीय पुलिस एजेंसी डब्ल्यूपीएस को लागू करने के लिए जिम्मेदार होगी।

प्रभावी और सार्थक सुरक्षा प्रदान करने के लिए, धमकी दिए गए गवाहों को खतरे की गंभीरता के आधार पर 3 श्रेणियों में वर्गीकृत किया जाना है; पहली श्रेणी में वे गवाह शामिल हैं जिन्हें जांच, परीक्षण या उसके बाद अपने या अपने परिवार के सदस्यों के जीवन को खतरा होने का खतरा है; प्रतिष्ठा या संपत्ति की सुरक्षा को नुकसान पहुंचाने की धमकी झेलने वाले लोग दूसरी श्रेणी में शामिल हैं। गवाहों की तीसरी श्रेणी में वे लोग शामिल हैं जिन्हें केवल मध्यम उत्पीड़न और धमकी का सामना करना पड़ता है।

राज्य गवाह संरक्षण कोष, जिसे योजना के समुचित कार्यान्वयन के लिए वित्तीय संसाधनों की व्यवस्था करने के लिए स्थापित किया जाना है, में राज्य द्वारा बजटीय आवंटन से प्राप्त धनराशि, न्यायालयों द्वारा लगाए गए लागत की रसीद, परोपकारी संस्थाओं/धर्मार्थ संस्थाओं द्वारा दान/अंशदान, तथा कॉर्पोरेट सामाजिक उत्तरदायित्व के कारण प्राप्त अंशदान शामिल होंगे।

WPS, 2018 के कार्यान्वयन के लिए विस्तृत दिशा-निर्देश निर्धारित किए गए हैं; इसमें पहचान छुपाना, सुरक्षा, निवास स्थान के आसपास गश्त, निवास का स्थानांतरण, विशेष अदालत परिसर और दिन-प्रतिदिन की सुनवाई आदि जैसे उपाय शामिल हो सकते हैं।

कुछ मामलों में गवाहों, शारीरिक नुकसान के प्रयास को विफल करने के लिए उनके परिवार के सदस्यों और अन्य हितधारकों की पहचान छिपाना महत्वपूर्ण हो जाता है। सक्षम प्राधिकारी को कोई भी संरक्षण आदेश पारित करने का अधिकार है। नई पहचान प्रदान करने में नया नाम और माता-पिता का नाम बताना, पेशा बदलना और सहायक दस्तावेज प्रदान करना शामिल हो सकता है ताकि सरकारी एजेंसियां उन्हें स्वीकार करें। यह स्पष्ट किया जाता है कि दी गई नई पहचान व्यक्ति को मौजूदा शैक्षिक, पेशेवर और संपत्ति के अधिकारों से वंचित नहीं करेगी।

निवास का स्थानांतरण एक अन्य उपाय है जो WPS, 2018 के तहत सुरक्षा के लिए निर्धारित है; सक्षम प्राधिकारी, जिला पुलिस अधीक्षक की रिपोर्ट और व्यक्ति द्वारा किए गए अनुरोध पर विचार करते हुए आवश्यक आदेश पारित करने में सक्षम है। WPS, 2018 के तहत गवाह संरक्षण से संबंधित रिकॉर्ड और पूरी कार्यवाही गोपनीय है और अंतिम अपील के निपटान के एक वर्ष बाद रिकॉर्ड को नष्ट किया जा सकता है। हालाँकि, सॉफ्ट स्कैन की गई प्रतियों को संरक्षित किया जाना है।

यदि सुरक्षा के लिए किया गया अनुरोध झूठा पाया जाता है, तो गृह विभाग SWPF से किए गए व्यय की वसूली के लिए कार्यवाही शुरू कर सकता है। सक्षम प्राधिकारी या पुलिस द्वारा दिए गए सुरक्षा आदेश से व्यथित पक्ष ऐसे आदेश के पारित होने के 15 दिनों के भीतर समीक्षा आवेदन दायर कर सकता है।

WPS, 2018 एक विस्तृत और व्यापक योजना है; हालाँकि, इसमें बड़ी खामी है, क्योंकि इसमें अदालती कार्यवाही समाप्त होने के बाद गवाहों की सुरक्षा के बारे में कुछ भी नहीं बताया गया है। इसके अलावा, राज्य सरकारों द्वारा योजना के उचित कार्यान्वयन के लिए विस्तृत दिशा-निर्देश तैयार नहीं किए गए हैं। इसके अलावा, पहचान छिपाने और स्थानांतरण आदि से

संबंधित प्रावधानों को लागू करने में व्यावहारिक कठिनाइयों का जमीनी स्तर पर परीक्षण किया जाना बाकी है।

अतिरिक्त उपाय

गवाहों की सुरक्षा सैद्धांतिक अवधारणाओं और विचारों की बजाय अनुभव, प्रक्रियाओं और विवरणों का विषय है। समस्या का कोई भी समाधान सुझाने से पहले भारतीय सामाजिक-आर्थिक स्थितियों और राजनीतिक जमीनी हकीकतों को उचित महत्व दिया जाना चाहिए। WPS, 2018 के तहत निर्धारित सुरक्षा के साथ-साथ निम्नलिखित अतिरिक्त उपाय गवाह सुरक्षा का एक पूरा पैकेज प्रदान कर सकते हैं:

1. महत्वपूर्ण मामलों में, जांच के दौरान बीएनएसएस की धारा 183 (सीआरपीसी की धारा 164) के तहत धमकी दिए गए गवाहों के बयान जल्द से जल्द दर्ज किए जाने चाहिए।
2. बीएनएसएस की धारा 126 (सीआरपीसी की धारा 107) के तहत धमकी देने वाले से भारी रकम का सुरक्षा बांड भरवाया जा सकता है।
3. जांच पूरी करके जल्द से जल्द अंतिम रिपोर्ट अदालत में पेश की जानी चाहिए। धमकी दिए गए गवाहों को पुलिस द्वारा जांच के दौरान मजिस्ट्रेट के सामने लाया जा सकता है ताकि धारा 183(6) बीएनएसएस के तहत उनके बयान दर्ज किए जा सकें । इसमें यह प्रावधान है कि मजिस्ट्रेट 10 साल से अधिक कारावास, आजीवन कारावास या मृत्युदंड से दंडनीय अपराधों के मामलों में ऐसे गवाहों के बयान दर्ज करेगा।
4. धमकी दिए गए गवाहों के बयान को परीक्षण के दौरान जल्द से जल्द अवसर उपलब्ध होने पर दर्ज किया जा सकता है।
5. जहां भी आवश्यक हो, धमकी देने वाले के खिलाफ भारतीय दंड संहिता की धारा 232 (आईपीसी की धारा 195ए) के प्रावधानों का इस्तेमाल किया जाना चाहिए।
6. यदि धमकी देने वाला व्यक्ति जमानत पर है, तो उसकी जमानत रद्द करने के लिए आवेदन बिना समय गंवाए पेश किया जाना चाहिए।
7. धमकी दिए गए गवाहों को हथियार चलाने का प्रशिक्षण दिया जा सकता है और राज्य सरकार उन्हें राज्य शस्त्रागार से उधार पर हथियार उपलब्ध करा सकती है।
8. जहां गवाहों को विपरीत पक्ष से खतरा हो, वहां बयान दर्ज करने के लिए वीडियो-कॉन्फ्रेंसिंग का इस्तेमाल किया जा सकता है।
9. सुरक्षित स्थान पर दिन-प्रतिदिन की कार्यवाही सुनिश्चित की जा सकती है।
10. जमानत देने से पहले अदालत द्वारा अभियुक्तों से भारी राशि की जमानत और जमानत बांड जमा करने के लिए कहा जा सकता है।
11. सजा के बाद किसी भी तरह की धमकी की संभावना से बचने के लिए अंतिम सजा आदेश में भारतीय दंड संहिता की धारा 125 के तहत भारी राशि के सुरक्षा बांड पर जोर दिया जा सकता है।
12. ऑडियो-वीडियो इलेक्ट्रॉनिक साधनों का उपयोग उन अपराधियों के खिलाफ कार्यवाही करने के लिए किया जा सकता है जो गवाहों को उनके जेल से बाहर निकलने से रोकने के लिए उन्हें धमकाने में संलिप्त पाए जाते हैं।

BNSS के अंतर्गत WPS

नये अधिनियमित प्रक्रियात्मक कोड (बीएनएसएस) के अन्तर्गत दो प्रावधान WP के विषय को स्पष्ट करते हैं। बीएनएसएस की धारा 216 में यह निर्धारित किया गया है कि गवाह सहित कोई भी व्यक्ति बीएनएस की धारा 232 के तहत शिकायत दर्ज करने के लिए सक्षम है, यदि किसी गवाह को विपरीत पक्ष से कोई धमकी या दबाव का सामना करना पड़ता है। बीएनएसएस की धारा 398 में यह निर्धारित किया गया है कि राज्य गवाहों की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए अपने-अपने अधिकार क्षेत्र में एक डब्ल्यूपीएस तैयार करेंगे।

निष्कर्ष

यह एक कठोर वास्तविकता है कि न्याय के लिए अदालतों में जाने वाले गवाहों को विभिन्न प्रकार की धमकियों, उत्पीड़न और जान से मारने तक की धमकियों का सामना करना पड़ता है। गवाह मुकदमे की कार्यवाही में सम्माननीय होते हैं । वे आपराधिक कार्यवाही के दौरान अपने लिए नहीं बल्कि मामले की सच्चाई तक पहुँचने और उसके समक्ष उपस्थित पक्षों को न्याय दिलाने में अदालत की सहायता करने के लिए गवाही देते हैं। अपने लोगों के लिए न्याय सुनिश्चित करना राज्यों के

अस्तित्व का आधार है। इसलिए, सरकार का सबसे महत्वपूर्ण कर्तव्य है कि वह न केवल अदालत कक्ष के बाहर और अंदर बल्कि मुकदमे के समापन के बाद भी गवाहों को सुरक्षा की गारंटी दे, जब तक कि खतरा बना रहे। WPS, 2018 और इस लेख में सुझाए गए अतिरिक्त उपाय राज्यों को अपने संबंधित अधिकार क्षेत्र में गवाहों की सुरक्षा के लिए उपयुक्त योजना तैयार करने और अधिसूचित करने के लिए पर्याप्त आधार सामग्री प्रदान करते हैं।

भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता में जांच और विचारण रूपरेखा

डॉ. मनोज कुमार शर्मा*

सार

भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 (2023 की अधिनियम संख्या 46) ने आपराधिक प्रक्रिया कानून में विभिन्न संशोधन पेश किए हैं, जिसमें प्रारंभिक जांच, आरोप तय करना, डिस्चार्ज आवेदन, निर्णय सुनाना, दलील सौदेबाजी आदि के लिए समय-सीमा निर्धारित करके त्वरित सुनवाई के प्रावधान शामिल हैं। जीरो एफआईआर, प्रारंभिक जांच, ई-एफआईआर, दया याचिकाओं का समयबद्ध निपटान, ऑडियो वीडियो इलेक्ट्रॉनिक साधनों का व्यापक उपयोग, कुछ मामलों में अपराध स्थल की अनिवार्य फोरेंसिक जांच के संबंध में विशिष्ट प्रावधान डाले गए हैं। इसके अतिरिक्त, घोषित अपराधियों के मामलों से निपटने, संपत्ति के त्वरित निपटान, आपराधिक गतिविधियों से अर्जित संपत्ति की कुर्की और जब्ती आदि के लिए नए और अभिनव प्रावधान डाले गए हैं। इसके अलावा, मजिस्ट्रेट के लिए शिकायतों और याचिकाओं के संबंध में आपराधिक प्रक्रिया में संशोधन किए गए हैं और झूठी एफआईआर के खिलाफ लोक सेवकों की सुरक्षा के लिए भी संशोधन किए गए हैं। रिमांड प्रावधानों, परीक्षण, विचाराधीन कैदियों को जमानत आदि के संबंध में भी महत्वपूर्ण संशोधन किए गए हैं। प्रक्रियात्मक कानून में संशोधन वास्तव में एक स्वागत योग्य और बहुत ज़रूरी कदम है, लेकिन उनकी प्रभावशीलता अभी भी देखी जानी बाकी है। यह शोध पत्र नए आपराधिक प्रक्रियात्मक कानून में किए गए संशोधनों का विश्लेषण करने और दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 में निहित प्रावधानों के साथ उनकी तुलना करने का एक प्रयास है। इस शोध पत्र के उद्देश्य के लिए, तुलनात्मक पद्धति के साथ अनुसंधान की सैद्धांतिक पद्धति का उपयोग किया गया है।

मुख्य शब्द : बीएनएसएस, जांच, विचारण, एफआईआर, कोर्ट, संहिता, सीआरपीसी, प्रारंभिक जांच, संज्ञेय अपराध, संज्ञान, पूर्व-संज्ञान।

* एसोसिएट प्रोफेसर, लॉ, राजीव गांधी यूनिवर्सिटी ऑफ लॉ, पटियाला

परिचय

तीन नए आपराधिक कानूनों[2] ने हमारे देश की आपराधिक न्याय प्रणाली में दूरगामी परिणामों वाले विभिन्न महत्वपूर्ण सुधारों की शुरुआत की है। विभिन्न उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए, इन सुधारों को पेश किया गया है, जिनमें आपराधिक कानूनों से औपनिवेशिकता की छाया को हटाना, आपराधिक कानूनों को संवैधानिक न्यायालयों के निर्णयों के अनुरूप बनाना, समकालीन आवश्यकताओं के अनुसार कानूनों में संशोधन करना और नए प्रावधान जोड़ना, कानूनों को यथासंभव लिंग-विहीन बनाना, एक महत्वपूर्ण हितधारक के रूप में पीड़ित के अधिकारों और उनकी स्थिति को मजबूत करना और त्वरित सुनवाई के अधिकार को प्रभावी बनाने की प्रक्रिया में तेजी लाना शामिल है।

इस लेख में भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 (जिसे आगे बीएनएसएस कहा जाएगा) द्वारा जांच और विचारण से संबंधित महत्वपूर्ण संशोधनों का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है।

जाँच पड़ताल

निष्पक्ष जांच भी आपराधिक कानून[3] का एक महत्वपूर्ण पहलू है और यह व्यक्तिगत स्वतंत्रता[4] के अधिकार का हिस्सा है। जैसा कि हम समझते हैं, जांच एफआईआर दर्ज[5] होने के बाद शुरू होती है और धारा 193, बीएनएसएस (सीआरपीसी की धारा 173) के तहत चार्जशीट या चालान[6] दाखिल करने के साथ समाप्त होती है।[7]

बीएनएसएस का अध्याय XIII (धारा 173-196) जांच से संबंधित है, यानी पुलिस को सूचना देना, जांच शुरू करना, प्रक्रिया और जांच पूरी करना। दंड प्रक्रिया संहिता (अध्याय XII, धारा 154-176) और बीएनएसएस के अध्याय XIII (धारा 173-196) के बीच तुलना से पता चलता है कि बीएनएसएस ने इस अध्याय में कई संशोधन पेश किए हैं।

ई-एफआईआर

सीआरपीसी की धारा 154 को फोन या ईमेल के माध्यम से एफआईआर दर्ज करने के लिए डिज़ाइन नहीं किया गया था। हालाँकि, संचार के साधनों में उन्नति के कारण, धारा 154 (1) को संवैधानिक न्यायालयों द्वारा उदार बनाया गया था। तदनुसार, न्यायालयों ने फोन संदेश पर एफआईआर दर्ज करने पर विचार-विमर्श किया, यदि ऐसी सूचना किसी संज्ञेय अपराध के होने का खुलासा करती है।[8] यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि एक अस्पष्ट और समझ से बाहर टेलीफोन संदेश पर एफआईआर दर्ज नहीं किया जा सकता क्योंकि ऐसा संदेश किसी संज्ञेय अपराध के होने का खुलासा नहीं करता है।[9]

हालांकि, सीआरपीसी में ऐसा कोई प्रावधान नहीं था जो इलेक्ट्रॉनिक माध्यम[10] से सूचना प्राप्त होने पर एफआईआर दर्ज करने की अनुमति देता हो, हालांकि कुछ राज्यों[11] ने छोटे

---

[2] भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023; भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023; और, भारतीय न्याय संहिता, 2023.

[3] मोहम्मद जुबैर बनाम एनसीटी दिल्ली राज्य, एआईआर 2022 एससी3649; अर्नब रंजन गोस्वामी बनाम भारत संघ, एआईआर 2020 एससी 2386

[4] अमर नाथ बनाम भारत संघ, एआईआर 2021 एससी 109

[5] धारा 173, बीएनएसएस (धारा 154, सीआरपीसी)

[6] धारा 193, बीएनएसएस (धारा 173, सीआरपीसी)

[7] टीटी एंटनी बनाम केरल राज्य, (2001) 6 एससीसी 181; उमेश सिंह बनाम बिहार राज्य, (2013) 4 एससीसी 360

[8] भगवान जगन नाथ मार्कंड बनाम महाराष्ट्र राज्य, एआईआर 2016 एससी 3531

[9] तपिंदर सिंह बनाम पंजाब राज्य, एआईआर 1970 एससी 1566; विक्रम बनाम महाराष्ट्र राज्य, 2007 क्रि. एलजे 3193. (एससी); पटाई बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (2010) 4 एससीसी 629; सुरजीत सरकार बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, (2013) 2 एससीसी 146

[10] गृह मंत्रालय, भारत सरकार ने 2018 में भारतीय विधि आयोग से इस मुद्दे की जांच करने का अनुरोध किया था। भारतीय विधि आयोग ने पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो सहित विभिन्न स्रोतों से जानकारी एकत्र की। यह पाया गया कि कुछ राज्यों ने ई-एफआईआर की अनुमति दी है कुछ खास मामलों में।

[11] दिल्ली, गुजरात, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, ओडिशा , राजस्थान, उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड आदि, (भारत का विधि आयोग, 282 वीं रिपोर्ट, 2023)

मामलों[12] में ई-एफआईआर की अनुमति दी है ।

वर्ष 2023 में, भारतीय विधि आयोग ने अपनी 282वीं रिपोर्ट पेश की, जिसमें उसने प्रस्ताव दिया कि ई-एफआईआर पंजीकरण को धीरे-धीरे अनुमति दी जानी चाहिए, जिसकी शुरुआत उन अपराधों से की जानी चाहिए जिनमें आरोपी अज्ञात है और तीन साल तक की सज़ा वाले अपराध हैं। इससे इस तरह की सुविधा के दुरुपयोग की संभावना कम हो जाएगी, साथ ही संबंधित हितधारकों को ऑनलाइन एफआईआर की प्रभावशीलता का विचारण करने में सक्षम बनाया जा सकेगा। यदि यह प्रभावी पाया जाता है तो संशोधनों के बाद इस प्रणाली का विस्तार किया जा सकता है।[13]

हालांकि, भारतीय विधानमंडल ने सभी संज्ञेय अपराधों में बीएनएसएस की धारा 173(1) में ई-एफआईआर की अनुमति देकर एक साहसिक और प्रगतिशील कदम उठाया। विधानमंडल ऐसी सुविधा के संभावित दुरुपयोग के मुद्दों के प्रति सजग था और इसलिए, यह निर्धारित करके एक सुरक्षा अधिनियम[14] बनाया कि ई-एफआईआर को सूचना देने वाले द्वारा तीन दिनों के भीतर हस्ताक्षर किए जाने पर रिकॉर्ड पर लिया जाएगा। इस प्रकार, अब एफआईआर इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से दर्ज की जा सकती है, केवल शर्त यह है कि ऐसा संदेश समय की दृष्टि से पहले होना चाहिए और एक संज्ञेय अपराध के होने का खुलासा करना चाहिए।

भारत के सर्वोच्च न्यायालय[15] ने माना है कि अपराध के बारे में अस्पष्ट और समझ से परे फोन संदेश को एफआईआर दर्ज करने के बराबर नहीं माना जाना चाहिए।[16] इसी तरह[17] टेलीफोन कॉल पर प्राप्त जानकारी से निपटने के दौरान, संवैधानिक न्यायालय ने फैसला सुनाया कि एक फोन कॉल जो केवल जांचकर्ता को घटनास्थल पर आने के लिए कहने के लिए किया जाता है, उसे एफआईआर नहीं माना जा सकता है। इसके अतिरिक्त, यदि जांच अधिकारी किसी टेलीफोन संदेश का जवाब देता है और अपराध स्थल का दौरा करता है, तो उसमें दिए गए बयानों को संहिता की धारा 162 के तहत बयान माना जाएगा।

इसका अर्थ है कि इलेक्ट्रॉनिक संदेश और संज्ञेय अपराध के खुलासे की स्थिति में, पुलिस को तीन दिन इंतजार करने की आवश्यकता नहीं है। पुलिस अधिकारी घटनास्थल पर जाकर बयान दर्ज कर सकता है। ऐसे बयान को एफआईआर माना जा सकता है। संज्ञेय अपराध के बारे में ई-संदेश पर हस्ताक्षर की आवश्यकता केवल हल्के मामले में एफआईआर को रोकने के लिए है।

जीरो एफआईआर

सीआरपीसी में जीरो एफआईआर की अवधारणा के लिए विशेष रूप से प्रावधान नहीं किया गया था। हालांकि, सर्वोच्च न्यायालय ने, *स्टेट ऑफ ए.पी. बनाम पुनाती रामुलु*[18] में, जीरो एफआईआर की अवधारणा को मान्यता दी। न्यायालय ने फैसला सुनाया कि यदि कोई पुलिस अधिकारी इस आधार पर एफआईआर दर्ज करने से इनकार करता है कि उसके पास कोई क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र नहीं है, तो ऐसा कृत्य कर्तव्य की उपेक्षा के बराबर होगा।[19]

---

[12] जैसे वाहन या संपत्ति की चोरी, खोई हुई वस्तुएं जैसे बटुआ/पर्स, पैन कार्ड, पासपोर्ट, महत्वपूर्ण दस्तावेज जैसे स्कूल या कॉलेज की मार्कशीट या डिग्री, आधार कार्ड, ड्राइविंग लाइसेंस आदि। (भारतीय विधि आयोग, 282 वीं रिपोर्ट, 2023)

[13] भारतीय विधि आयोग, एफआईआर के ऑनलाइन पंजीकरण को सक्षम करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 154 में संशोधन पर 282वीं रिपोर्ट, 2023, पृ. 55-57.

[14] बीएनएसएस, धारा 173(1)(ii)

[15] नेताजी अच्युत शिंदे (पटियाल) बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2021) 14 एससीसी 222

[16] यह भी देखें: टीटी एंटनी बनाम केरल राज्य, (2001) 6 एससीसी 181; दामोदर बनाम राजस्थान राज्य, (2004) 12 एससीसी 336

[17] रामसिंह बावजी जडेजा बनाम गुजरात राज्य, (1994) 2 एससीसी 685

[18] एआईआर 1993 एससी 2664.

[19] सतविंदर कौर बनाम राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली), एआईआर 1999 एससी 3596

इसके अलावा, अगर हम गहराई से देखें तो यह स्पष्ट हो जाता है कि 10 मई, 2023 को गृह मंत्रालय द्वारा इस संबंध में एक एडवाइजरी जारी की गई थी।[20] बाद में, भारत सरकार ने 05-02-2014 को जीरो एफआईआर दर्ज करने के लिए एक और एडवाइजरी जारी की, जिसमें निर्देश दिया गया है कि केवल इस आधार पर एफआईआर दर्ज करने से इनकार नहीं किया जाएगा कि संबंधित पुलिस स्टेशन उनके अधिकार क्षेत्र में नहीं है।

न्यायिक निर्णयों और प्रचलित प्रथाओं को ध्यान में रखते हुए, धारा 173(1) को शून्य एफआईआर के प्रावधान को शामिल करने के लिए अधिनियमित किया गया है। धारा 173(1) की शुरुआती पंक्ति में "अपराध चाहे जिस क्षेत्र में भी किया गया हो" वाक्यांश का उपयोग किया गया है, जो यह स्पष्ट करता है कि विधायिका ने एफआईआर या शून्य एफआईआर दर्ज करना अनिवार्य कर दिया है, भले ही रिकॉर्डिंग करने वाले पुलिस स्टेशन के पास अधिकार क्षेत्र न हो।

प्रारंभिक जांच

सीआरपीसी की धारा 154(1) को सरसरी तौर पर पढ़ने से पता चलता है कि अगर स्टेशन हाउस ऑफिसर (एसएचओ) को किसी संज्ञेय अपराध की सूचना मिलती है तो वह एफआईआर दर्ज करने के लिए बाध्य है। सीआरपीसी में एफआईआर दर्ज करने से पहले पुलिस अधिकारी द्वारा जांच करने का कोई प्रावधान नहीं है। यद्यपि समय के साथ, सुप्रीम कोर्ट द्वारा तय दो मामले सामने आए, जिनमें एफआईआर दर्ज करने के संबंध में परस्पर विरोधी राय व्यक्त की गई। एक दृष्टिकोण के अनुसार[21], पुलिस अधिकारी को संज्ञेय अपराध की सूचना मिलने पर एफआईआर दर्ज करनी चाहिए। विरोधी दृष्टिकोण[22] यह मानता है कि एक पुलिस अधिकारी को हर बार औपचारिक शिकायत (एफआईआर) दर्ज करने की जरूरत नहीं है, जब उसे पता चलता है कि मामला संज्ञेय है और वह कुछ परिस्थितियों में किसी प्रकार की जांच करने का विकल्प चुन सकता है। दोनों ही विचार संविधान पीठ[23] के समक्ष चर्चा के लिए आए, जिसमें कहा गया कि यदि किसी सूचना से संज्ञेय अपराध का पता चलता है तो एफआईआर अवश्य दर्ज की जानी चाहिए।[24] इस प्रकार, सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि कुछ मामलों में प्रारंभिक जांच की जा सकती है, हालांकि सीआरपीसी इस मुद्दे पर मौन है।[25]

कानून को स्पष्ट करने के लिए, धारा 3)173) में, बीएनएसएस ने प्रारंभिक जांच का प्रावधान पेश किया है, जब मामला तीन साल से कम नहीं बल्कि सात साल तक के कारावास से दंडनीय हो। जब ऐसे अपराधों के बारे में जानकारी मिलती है, तो एसएचओ, वरिष्ठ पुलिस अधिकारी[26] की पूर्व सहमति से प्रारंभिक जांच कर सकता है। धारा 3)173) के अवलोकन मात्र से पता चलता है कि अगर संज्ञेय अपराध का खुलासा होता है, तो पुलिस एफआईआर दर्ज करने के लिए बाध्य है। वैकल्पिक रूप से, एसएचओ यह पता लगाने के लिए प्रारंभिक जांच करने का

---

[20] वर्मा समिति और ललिता समिति में भी यही विचार व्यक्त किये गये। कुमारी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, एआईआर 2014 एससी 187

[21] हरियाणा राज्य बनाम भजन लाल , 1992 सप. (1) एससीसी 335; रमेश कुमारी बनाम राज्य (एनसीटी दिल्ली , (2006) 2 एससीसी 677; प्रकाश सिंह बादल बनाम पंजाब राज्य, (2007) 1 एससीसी 1.

[22] उत्तर प्रदेश राज्य बनाम भगवंत जोशी, एआईआर 1964 एससी 221; सेल्वी बनाम तमिलनाडु राज्य, 1981 सप्लिमेंट। एससीसी 43; राजिंदर सिंह कटोच बनाम चंडीगढ़ प्रशासन, (2007) 10 एससीसी 69; शशि कांत बनाम सीबीआई, (2007) 1 एससीसी 630

[23] ललिता कुमार बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (2012) 4 एससीसी ।. ललिता कुमारी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (2008) 7 एससीसी 164 में दो न्यायाधीशों की पीठ के फैसले के मद्देनजर इस मामले की सुनवाई तीन न्यायाधीशों की पीठ द्वारा की गई थी। बाद में इस मामले को संविधान पीठ को भेज दिया गया था।

[24] न्यायालय ने ऐसे मामलों की एक उदाहरणात्मक सूची प्रदान की जिनमें प्रारंभिक जांच की अनुमति है , जैसे वैवाहिक विवाद, चिकित्सा लापरवाही के मामले, वाणिज्यिक अपराध, भ्रष्टाचार के मामले आदि।

[25] बीएनएसएस में धारा 173(3) के अधिनियमन से पहले, सीबीआई अपराध मैनुअल के अध्याय IX में प्रारंभिक जांच का प्रावधान था। ऐसा कहा जा रहा है कि, सीबीआई अपराध मैनुअल विधानमंडल द्वारा अधिनियमित नहीं किया गया था और यह संहिता के तहत अपराधों की जांच के लिए लागू होने वाला वैधानिक नियम नहीं है। यह केवल सीबीआई के अधिकारियों के आंतरिक मार्गदर्शन के लिए जारी किए गए प्रशासनिक आदेशों का एक सेट है और इसका उद्देश्य सीआरपीसी को खत्म करना नहीं था।

[26] पुलिस उपाधीक्षक के पद से नीचे नहीं।

निर्णय ले सकता है कि संज्ञेय अपराध किया गया है या नहीं।[27] न्यायिक अधिदेश[28] के अनुरूप इस धारा ने प्रारंभिक जांच पूरी करने के लिए चौदह दिनों की समय-सीमा तय की है।

उपरोक्त चर्चा से यह स्पष्ट है कि धारा 176(3) में प्रावधान को शामिल करने से कानून स्पष्ट हो गया है, क्योंकि इसमें उन मामलों को स्पष्ट रूप से निर्धारित किया गया है, जहां इस मुद्दे पर मौजूदा कानून के विपरीत प्रारंभिक जांच की अनुमति है। यह भी स्पष्ट है कि यदि परिस्थितियों से पता चलता है कि कोई संज्ञेय अपराध किया गया है, तो पुलिस अधिकारी को एफआईआर दर्ज करनी चाहिए और प्रारंभिक जांच का सहारा लेना स्वीकार्य नहीं है। प्रारंभिक जांच का उद्देश्य सूचना की सत्यता, वास्तविकता और विश्वसनीयता की जांच करना नहीं है, बल्कि यह पता लगाना है कि क्या प्रथम दृष्टया मामला मौजूद है।[29] यदि प्रारंभिक जांच के परिणाम से पता चलता है कि प्रथम दृष्टया मामला मौजूद है, तो पुलिस अधिकारी एफआईआर दर्ज करने के लिए बाध्य है और उसके बाद, नियमित जांच शुरू होगी।[30]

एफआईआर दर्ज करने के लिए मजिस्ट्रेट को दिए गए आवेदन के दुरुपयोग के प्रति सुरक्षा के उपाय

बीएनएसएस की धारा 173(4) [संहिता की धारा 154(3)] उन मामलों में सूचना देने वाले को उपाय उपलब्ध कराती है जहां एफआईआर दर्ज नहीं की जाती है। ऐसे मामलों में जहां एसपी को लिखित शिकायत के बाद भी एफआईआर दर्ज नहीं की जाती है, सूचना देने वाला मजिस्ट्रेट के पास आवेदन दायर कर सकता है।

ऐसी याचिका प्राप्त होने पर, मजिस्ट्रेट पुलिस को बीएनएसएस की धारा 175(3) (कोड की धारा 156(3) के अनुरूप) के तहत जांच करने का निर्देश दे सकता है। मजिस्ट्रेट की इस शक्ति का बेईमान और शरारती शिकायतकर्ताओं द्वारा दुरुपयोग किए जाने की संभावना है। जिनका उद्देश्य परेशान करने वाली और दुर्भावनापूर्ण शिकायतें दर्ज करके विरोधियों को परेशान और अपमानित करना है। इसलिए, सर्वोच्च न्यायालय ने फैसला दिया है[31] कि धारा 156(3) के तहत याचिकाओं के दुरुपयोग से बचने के लिए, आवेदक को आवेदन दायर करने से रोकने के लिए आवेदन को एक हलफनामे के साथ दिया जाना चाहिए। तदनुसार बीएनएसएस की धारा 175(4) यह प्रावधान करती है कि मजिस्ट्रेट को याचिका एक हलफनामे द्वारा समर्थित होगी। इस प्रकार, मजिस्ट्रेट आवेदक के हलफनामे के बिना जांच के लिए आवेदन पर विचार नहीं कर सकता है।

तदनुसार, धारा 175(4), बीएनएसएस में प्रावधान है कि मजिस्ट्रेट को दी जाने वाली याचिका को हलफनामे द्वारा समर्थित किया जाना चाहिए। इस प्रकार, मजिस्ट्रेट आवेदक के हलफनामे के बिना जांच के लिए आवेदन पर विचार नहीं कर सकता।[32]

संसद ने एक कदम और आगे बढ़कर, ऐसे प्रावधान के दुरुपयोग के खिलाफ जनसेवकों की रक्षा की और तदनुसार, धारा 175(4) में एक नया प्रावधान डाला। प्रावधान में कहा गया है कि अपने आधिकारिक कर्तव्यों के निर्वहन के संबंध में जनसेवकों के खिलाफ शिकायतों के मामलों में मजिस्ट्रेट वरिष्ठ अधिकारी की रिपोर्ट प्राप्त करेगा और एफआईआर दर्ज की जाएगी और उसके बाद जांच का आदेश देने से पहले ऐसे अधिकारी के दावों पर भी विचार करेगा। मजिस्ट्रेट द्वारा एफआईआर दर्ज करने के निर्देश के लिए इन दोनों शर्तों को पूरा करना *अनिवार्य है।* [33]

---

[27] ऐसी जांच करते समय, एसएचओ को अपराध की परिस्थितियों और गंभीरता को ध्यान में रखना आवश्यक है, तथा पूर्वोक्त अनुसार, वरिष्ठ पुलिस अधिकारी की पूर्व सहमति प्राप्त करना आवश्यक है।

[28] ललिता कुमारी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, एआईआर 2014 एससी 187

[29] शिव इंदर सिंह बनाम पंजाब राज्य, 2016 क्रि. एलजे 465 (पी एंड एच)।

[30] समाज परिवर्तन समुदाय बनाम कर्नाटक राज्य, एआईआर 2012 एससी 2326

[31] प्रियंका श्रीवास्तव बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (2015) 6 एससीसी 287

[32] मजिस्ट्रेट, बाबू वेंकटेश बनाम कर्नाटक राज्य, (2022) 5 एससीसी 639

[33] बीएनएसएस की धारा 175(4)

अपराध स्थल की फोरेंसिक जांच

अपराध स्थल प्रबंधन, वैज्ञानिक तरीके से जांच का एक महत्वपूर्ण पहलू है। अपराध स्थल पर विभिन्न सुराग और साक्ष्य उपलब्ध होते हैं, जिन्हें बिना किसी सम्मिश्रण के जल्द से जल्द एकत्रित करने की आवश्यकता होती है। किसी विशेषज्ञ द्वारा ऐसे साक्ष्यों का परिश्रमपूर्वक संग्रह यह सुनिश्चित करते हुए कि साक्ष्य संदूषित नहीं है, अपराध और उसके अपराधी को जोड़ने वाले महत्वपूर्ण साक्ष्य की खोज में मदद करेगा और इस प्रकार, न्याय प्रदान करना महत्वपूर्ण है। तदनुसार, सर्वोच्च न्यायालय[34] ने वैज्ञानिक अपराध स्थल प्रबंधन की आवश्यकता पर जोर दिया है। बीएनएसएस ने धारा 3)176) में इस न्यायिक आदेश को दोहराया है जिसमें एक नया प्रावधान जोड़ा गया है जिसमें कहा गया है कि पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी को अपराध स्थल के निरीक्षण और फोरेंसिक साक्ष्य के संग्रह के लिए फोरेंसिक विशेषज्ञ को आमंत्रित करना चाहिए जब भी उन्हें किसी ऐसे अपराध के बारे में जानकारी मिलती है जिसके लिए सात साल या उससे अधिक की कारावास की सजा हो सकती है। विधायी उद्देश्य, जैसा कि खंड के सरल पठन से देखा जा सकता है, अपराध स्थल के वैज्ञानिक प्रशासन, विशेषज्ञ द्वारा फोरेंसिक साक्ष्य एकत्र करने और कार्यवाही की वीडियो रिकॉर्डिंग की गारंटी देना है।[35]

संसद जानती थी कि बुनियादी ढांचे की अपर्याप्तता और बुनियादी ढांचों के उन्नयन की आवश्यकता के कारण प्रावधान के तत्काल क्रियान्वयन में आने वाली समस्याओं का सामना करना पड़ेगा। इसलिए, संसद ने राज्य सरकारों को, जो कानून और व्यवस्था बनाए रखने के लिए जिम्मेदार हैं, यह अधिकार दिया कि वे अधिकतम पांच वर्षों की अवधि के भीतर पर्याप्त बुनियादी ढांचा होने पर प्रावधान के क्रियान्वयन को अधिसूचित करें।

यह प्रावधान एक सराहनीय कदम है और इसकी लंबे समय से प्रतीक्षा थी। यह प्रावधान अपराध स्थल के प्रबंधन में विशेषज्ञता रखने वाले अपराध स्थल अधिकारियों (SoCO) की भर्ती/अधिसूचना को भी सक्षम करेगा। यह उल्लेख करना उचित है कि BNSS ने कहीं भी यह अनिवार्य नहीं किया है कि फोरेंसिक परीक्षक हमेशा फोरेंसिक विज्ञान प्रयोगशाला से ही होना चाहिए। इसलिए, अपराध स्थल से साक्ष्य एकत्र करने, संरक्षित करने और संभालने के उद्देश्य से ऐसे SoCO को विशेषज्ञ घोषित करने की गुंजाइश है। इसके अलावा, अपराध स्थल की वीडियोग्राफी, प्रक्रिया को पारदर्शी, विश्वसनीय और निष्पक्ष बनाएगी।

पुलिस रिमांड की अवधि और उसकी परिवर्तनीयता

कानून आम तौर पर पुलिस हिरासत के पक्ष में नहीं है।[36] अगर पुलिस हिरासत की अनुमति दी जाती है, तो यह असीमित अवधि के लिए नहीं होती है और पुलिस रिमांड को अधिकृत करने वाले मजिस्ट्रेट को कारण दर्ज[37] करने की आवश्यकता होती है, जबकि पुलिस रिमांड से इनकार किए जाने पर ऐसे कारणों को दर्ज करने की आवश्यकता नहीं होती है। एक मामले में पुलिस रिमांड की अधिकतम अवधि 15 दिन हो सकती है।[38]

---

[34] धर्म देव यादव बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (2014) 5 एससीसी 509

[35] बीएनएसएस की धारा 176(3)

[36] नरेन्द्र मान बनाम राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली), 2002 क्रि एलजे 823 (दिल्ली); अभियुक्त की गिरफ्तारी की तारीख से या अभियुक्त के आत्मसमर्पण की तारीख से अभियुक्त को हिरासत में माना जाता है।

[37] संहिता की धारा 167(3)।

[38] सीबीआई बनाम अनुपन , (1992) 3 एससीसी 141; सत्यजीत बल्लूभाई देसाई बनाम गुजरात राज्य, (2013) 5 एससीआर 1; 2014 (4) आरसीआर (आपराधिक) 548 (एससी)

पुलिस हिरासत की अधिकतम अवधि में बीएनएसएस ने कोई बदलाव नहीं किया है। फिर भी, इस बात पर जोर देना जरूरी है कि एक ही एफआईआर में पुलिस हिरासत सीआरपीसी[39] के अनुसार केवल पहले पंद्रह दिनों के लिए ही दी जा सकती है और उसके बाद तब भी नहीं दी जा सकती, जब बाद में किसी आरोपी द्वारा उसी लेनदेन में गंभीर या अन्य कोई अपराध किया गया हो।[40] 15 दिन बीत जाने के बाद, अगर आरोपी को जमानत नहीं मिलती है, तो आगे की हिरासत केवल न्यायिक हिरासत में ही दी जा सकती है। इसके बाद, जब पंद्रह दिन बीत जाने के बाद अभियुक्त से पूछताछ के लिए हिरासत की आवश्यकता थी, तो संहिता के तहत ऐसा नहीं किया जा सकता था। उदाहरण के लिए, जब मामला पहले पंद्रह दिनों के बाद केंद्रीय एजेंसी को सौंप दिया जाता है और एजेंसी जांच करती है, तो संहिता में पहले पंद्रह दिनों के बाद पुलिस रिमांड का कोई प्रावधान नहीं था। तदनुसार, बीएनएसएस ने कानून में संशोधन किया है। संशोधित कानून[41] पहले पंद्रह दिनों के बाद भी पुलिस हिरासत की अनुमति देता है, जो अधिकतम पंद्रह दिनों की पुलिस हिरासत के अधीन है, लेकिन हिरासत अवधि के पहले साठ दिनों[42] या चालीस दिनों के भीतर।[43] हालांकि, यह सीमा उस एक मामले में लागू है।[44] जब आरोपी के खिलाफ कई मामले लंबित हों और जांच चल रही हो, तो उस पर 15 दिन की सीमा लागू नहीं होती। ऐसे व्यक्ति को प्रत्येक मामले (प्रत्येक एफआईआर) में अधिकतम 15 दिन की हिरासत के अधीन पुलिस हिरासत में भेजा जा सकता है।

शीघ्र सुनवाई का अधिकार

सर्वोच्च न्यायालय ने अनेक न्यायिक निर्णयों[45] में माना है कि यथोचित रूप से शीघ्र सुनवाई अनुच्छेद 21 का एक महत्वपूर्ण पहलू है।[46] सर्वोच्च न्यायालय[47] ने निर्णय दिया है कि अनुच्छेद 21 स्पष्ट रूप से निष्पक्ष, न्यायसंगत और उचित प्रक्रिया का आश्वासन देता है, जो एक अविभाज्य अधिकार है।[48]

यद्यपि अनुच्छेद 21 के तहत यथोचित रूप से शीघ्र और त्वरित सुनवाई के अधिकार को घोषित किया गया था, फिर भी इसे सुनिश्चित करने के लिए सीआरपीसी में अपर्याप्त प्रावधान थे। तदनुसार, आपराधिक मामलों में मुकदमे में तेजी लाने के लिए, बीएनएसएस ने आपराधिक प्रक्रिया के तहत जांच, विचारण, निर्णय देने और अन्य मामलों में विभिन्न चरणों के लिए समय-सीमाएँ घोषित की हैं, जिनमें से कुछ को आगे स्पष्ट किया गया है।

---

[39] देवेंदर कुमार बनाम हरियाणा राज्य, (2010) 6 एससीसी 753

[40] बुध सिंह बनाम पंजाब राज्य, (2000) 9 एससीसी 266; सत्यजीत बल्लूभाई देसाई बनाम गुजरात राज्य, 2014 (4) आरसीआर (आपराधिक) 548 (एससी)।

[41] बीएनएसएस की धारा 187(2)

[42] जब अपराध मृत्युदंड, आजीवन कारावास और दस वर्ष या अधिक के कारावास से दंडनीय हो।

[43] जब अपराध दस वर्ष से कम कारावास से दण्डनीय हो।

[44] जब अभियुक्त के खिलाफ कई मामले लंबित हों और जांच चल रही हो, तो उस पर 15 दिन की समय सीमा लागू नहीं होती। ऐसे व्यक्ति को प्रत्येक मामले (प्रत्येक एफआईआर) में अधिकतम 15 दिन की हिरासत के अधीन पुलिस हिरासत में भेजा जा सकता है।

[45] हुसैनारा खातून बनाम गृह सचिव, बिहार राज्य, (1980) 1 एससीसी 627; कादरा पहाड़िया बनाम बिहार राज्य, एआईआर 1981 एससी 939

[46] यह भी देखें शीला बार्से बनाम भारत संघ, एआईआर 1986 एससी 1373; कॉमन कॉज बनाम भारत संघ, एआईआर 1996 एससी 1619; पी. रामचंद्र राव बनाम कर्नाटक राज्य, एआईआर 2008 एससी 3077; रंजन द्विवेदी बनाम सीबीआई, (2012) 8 एससीसी 495

[47] एआर अंतुले बनाम आरएस नायक , (1992) 1 एससीसी 225

[48] वकील प्रसाद सिंह बनाम बिहार राज्य, (2009) 3 एससीसी 355

तालिका 1
बीएनएसएस के अंतर्गत निर्धारित समय-सीमा

बीएनएसएस की धारा	संक्षिप्त विवरण	निर्धारित समय
193(2)	पोक्सो के मामलों और यौन अपराधों में आरोप पत्र प्रस्तुत करना	दो महीने
184(6)	चिकित्सा अधिकारी द्वारा बलात्कार पीड़िता की मेडिकल रिपोर्ट जांच अधिकारी को प्रस्तुत करना	सात दिन
185(5)	तलाशी के आधार, तलाशी के स्थान, जिन चीज़ों के लिए तलाशी ली जानी है, के संबंध में रिकॉर्ड की प्रति निकटतम मजिस्ट्रेट को प्रस्तुत करना	अड़तालीस घंटे
105	किसी स्थान की तलाशी या संपत्ति पर कब्जा लेने की ऑडियो-वीडियो रिकॉर्डिंग डीएम, एसडीएम या न्यायिक मजिस्ट्रेट को भेजना	बिना विलम्ब के तुरन्त
173(3)	प्रारंभिक जांच पूरी करना	चौदह दिन
193(3)	जांच की प्रगति के बारे में पीड़ित को जानकारी देना	नब्बे दिन
193(9)	आगे की जांच पूरी करना	नब्बे दिन
194(2)	जांच रिपोर्ट अग्रेषित करना	चौबीस घंटे
230	न्यायालय द्वारा अभियुक्त को दस्तावेजों की आपूर्ति	अभियुक्त के पेश होने या उपस्थित होने की तारीख से चौदह दिनों के भीतर
218	न्यायाधीशों और लोक सेवकों के खिलाफ मुकदमा चलाने की मंजूरी पर निर्णय लेने के लिए सरकार को समय-सीमा	मंजूरी के लिए अनुरोध प्राप्त होने की तारीख से एक सौ बीस दिन
232	दण्डनीय कार्यवाही के लिए समय-सीमा	नब्बे दिन
251, 263	सत्र न्यायालय द्वारा विचारणीय मामलों तथा मजिस्ट्रेट द्वारा विचारणीय वारंट मामलों में आरोप तय करने की समय-सीमा	आरोप पर पहली सुनवाई की तारीख से साठ दिन
258	सत्र न्यायालय द्वारा दोषमुक्ति या दोषसिद्धि का निर्णय	तीस दिन जिसे बढ़ाकर पैंतालीस दिन किया जा सकता है।
392(1)	निर्णय	पैंतालीस दिन
392(4)	पोर्टल पर निर्णयों को अपलोड करना	सात दिन
290(1)	दलील सौदेबाजी (Plea Bargaining) के लिए आवेदन	आरोप तय होने की तारीख से तीस दिन
290(4)	दलील सौदेबाजी में पारस्परिक रूप से संतोषजनक निपटान प्रस्तुत करना	साठ दिन से अधिक नहीं
330	अभियुक्त या अभियोजन पक्ष द्वारा दाखिल दस्तावेजों की वास्तविकता को चुनौती देना	ऐसे दस्तावेजों की आपूर्ति के तीस दिनों के भीतर

इसके अलावा, निर्दिष्ट मामलों में संक्षिप्त विचारण को अनिवार्य बनाकर संक्षिप्त विचारण के दायरे का विस्तार किया गया है।[49] इसके अलावा, तीन साल तक की सजा वाले अपराधों को संक्षिप्त विचारण के दायरे में लाकर संक्षिप्त विचारण के दायरे को बढ़ाया गया है, जबकि पहले के प्रावधान के अनुसार दो साल तक की सजा वाले अपराधों का संक्षिप्त विचारण किया जा सकता था ।

जांच और विचारण में ऑडियो-वीडियो इलेक्ट्रॉनिक साधन

आपराधिक प्रक्रिया में महत्वपूर्ण बदलाव हुए हैं, जिनमें से एक है जांच और सुनवाई दोनों के लिए ऑडियो-वीडियो प्रौद्योगिकी उपकरणों के उपयोग पर अधिक जोर देना। बीएनएसएस ने समन[50], नोटिस, आरोपों की व्याख्या करने[51] और निर्णय सुनने के लिए[52] अभियुक्तों की प्रस्तुति, अपराध स्थल की रिकॉर्डिंग[53], धारा 185 के साथ बीएनएसएस की धारा 105 के तहत की गई तलाशी की रिकॉर्डिंग, अभियुक्तों को दस्तावेज प्रस्तुत करना[54], आरोप-पत्र प्रस्तुत करना, साक्ष्य प्रस्तुत करना, गवाहों की जांच[55], आपराधिक मामलों की सुनवाई[56] आदि के लिए इलेक्ट्रॉनिक साधनों के उपयोग की अनुमति दी है। इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य की पारदर्शिता और विश्वसनीयता सुनिश्चित करने के लिए, जाँच अधिकारी को इलेक्ट्रॉनिक डिवाइस[57] के मामले में हिरासत के क्रम के बारे में विवरण चालान के साथ संलग्न करना आवश्यक है।

ऑडियो-वीडियो इलेक्ट्रॉनिक साधनों के व्यापक उपयोग से अधिक पारदर्शिता आएगी, विश्वसनीयता बढ़ेगी तथा प्रक्रिया में तेजी आने की उम्मीद है।

पीड़ित-केंद्रित दृष्टिकोण

बीएनएसएस ने आरोपी केंद्रित दृष्टिकोण से पीड़ित केंद्रित दृष्टिकोण की ओर बदलाव को और मजबूत किया है। बीएनएसएस के तहत पीड़ित को एक महत्वपूर्ण हितधारक के रूप में मान्यता दी गई है। बीएनएसएस ने पीड़ित शब्द की परिभाषा में संशोधन किया है और इस शब्द के दायरे को काफी हद तक बढ़ाया है।[58] इसके अलावा, धारा 173 में पीड़ित को एफआईआर की प्रति प्रदान करने का प्रावधान किया गया है। इसी तरह, पीड़ित को नब्बे दिनों[59] के भीतर जांच की प्रगति के बारे में सूचित करने का प्रावधान किया गया है। इसके अलावा, धारा 360 बीएनएसएस में एक प्रावधान भी जोड़ा गया है, जिसमें अभियोजन से वापसी की अनुमति देने से पहले पीड़ित को सुनवाई का अवसर देने की आवश्यकता बताई गई है।

अनुपस्थिति में मुकदमा

बीएनएसएस की धारा 356 में अनुपस्थिति में मुकदमे के बारे में एक और महत्वपूर्ण प्रावधान जोड़ा गया है, जो अब तक संहिता के तहत स्वीकार्य नहीं था। यह धारा घोषित अपराधियों के अनुपस्थिति के मामले में मुकदमा चलाने की अनुमति देती है। इस प्रावधान के तहत 30 दिनों के अंतराल में गिरफ्तारी के दो वारंट जारी करना; स्थानीय और राष्ट्रीय समाचार पत्रों में नोटिस प्रकाशित करना आदि आवश्यक है। इसके अलावा,

[49] बीएनएसएस की धारा 283(1)

[50] धारा 64, 70, 71.

[51] धारा 251.

[52] धारा 392(5)

[53] धारा 176(3)

[54] धारा 230

[55] धारा 254, 265, 266.

[56] धारा 530.

[57] धारा 193(3)

[58] संहिता की धारा 2(wa) में वर्णित वाक्यांश "जिसके लिए आरोपी व्यक्ति पर आरोप लगाया गया है" को BNSS में परिभाषित करते समय हटा दिया गया है। संशोधन का प्रभाव यह है कि जिस व्यक्ति को किसी अपराध के कारण चोट लगी है, वह पीड़ित होगा, भले ही आरोपी पर आरोप लगाया गया हो या नहीं।

[59] बीएनएसएस, धारा 193(3)

आरोपी के रिश्तेदारों को नोटिस देना आवश्यक है। ऐसे मामलों में, आरोप तय होने की तारीख से 90 दिन बीतने के बाद अनुपस्थिति में मुकदमा शुरू होगा।

शिकायत मामलों में पूर्व-संज्ञान सुनवाई

बीएनएसएस में धारा 1)223) के प्रावधान के रूप में एक विशिष्ट प्रावधान है, जिसके तहत शिकायत मामलों में संज्ञान से पहले सुनवाई अनिवार्य है। इसी तरह, लोक सेवकों के खिलाफ शिकायतों के मामले में भी धारा 2)223) संज्ञान से पहले सुनवाई अनिवार्य करती है। संहिता में संज्ञान से पहले सुनवाई की कोई अवधारणा नहीं थी। वास्तव में संहिता की धारा 200 का शीर्षक बताता है कि यह धारा शिकायतकर्ता की जांच से संबंधित है, न कि आरोपी की। हालांकि, संशोधित प्रावधानों के अनुसार यह प्रावधान है कि मजिस्ट्रेट को संज्ञान लेने से पहले आरोपी की सुनवाई करनी होगी। इससे निश्चित रूप से अदालतों में अनावश्यक मुकदमेबाजी से बचा जा सकेगा और अदालतें आरोपी की सुनवाई के बाद संज्ञान न लेने का फैसला कर सकती हैं।

समापन टिप्पणियाँ

बीएनएसएस ने आपराधिक प्रक्रिया को तकनीकी प्रगति के साथ जोड़ने और यह सुनिश्चित करने के लिए बहुत जरूरी सुधार पेश किए ताकि आपराधिक मामलों का समयबद्ध तरीके से निपटारा हो। आपराधिक जांच और मुकदमे के विभिन्न चरणों में सूचना प्रौद्योगिकी और ऑडियो-वीडियो इलेक्ट्रॉनिक साधनों का व्यापक उपयोग अधिक पारदर्शिता लाएगा और मुकदमे में तेजी आने की उम्मीद है। इसके अलावा, फोरेंसिक विशेषज्ञ द्वारा अपराध स्थल का वैज्ञानिक प्रबंधन और साक्ष्यों का संग्रह निश्चित रूप से अभियोजन पक्ष के मामले को विश्वसनीयता प्रदान करेगा और न्याय प्रदान करने में मदद करेगा जो मानवता की सबसे बड़ी आवश्यकता है। पेश किए गए संशोधनों के दूरगामी परिणाम होंगे, हालांकि, इन संशोधनों की प्रभावशीलता कई कारकों पर निर्भर करेगी जैसे कि जांच मशीनरी और अदालतों की नई व्यवस्था के लिए अनुकूलनशीलता और पर्याप्त बुनियादी ढांचे की उपलब्धता आदि।

भारत में नए आपराधिक कानूनों में पहली बार अपराध करने वालों के लिए पुनर्वास रणनीतियाँ: सबल न्याय के प्रति एक एकीकृत दृष्टिकोण

डॉ अमनदीप सिंह कपूर, भा.पु.से.*
श्री इशान अत्रे**

सार

इस लेख का उद्देश्य आपराधिक इतिहास, सामाजिक-जनसांख्यिकी और पुनः एकीकरण रणनीतियों के संदर्भ में भारत में पहली बार अपराधी होने के निहितार्थों को समझना है और फिर समझना कि नए आपराधिक कानूनों में क्या बदलाव लाए गए हैं। इनके कारण, उन कारकों को समझने की आवश्यकता है जो किसी व्यक्ति को अपराधी बनने के लिए प्रेरित करते हैं और भारत में पुनर्वास कार्यक्रम किस हद तक ऐसे अपराधियों को सुधारने और नए कानूनों के माध्यम से सबल न्याय को लागू करने के लिए काम करते हैं। यह सांस्कृतिक सापेक्षवाद की धारणा को सामने लाने में मदद करता है, इस तथ्य को देखते हुए कि अपराध को एक अवधारणा के रूप में इतिहास में विभिन्न संस्कृतियों द्वारा अलग-अलग तरीके से परिभाषित किया गया है। प्रारंभिक चरणों में हस्तक्षेप एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है क्योंकि पहली बार अपराध करने वाले लोग उन लोगों से अलग होते हैं जो आपराधिक मानसिकता के शिकार होते हैं और उनमें अपराध करने की आदत विकसित नहीं होती। इस शोध में अपराधियों की परिवीक्षा अधिनियम और बीएनएसएस सहित पुनर्वास और उदारता पर केंद्रित कानून और उपाय शामिल हैं। पारिवारिक प्रभाव, वित्तीय स्थिति, शिक्षा, मित्रों से प्रभाव और मनोवैज्ञानिक प्रभाव जैसे विभिन्न पहलुओं का अध्ययन किया गया है, जो संभवतः पहली बार अपराध करने के कारण हो सकते हैं। ऐसे व्यक्तियों के सामने मौजूदा सामाजिक और कानूनी चुनौतियों की उचित जांच से पहली बार अपराध करने वालों के संदर्भ में व्यापक प्रक्रिया की अवधारणा पर ध्यान केंद्रित करने का आग्रह किया जाता है। इस प्रकार, शिक्षा कार्यक्रमों, नशीली दवाओं के उपचार केंद्रों, मानसिक स्वास्थ्य सहायता, तथा सुधारात्मक न्याय और सामुदायिक सेवा के उपयोग के संबंध में, अध्ययन पुनर्वास पाठ्यक्रम की अवधारणा को लागू करने की आवश्यकता पर जानकारी प्रदान करता है। अध्ययन का उद्देश्य पहली बार अपराध करने वालों की संख्या को कम करना है जो फिर से अपराध करते हैं और उन्हें समाज में फिर से एकीकृत करने में मदद करना है ताकि वे सामाजिक बहिष्कार और अलगाव से लड़ सकें।

मुख्य शब्द : पहली बार अपराध करने वाले, पुनर्वास, पुनर्स्थापनात्मक न्याय, भारत, आपराधिक न्याय प्रणाली

* निदेशक, केंद्रीय गुप्तचर प्रशिक्षण संस्थान, जयपुर, बीपीआरएंडडी, गृह मंत्रालय, भारत सरकार

** संकाय, भारतीय प्रबंधन संस्थान, रोहतक

परिचय

नए आपराधिक कानून लागू होने के बाद भारतीय आपराधिक न्याय प्रणाली का मुख्य ध्यान अब पहली बार अपराध करने वालों पर है।

पहली बार अपराध करने वाले वे अपराधी होते हैं जिन्हें पहले कभी किसी अपराध के लिए दोषी नहीं ठहराया गया हो। हमारी जेलें कैदियों से भरी हुई हैं, जिनमें से ज्यादातर पहली बार अपराध करने वाले होते हैं। दिसंबर 2021 तक, भारत की जेलों में 5.5 लाख से ज़्यादा कैदी थे, जो कि कुल कैदियों की क्षमता का 130% थी। वर्ष 2021 में, भारत में कुल कैदियों में से 77% अंडर-ट्रायल कैदी थे। लगभग 30% अंडर-ट्रायल कैदी एक साल या उससे ज़्यादा समय से हिरासत में थे। लगभग 8% अंडर-ट्रायल कैदी तीन साल या उससे ज़्यादा समय से हिरासत में थे।[1]

नए आपराधिक कानूनों में शामिल किए गए प्रावधानों में जमानत प्रावधानों और सजाओं में नरमी, दलील सौदेबाजी (plea bargaining) और सामुदायिक सेवाओं का उद्देश्य जेलों में भीड़भाड़ कम करना और साथ ही आपराधिक न्यायशास्त्र के सुधारात्मक और दंडात्मक पहलुओं के बीच संतुलन बनाए रखना है।

लेकिन पहले, इन लोगों की पृष्ठभूमि का सावधानीपूर्वक मूल्यांकन करने की आवश्यकता है, जैसे कि पूर्व दोषसिद्धि, जनसांख्यिकी और उनके पुनर्वास प्रक्रिया के दौरान अपनाई जाने वाली पद्धतियाँ, क्योंकि उनकी संख्या में काफी वृद्धि हुई है। इन युवा अपराधियों के आपराधिक इतिहास, जनसांख्यिकीय रूपरेखा और समाज में सफलतापूर्वक पुनः एकीकरण की रणनीतियों को समझने के लिए, यह शोधपत्र भारत में पहली बार अपराध करने वालों के आंकड़ों[2] (पीडिया, 2023) की जांच करता है। ऐतिहासिक रूप से, हम अपराध को एक सामाजिक रूप से निर्मित अवधारणा के रूप में परिभाषित कर सकते हैं जो मानव समाज जितनी पुरानी है। जब भी समाज और सभ्यताएँ बनीं, लोगों ने समाज और संस्कृतियों के कानूनों, नियमों और विनियमों का उल्लंघन करना शुरू कर दिया, जिन्हें मोटे तौर पर अपराध के रूप में उल्लेख किया गया है। दूसरी ओर, अपराध की परिभाषा अभी भी एक चुनौतीपूर्ण और अस्पष्ट कार्य है क्योंकि विभिन्न समुदायों में इसका चित्रण बदलता रहता है। एक समाज का अपराध दूसरे समाज के अपराधों के समान नहीं हो सकता है; इसका तात्पर्य यह है कि अपराधों को परिभाषित करने में सांस्कृतिक सापेक्षवाद है[3] (Allott and C, Crime Law 2024)। ये लोग जो अक्सर अपराध के लिए नौसिखिए होते हैं, फिर भी वे अपराध की गहरी जड़ें नहीं जमाए रहते। बुनियादी ज़रूरतों और सहायता को पाने की इच्छा बाद के अपराधों में उनकी संलिप्तता को कम करने में काफ़ी मददगार साबित हो सकती है। यह जानना ज़रूरी है कि कौन से कारक या परिस्थितियाँ कुछ पहले अपराधियों को कारावास से रिहा होने के बाद फिर से अपराधी बनने के लिए प्रेरित करती हैं, इससे उन्हें फिर से संगठित होने और अपराध की पुनरावृत्ति दर को काफ़ी हद तक कम करने में मदद मिलेगी[4] (Kleemans and Koppen 2020)।

अपराध विज्ञान की कला, अपराध और अपराधी का अध्ययन करती है। अपराध करने के लिए आवश्यक तत्व Actus Rea and Men Rea, हैं, लेकिन अपराध विज्ञान इससे कहीं आगे जाता है और उन कारकों का अध्ययन करता है जिन्होंने अपराध करने में योगदान दिया है। अपराध विज्ञान उन कारकों और परिस्थितियों का मूल्यांकन करने में मदद करता है जिनमें किसी व्यक्ति को अपराध की दुनिया में प्रवेश करने के लिए कठोर कदम उठाना पड़ता है। किसी भी व्यक्ति में अपराधीपन जन्मजात नहीं होता, उसका परिवेश उसे अपराध करने के लिए उकसाता है[5] (Schabas, 2012)।

---

[1] प्रिज़न डेटा, 2021 – राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो

[2] Pedia, Law. 2023. भारत की आपराधिक न्याय प्रणाली के घटकों की खोज: सजा प्रणाली पर एक व्यापक नज़र। 01 04. https://timesofindia.indiatimes.com/readersblog/lawpedia/exploring-the-components-of-indias-criminal-justice-system-a-comprehensive-look-at-the-punishment-system-48833/ .

[3] एलॉट, एंटनी निकोलस, और डोनाल्ड क्लार्क सी. 2024. "Crime Law." britannica.com. 05 28. https://www.britannica.com/topic/crime-law.

[4] क्लेमन्स, एडवर्ड, और वेरे वैन कोपेन। 2020. "Organized Crime and Criminal Careers." शिकागो विश्वविद्यालय प्रेस जर्नल 385-402।

[5] Schabas, William .2012. "Mens Rea, Actus Reus, and the Role of the State." अकल्पनीय अत्याचारों में - न्याय, राजनीति और युद्ध अपराध न्यायाधिकरण में अधिकार, विलियम शबास द्वारा, 130-150। ऑक्सफोर्ड एकेडमिक।

कानूनी रूपरेखा और परिभाषा

अपराध की परिभाषा उन सभी कृत्य या कृत्यों की चूक के रूप में की जाती है जो भारतीय क़ानून के तहत आपराधिक संहिता के प्रावधानों के अनुसार गैरकानूनी हैं। विधानमंडल ने ऐसे कृत्यों को अपराध के रूप में वर्गीकृत किया है क्योंकि वे आमतौर पर जानबूझकर किए जाते हैं और उनका कोई कानूनी औचित्य नहीं होता है। दुष्कर्म अपराधों में ऐसे अपराध शामिल हैं जो अपमानजनक या सूक्ष्म हो सकते हैं और देश के कानूनों के अनुसार दंडनीय और आपराधिक हैं। दंड के विभिन्न सिद्धांत हैं जो आपराधिक न्याय प्रणाली[6] (गुप्ता 2024) को तैयार करते हैं जो अपराधों में शामिल व्यक्तियों को दंडित करने पर आधारित है।

प्रतिशोधात्मक सिद्धांत उस दंड की मांग करता है जो अपराधी द्वारा पीड़ित को पहुंचाई गई हानि के समानुपातिक हो और इसे बाइबिल की कहावत 'आंख के बदले आंख' के रूप में दर्शाया जा सकता है। इसी प्रकार, **निवारक सिद्धांत** लोगों को उस दंड के कारण अपराध करने से रोकता है जो उन्हें मिलेगा। निवारक परिकल्पना का उद्देश्य लोगों को उनके अपराध करने से रोकना है, जिससे ऐसी सजा का डर पैदा हो। समय के साथ सजा के दृष्टिकोण में कुछ सुधार हुए हैं क्योंकि सजा का मुख्य उद्देश्य अपराधी का सुधार रहा है और पीड़ित के लिए उचित सजा भी इस दृष्टिकोण में प्राप्त की जा सकती है[7] (मिश्रा 2016)। सजा का ऐसा स्वरूप अपराधियों में सुधार लाने की कोशिश करके उनमें इस तरह के दुराचार की संभावना को कम करने का प्रयास करता है। बेशक, सजा का सुधारात्मक सिद्धांत बाद में अपराधी को लाभ पहुंचाने के विचार के साथ विकसित हुआ, हालांकि पीड़ित को न्याय दिया जाता है[8] (Zalta and Nodelman 2012)। इस सिद्धांत का उद्देश्य अपराधियों के व्यवहार को बदलना और उन्हें आगे कोई अपराध करने से रोकना है। पहली बार अपराध करने वालों के पुनर्वास पर जोर देकर, कानूनी प्रणाली बार-बार होने वाले अपराधों की संख्या को कम करने और पहली बार दोषी ठहराए गए लोगों के लिए समाज में फिर से शामिल होना आसान बनाने की उम्मीद करती है, जो अंततः समुदाय को अधिक सुरक्षित और अधिक न्यायपूर्ण बनाएगा[9] (Sarraf and Srivastav, 2024)। सबल न्याय का लक्ष्य अपराधी और पीड़ित को एक साथ वापस लाकर अपराध द्वारा किए गए नुकसान को ठीक करना है। यह रणनीति अपराधियों को अपनी गलतियों को स्वीकार करने और उन लोगों को क्षतिपूर्ति करने के लिए प्रोत्साहित करती है जिन्हें उन्होंने नुकसान पहुंचाया है। सहानुभूति और समझ को प्रोत्साहित करके और अपराधियों को उनके समुदायों के भीतर रचनात्मक संबंध स्थापित करने में सहायता करके, सबल न्याय में पुनरावृत्ति दर को कम करने की क्षमता है।

सुधारात्मक सिद्धांत में प्रतिपादित, **भारतीय न्याय संहिता, 2023** की दंड प्रणाली एक नए प्रकार की सजा पेश करती है, जो **सामुदायिक सेवा** है। यहाँ, दोषियों को सामुदायिक सेवा करने के लिए न्यायालय के आदेश के तहत रखा जाता है, जिसके लिए उन्हें भुगतान नहीं किया जाएगा[10] (रॉय 2024)। यह न्यायाधीश का विवेक है कि दोषी को किस तरह की सामुदायिक सेवा करनी है क्योंकि संहिता इस पर चुप है। सजा के इस रूप को अपराधियों को उनके कृत्यों के सामाजिक परिणामों पर विचार करने के लिए मजबूर करना तथा समाज में सकारात्मक भूमिका निभाने के लिए इन दो महत्वपूर्ण मुद्दों की सेवा करने के लिए कहा जा सकता है।

सामुदायिक सेवा मुख्य रूप से उन लोगों के लिए होती है जिन्होंने छोटे-मोटे अपराध किए हैं और पहली बार अपराध

[6] गुप्ता, दिव्यांशी. 2024. " Theories of punishment." 02 16.

[7] मिश्रा, शिखा। 2016. "Theories of Punishment – A Philosophical Aspect." इंपीरियल जर्नल ऑफ इंटरडिसिप्लिनरी रिसर्च 74-77।

[8] ज़ाल्टा, एडवर्ड एन., और उरी नोडलमैन। 2012. द स्टैनफोर्ड इनसाइक्लोपीडिया ऑफ फिलॉसफी। स्टैनफोर्ड: द मेटाफिजिक्स रिसर्च लैब फिलॉसफी डिपार्टमेंट स्टैनफोर्ड यूनिवर्सिटी।

[9] सर्राफ, संजय और दीपक कुमार श्रीवास्तव। 2024."The Bharatiya Nyaya Sanhita: A Comprehensive Overview of India's New Criminal Law." रिसर्चगेट.नेट. 05. https://www.researchgate.net/publication/381005159_The_Bharatiya_Nyaya_Sanhita_A_Comprehensive_Overview_of_India's_New_Criminal_Law.

[10] रॉय, अंकिता. 2024. सामुदायिक सेवा सजा और भारतीय आपराधिक न्याय प्रणाली में इसका महत्व. 02 06. https://www.livelaw.in/articles/community-service-sentencing-and-its-significance-in-the-indian-criminal-justice-system-248589#:~:text=incorporating%20community%20service.-,The%20recent%20adoption%20of%20community%20service%20sentencing%20as%20a%20form,aw.

किए हैं, जिसका अर्थ है कि उन्हें सेवा के माध्यम से बेहतर बदलाव का मौका मिल सकता है और इसलिए अपराधियों के बीच पुनरावृत्ति की दर को कम करने की इच्छा है[11] (शर्मा, 2023)। आपराधिक कानून की व्याख्या करते समय, विशेष रूप से, दंड विधानों की व्याख्या अक्सर अभियुक्त पर केंद्रित रही है, जो कि 'दोषी सिद्ध होने तक निर्दोष' के सिद्धांत पर आधारित है। पहली बार अपराध करने वालों के लिए यह और भी महत्वपूर्ण है कि उन्हें दोबारा अपराध करने वालों से अलग किया जाए और उन्हें सज़ा के बजाय पुनर्वास की अनुमति दी जाए। भारतीय कानूनी प्रणाली पहली बार अपराध करने वालों के साथ एक सूक्ष्म रणनीति के साथ व्यवहार करने की आवश्यकता को समझती है जो पुनर्वास और न्याय की संभावनाओं के बीच संतुलन बनाती है।

पहली बार अपराध करने वाले बनाम बार-बार अपराध करने वाले

यह जानना उचित है कि भारत में अपराधियों को मिलने वाली कानूनी कार्यवाही और सजा, पहली बार अपराध करने वालों और बार-बार अपराध करने वालों के बीच सबसे महत्वपूर्ण अंतर दर्शाती है। हालाँकि, उदाहरण के लिए, पहली बार अपराध करने वालों को दोबारा अपराध करने वालों की तुलना में कम सज़ा दी जाती है - यह कानूनी सिद्धांत का पालन करता है जो रोकथाम के बजाय सुधार पर ज़ोर देता है[12] (मारवाह 2020)। यह विरोध, जिसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि समाज सुरक्षित रहे तथा साथ ही व्यक्ति में परिवर्तन भी आए, यह संसद के कई अधिनियमों और कानूनी कार्यवाहियों में निहित है। आपराधिक आचरण से निपटने के लिए प्राथमिक कानून भारतीय दंड संहिता (आईपीसी) और दंड प्रक्रिया संहिता (सीआरपीसी) हैं। उपर्युक्त कानून जिसमें अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958; किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2015; और भारत के संविधान में प्रावधान हैं कि पहली बार अपराध करने वाले व्यक्ति के मामले में मुख्य उद्देश्य पुनर्वास और पुनः एकीकरण है। न्यायाधीशों के पास अपराध की प्रकृति या पुनर्वास प्रयोजनों के लिए अन्य कारकों के आधार पर प्रथम अपराध करने वालों को सजा देने में पर्याप्त विवेकाधीन शक्तियां होती हैं।

दूसरी ओर, बार-बार अपराध करने वालों को कठोर आचरण का सामना करना पड़ता है, जिसमें दंड और संरक्षण के लक्ष्य पर ध्यान केंद्रित किया जाता है, तथा अन्य व्यक्तियों को लक्षित किया जाता है, जिसमें आईपीसी कानूनी अधिनियम, विभिन्न राज्य-विनियमन आदतन अपराधी अधिनियमों, तथा एनएसए और स्वापक औषधियों तथा मन:प्रभावी पदार्थों के अवैध व्यापार की रोकथाम अधिनियम सहित निवारक निरोध अधिनियमों के तहत निवारक उपायों पर जोर दिया जाता है13 (Goyal, et al. 2020)। मुख्य अंतर सजा देने के तरीकों में से एक है, जहां पहली बार अपराध करने वालों को कारावास और परिवीक्षा के अलावा अन्य विकल्प प्रदान किए जाते हैं और साथ ही पुनर्वास कार्यक्रमों से गुजरने का अवसर भी दिया जाता है, इसके विपरीत बार-बार अपराध करने वालों के लिए उनके पिछले रिकॉर्ड के कारण, अदालत उन पर उपचार सहित कठोर उपाय लागू करती है ताकि उन्हें अपनी आपराधिक गतिविधियों को जारी रखने से रोका जा सके। पहली बार अपराध करने वाले ऐसे अपराधियों के साथ व्यवहार करते समय सामाजिक-आर्थिक कारकों पर अधिक सहानुभूतिपूर्वक विचार किया जाता है, जो स्कूल, नौकरी और जीवन में असफल रहे हों, जिनके जीवन में आपराधिक जनसांख्यिकीय कारकों ने किसी प्रकार का अवसर प्रदान किया हो; आदतन अपराधी के विपरीत, जिनके बार-बार अपराध करने से उनमें अधिक अंतर्निहित आपराधिक विशेषता की ओर संकेत मिलता है।

कई आपराधिक कानूनों के अंतर्गत पहली बार अपराध करने वालों के प्रति नरमी बरतने के विभिन्न प्रावधान हैं:

---

[11] शर्मा, नलिनी. 2023. पहली बार, भारत में छोटे-मोटे अपराधों के लिए सामुदायिक सेवा को सज़ा के तौर पर प्रस्तावित किया गया. 08 12. https://www.indiatoday.in/law-today/story/community-service-punishment-petty-offences-india-ipc-bharatiya-nyaya-sanhita-amit-shah-2419928-2023-08-12.

[12] मारवाह, आकांक्षा। 2020. "RESTORATIVE JUSTICE AND REFORMATION OF OFFENDERS." " आईएलआई लॉ रिव्यू 157-169

[13] गोयल, रश्मि, मोहम्मद इमरान खान, दुर्गा शर्मा, और राजेश कुमार। 2020. "Judicial Discretion." उत्तराखंड न्यायिक और कानूनी समीक्षा 59-69।

(क) **भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 की धारा 401 और तत्कालीन दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 360 (1):** इसमें प्रावधान है कि यदि अपराधी 7 वर्ष से कम दंडनीय अपराध के लिए दोषी पाया जाता है और अपराधी की आयु 21 वर्ष से अधिक है या वह महिला है, तो दोषी व्यक्ति को शुरू में जेल नहीं भेजा जाएगा, बल्कि उसे परिवीक्षा अधिकारी की देखरेख में अधिकतम 3 साल की अवधि के लिए परिवीक्षा पर रिहा किया जाएगा और यदि उन 3 वर्षों में उसका आचरण अच्छा रहा तो उसे मुक्त कर दिया जाएगा। यह दृष्टिकोण पहली बार अपराध करने वालों के लिए बहुत उपयोगी है क्योंकि उन्हें दोषी ठहराए जाने के बाद जेल नहीं भेजा जाएगा और उन्हें अपने परिवारों के साथ रहने और खुद को सुधारने का अवसर मिलेगा[14] (दंड प्रक्रिया संहिता 1973 की धारा 360)।

(ख) **भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 की धारा 401(3) [पूर्ववर्ती दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 360(3)]:** परिवीक्षा के अलावा, यदि कोई व्यक्ति 2 वर्ष से कम दंडनीय किसी अपराध का दोषी पाया जाता है, तो दोषी व्यक्ति को अपराध के लिए न्यायाधीश की उचित चेतावनी के बाद रिहा किया जा सकता है। चेतावनी में कोई समय सीमा नहीं है, दोषसिद्धि के तुरंत बाद उसे स्थायी रूप से घर भेज दिया जाएगा[15] (दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 360(3)।

(ग) **अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958:** संसद द्वारा एक अधिनियम पारित किया गया था, विशेष रूप से अपराधियों को परिवीक्षा और चेतावनी देने के लिए, जैसा कि सीआरपीसी में है, दोषी व्यक्तियों को परिवीक्षा और चेतावनी देने पर कुछ प्रतिबंध थे, उन सभी को वर्तमान क़ानून-बीएनएसएस में हटा दिया गया है। अब जब तक कि अपराध मृत्यु या आजीवन कारावास से दंडनीय न हो, न्यायाधीश को परिवीक्षा प्रदान करनी होगी अन्यथा उसे परिवीक्षा प्रदान न करने के लिए निर्णय में कारण बताना होगा। इसके अलावा, परिवीक्षा अधिनियम के अनुसार, भले ही किसी व्यक्ति को परिवीक्षा से मुक्त कर दिया गया हो, लेकिन दोषी व्यक्ति किसी भी व्यवसाय के लिए अयोग्य नहीं होगा। ऐसा प्रावधान पहली बार अपराध करने वाले व्यक्ति को परिवीक्षा[16] (अपराधियों की परिवीक्षा अधिनियम, 1958) पर रिहा होने के बाद एक नया जीवन शुरू करने के लिए एक नया मार्ग दिखाएगा।

(घ) **भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 की धारा 289 [पूर्ववर्ती दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 265-ए]:** इसमें कहा गया है कि पूछताछ के दौरान अभियुक्त को एक अवसर दिया जाएगा, जहां अभियुक्त के पास अपराध के पीड़ित से अपनी दलील के लिए सौदेबाजी करने का विकल्प होगा, जहां अपराध की सजा 7 वर्ष से कम है। इस दलील में, अभियुक्त कथित अपराध के लिए सजा कम करने के बदले में एक निश्चित राशि का भुगतान करेगा, अपराधी और पीड़ित के बीच एक पारस्परिक रूप से संतोषजनक समझौते पर हस्ताक्षर किए जाएंगे और न्यायाधीश द्वारा अपने हस्ताक्षर और मुहर के साथ इसे अधिकृत किया जाएगा। इस तरह के तरीकों से पहली बार अपराध करने वाले को लंबी अवधि तक जेल में रहने से बचाया जा सकेगा, इसके अलावा, इससे पीड़ित को उसे हुए किसी भी नुकसान के लिए मुआवजा प्राप्त करने में मदद मिलेगी[17] (दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 265-ए)।

(ङ) **जेल अधिनियम, 1984 की धारा 59 (5):** यह राज्य विधानमंडल को दोषी व्यक्ति को पैरोल पर रिहा करने के लिए दिशानिर्देश बनाने का अधिकार देता है (जेल अधिनियम 1984 की धारा 59)। पैरोल नियमित अंतराल पर जेल से दोषी व्यक्तियों की रिहाई है ताकि उन्हें समाज से अलग न किया जाए। पैरोल दो प्रकार की होती है, कस्टडी पैरोल और रेगुलर पैरोल। कस्टडी पैरोल

[14] दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा: 360

[15] "(दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा: 360 (3)) "

[16] "Probation of Offenders Act,1958."

[17] "(दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा: 265-ए)"

आपातकालीन मामलों में दी जाती है जैसे कि परिवार में किसी की मृत्यु हो जाती है या कोई गंभीर बीमारी हो जाती है, स्थिति की वास्तविकता को संबंधित पुलिस स्टेशन के माध्यम से सत्यापित किया जाता है और यह यात्रा के समय को छोड़कर अधिकतम 6 घंटे के लिए दी जाती है। रेगुलर पैरोल आपातकाल के अलावा किसी अन्य आधार पर दी जाती है। यह व्यवस्था दोषी व्यक्ति को उसके परिवार के सदस्यों के संपर्क में रहने में मदद करती है[18] (जेल अधिनियम, 1984 की धारा 59-ए)।

(च) **भारतीय सुरक्षा संहिता, 2023 की धारा 359 और [पूर्ववर्ती दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 320]:** अपराधों के शमन में अपराधों की दो सूची दी गई है, जहाँ अपराध में शामिल पक्षों के पास न्यायालय की अनुमति से या न्यायालय की अनुमति के बिना अपराध को शमन करने का विकल्प होता है। ऐसी व्यवस्था अपराधी को छोटे अपराध के मामले में पीड़ित के साथ विवाद को सुलझाने का अवसर प्रदान करती है, ऐसी स्थिति में जहाँ न्यायालय की अनुमति की आवश्यकता नहीं होती है और उसे सजा सुनाए जाने से बचाती है। चूंकि यह प्रावधान उन व्यक्तियों पर लागू नहीं होता है जिन्हें पहले से दोषी ठहराया जा चुका है, इसलिए पहली बार अपराध करने वाले लोग इस धारा[19] (दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 320) का लाभ उठा सकते हैं।

पहली बार अपराध करने वालों में योगदान देने वाले कारक:

भारत में, पहली बार अपराध करने वालों की आपराधिकता एक बहु-कारक अवधारणा द्वारा निर्धारित होती है जिसमें पारिवारिक, सामाजिक-आर्थिक, शैक्षिक, साथियों का दबाव, मनोवैज्ञानिक और सामाजिक-कानूनी कारक शामिल होते हैं।

(क) पारिवारिक कारक: पारिवारिक कारक और घर का माहौल किसी व्यक्ति के अपराधी बनने की क्षमता को बहुत प्रभावित करते हैं। मादक पदार्थों का सेवन, माता-पिता की खराब देखभाल और घरेलू हिंसा और बढ़ते पारिवारिक विवाद पहली बार अपराध करने वालों के बीच आपराधिक व्यवहार के महत्वपूर्ण कारण हैं। बच्चों को माता-पिता की देखभाल के बिना घरों में छोड़ना, जहाँ वे हिंसा का उपयोग देखते हैं, यह उनके नज़रिए से एक सामान्य अभ्यास बन जाता है और उन्हें यह भी धारणा दे सकता है कि विवादों को सुलझाने के मामले में हिंसा स्वीकार्य है[20] (Karam and Onyeneke 2022)। जब बच्चे माता-पिता की देखरेख में असफल हो जाते हैं और माता-पिता आपराधिक गतिविधियों में अपनी भागीदारी के कारण उन्हें अनुकरण का उदाहरण देने में विफल हो जाते हैं, तो बच्चे उन्हीं कार्यों की नकल करते हैं। इसके अतिरिक्त, जो बच्चे अव्यवस्थित घरों से हैं या जिनके माता-पिता उन्हें अनदेखा करते हैं, वे किसी अन्य स्थान पर ध्यान आकर्षित कर सकते हैं, जो अक्सर उन्हें भटका देता है और आपराधिक गतिविधियों में शामिल कर देता है।

(ख) सामाजिक-आर्थिक कारक: किसी व्यक्ति द्वारा आपराधिक कृत्य करने की संभावना उसकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति पर निर्भर करती है, इसलिए प्रमुख सामाजिक-आर्थिक कारक बेरोजगारी और गरीबी हैं, जिनमें से अधिकांश भारत में पहली बार अपराध करने वालों को प्रभावित करते हैं। कम आय वाले परिवारों में नौकरियों और आवश्यक संसाधनों की कमी के कारण अक्सर उन्हें नौकरी नहीं मिल पाती, जिसके कारण वे निराश महसूस करते हैं और यहां तक कि उनमें निराशा की भावना भी पैदा हो जाती है[21] (राज और रहमान 2023)। इससे कई लोगों को यह सोचने पर मजबूर होना पड़ सकता है कि अधिक आय अर्जित करने की स्थिति में

[18] "(कारावास अधिनियम, 1984 की धारा 59-ए)"

[19] "(दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 320)"

[20] करम, एली एच., और क्रिस्टोफर चिमाओबी ओनीनेके। 2022. "An Exploratory Study of Crime: Examining Lived Experiences of Crime through Socioeconomic, Demographic, and Physical Characteristics." शहरी विज्ञान 4-16

[21] राज, प्रणव, और एमडी मिज़ानौर रहमान। 2023. "Revisiting the economic theory of crime A state-level analysis in India." । कॉजेंट सोशल साइंसेज 4-14।

रहने के लिए अपराध करना जायज़ है। नतीजतन, गरीबी का मतलब है कि एक व्यक्ति की बुनियादी ज़रूरतें पूरी नहीं होती हैं, और इसे हासिल करने के लिए, गरीबी में रहने वाले लोग चोरी और नशीली दवाओं की तस्करी जैसी आपराधिक गतिविधियों का सहारा ले सकते हैं[22] (K.B.Das, 2017)। इसी तरह, युवाओं में बेरोजगारी की उच्च दर पहली बार अपराध करने का कारण है क्योंकि अधिक युवा जीविकोपार्जन के लिए आपराधिक गतिविधियों का सहारा लेने के लिए मजबूर हैं। इसके अलावा, उग्रवाद का समर्थन करने वाली विश्वास प्रणालियाँ भारत के चरम आर्थिक विभाजन के साथ मेल खाती हैं जिसके परिणामस्वरूप सामाजिक अन्याय की भावनाएँ पैदा होती हैं और परिणामस्वरूप, अपराध बढ़ता है।

(ग) शिक्षात्मक कारक: किसी व्यक्ति की अपराध करने की प्रवृत्ति काफी हद तक उसकी शैक्षिक पृष्ठभूमि और शिक्षा की गुणवत्ता से निर्धारित होती है। शिक्षा कानूनी कार्य के लिए आवश्यक जानकारी और कौशल प्रदान करने के अलावा नैतिकता और सामाजिक कर्तव्य की भावना पैदा करती है। कम या बिना शिक्षा वाले लोगों को रोजगार पाने में परेशानी होती है और वे जीवित रहने के लिए अपराध का सहारा ले सकते हैं। जिन लोगों को घटिया शिक्षा, अपर्याप्त प्रशिक्षण और अपर्याप्त बुनियादी ढांचा मिलता है, वे कार्यबल के लिए तैयार नहीं होते, जिससे वे आपराधिक प्रभावों के प्रति अधिक संवेदनशील हो जाते हैं। उच्च ड्रॉपआउट दरें अधिक अपराध दरों से जुड़ी हुई हैं क्योंकि प्रारंभिक स्कूल छोड़ने वालों में अक्सर लाभकारी काम के लिए आवश्यक कौशल और साख की कमी होती है, खासकर कम आर्थिक स्थिति वाले स्थानों में[23] (Bateman 2020)।

(घ) साथियों का दबाव: किसी व्यक्ति के आपराधिक गतिविधियों में शामिल होने की संभावना उसके साथियों के दबाव से काफी हद तक प्रभावित हो सकती है, खासकर अगर वह व्यक्ति किशोर या युवा वयस्क हो। इसका मतलब यह है कि चूँकि सहकर्मी समूहों के सदस्य एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं, इसलिए समूह में जो लोग अवैध गतिविधियों में शामिल होते हैं, वे व्यक्तियों को समूह के मानदंडों का पालन करने के लिए मजबूर करते हैं और इसका परिणाम अपराध होता है। बदमाशी से मादक द्रव्यों के सेवन की प्रवृत्ति भी बढ़ सकती है, जिसके कारण व्यक्ति अपनी आदत को बनाए रखने के लिए आपराधिक गतिविधियों में संलग्न हो जाता है, क्योंकि नशे के आदी व्यक्ति अपराधी बन जाते हैं, क्योंकि उन्हें अपनी अगली खुराक के लिए चोरी करनी पड़ती है। इसके अलावा, व्यक्ति अपने साथियों के समूह के अनुरूप होने के तरीके के रूप में आपराधिक गतिविधियों में संलग्न हो सकता है, क्योंकि जब उन्हें पता चलता है कि दूसरे लोग उन्हें स्वीकार नहीं करते हैं तो वे दबाव महसूस करते हैं। ये तत्व किसी निश्चित कार्य की अवैधता के संबंध में साथियों के साथ मजबूर अनुपालन की भूमिका पर जोर देते हैं।

(ड.) मनोवैज्ञानिक कारक: किसी व्यक्ति के पहली बार आपराधिक गतिविधि में शामिल होने के जोखिम को निर्धारित करने में मनोवैज्ञानिक कारक बहुत महत्वपूर्ण होते हैं; इसमें व्यक्ति का व्यक्तित्व विकार और मानसिक समस्याएं शामिल हैं। मानसिक स्वास्थ्य संबंधी बीमारियों जैसे आचरण संबंधी विकार, अवसाद और चिंता के बढ़ने के साथ ही आपराधिक दरें भी बढ़ जाती हैं, और यह सच है। यह देखा जा सकता है कि यदि व्यक्तियों को मानसिक स्वास्थ्य निदान की अनुमति दी जाती है, लेकिन उन्हें कोई चिकित्सा और उपचार नहीं मिलता है, तो वे अपने दुख को व्यक्त करते हुए अपराध करने लगते हैं, क्योंकि वे अपने आवेगों पर नियंत्रण खो देते हैं या अब अच्छे निर्णय नहीं ले पाते हैं। व्यक्तिगत परिवर्तनों में, आक्रामकता, आवेगशीलता और जोखिम लेने की तत्परता जैसे चरित्र लक्षण शामिल हैं। इसके अतिरिक्त, हिंसा की उच्च दर

[22] के.बी.दास। 2017. ""Poverty and its Social Dynamics." विकास में बुनियादी मुद्दे -I, 28-40। नई दिल्ली: इग्नू विश्वविद्यालय।

[23] बेटमैन, नीमा त्रिवेदी। 2020. . "Why young people commit crime and how moral education could help – new research." । theconversation.com. 05 15. https://theconversation.com/why-young-people-commit-crime-and-how-moral-education-could-help-new-research-131855.

व्यवहार में गिरावट और विकास के प्रारंभिक चरणों में दर्दनाक स्थितियों के संपर्क में आने पर अपराध करने की संभावना को जन्म दे सकती है।[24] (Ghiasi, Azhar and Singh 2023)।

पहली बार अपराध करने वालों के सामने आने वाली चुनौतियाँ

भारत में, अपराधी को अपराध में शामिल होने के अपने आचरण के कारण कानूनी नतीजों के अलावा कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। वे विभिन्न मनोवैज्ञानिक, सामाजिक और प्रणालीगत चुनौतियों का अनुभव करते हैं जो चुनौतियों की एक प्रणाली बनाती हैं जिनका सामना उन्हें अपनी रिहाई के बाद करना पड़ सकता है और समाज में वापस लौटने पर फिर से अपराध करने की संभावना होती है[25] (Sunil Batra v. Delhi Administration, 1979)। इन कठिनाइयों को समझने के लिए हस्तक्षेप और सहायता प्रणालियों का निर्माण करना आवश्यक है, जो इन मुद्दों का समाधान कर सकें।

(क) कानूनी चुनौतियां और प्रक्रियात्मक चुनौतियां

प्राथमिक बाधा न्यायिक प्रणाली में प्रक्रियागत चुनौतियाँ हैं क्योंकि यह जटिल और डराने वाली हो सकती है। पहली बार अपराध करने वाले अधिकांश लोगों के लिए, अपर्याप्त कानूनी अनुभव और पर्याप्त ज्ञानवर्धक सहायता के कारण, उनके खिलाफ़ लगाए गए आरोपों, उनकी स्वतंत्रता और ऐसी स्थितियों के साथ आने वाली कानूनी प्रक्रियाओं को समझना मुश्किल होगा। इस अज्ञानता के कारण, लोग गलत निर्णय ले सकते हैं, उदाहरण के लिए, प्रतिकूल दलीलों को स्वीकार करना और अन्यायपूर्ण सजा के खिलाफ अपील न करना। हालाँकि, ऊपर बताए गए दो कारक अभी भी एकमात्र कमियाँ नहीं हैं, क्योंकि अंतिम समस्या, तीव्र, दूरगामी और आवश्यक, किसी भी कानूनी कार्रवाई को प्राप्त करने में होने वाली देरी है। भारतीय कानूनी प्रक्रिया अपने मामलों के भारी बैकलॉग के लिए प्रसिद्ध है, जिसके परिणामस्वरूप बहुत लंबे मुकदमे होते हैं जिन्हें पूरा होने में दशकों लग जाते हैं[26] (Younus 2024)। अपराधी की मनोवैज्ञानिक और भावनात्मक स्थिति पर नकारात्मक प्रभाव डालने के अलावा, देरी से उसके पारस्परिक और व्यावसायिक गतिविधियों पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। मुकदमेबाजी में लंबा समय लग सकता है और इससे अनिवार्य रूप से रोजगार का नुकसान हो सकता है, अपराधी के वित्तीय भविष्य में अस्थिरता आ सकती है और उसके रिश्तेदारों के साथ उसके रिश्ते खराब हो सकते हैं; ये कारक अपराधी के लिए मुकदमे के बाद खुद को फिर से स्थापित करना मुश्किल बनाते हैं।

(ख) मनोवैज्ञानिक और भावनात्मक चुनौतियाँ

विशेष रूप से पहली बार अपराध करने वालों के लिए अपराधी माना जाना उनकी मनोवैज्ञानिक स्थिति पर भारी असर डाल सकता है । अपराधी रिकॉर्ड का मतलब है दूसरों और समाज के लिए एक अनुत्पादक व्यक्ति के रूप में शर्म और अपराधबोध और अकेलेपन की भावनाएँ। समाज में पूर्व दोषियों को कलंकित करने की प्रवृत्ति इन भावनाओं को और अधिक बढ़ा देती है, जिससे उन पर काबू पाना लगभग असंभव हो जाता है[27] (Moore, Folk and Tangney 2018)। सामाजिक समर्थन का अभाव भी चिंता, अवसाद का कारण बन सकता है, और सबसे खराब स्थिति में वे आत्महत्या तक पर विचार कर सकते हैं। अक्सर पहली बार अपराध करने वालों को गिरफ्तारी के दौरान या हिरासत में रहते हुए अत्यधिक दबाव और यातना से गुजरना पड़ता है जैसे कि भीड़भाड़, क्रूरता, खराब भौतिक सुविधाएँ आदि । जेल से रिहा होने वाले कुछ कैदियों पर हिंसक अपराधियों के संपर्क में आने से मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ सकता है और उन्हें जेल में रहने से मनोवैज्ञानिक नतीजों या सामाजिक प्रभावों का सामना करना पड़ सकता है, जिससे

[24] घियासी, नोमान, युसरा अज़हर, और जसबीर सिंह। 2023. "Psychiatric Illness and Criminality." स्टेटपर्ल्स।

[25] सुनील बत्रा बनाम दिल्ली प्रशासन। 1979. 1980 एआईआर 1579 (भारत का सर्वोच्च न्यायालय, 20 दिसंबर)

[26] यूनुस, मोहम्मद। 2024. "Challenges Faced By The Criminal Justice System In The Process Of Reformation Of Criminals." legalserviceindia.com. https://www.legalserviceindia.com/legal/article-15596-challenges-faced-by-the-criminal-justice-system-in-the-process-of-reformation-of-criminals.html.

[27] मूर, के.ई., के.सी. फोक, और जे.पी. टैंगनी। 2018. "Self-stigma among criminal offenders: Risk and protective factors." कलंक और स्वास्थ्य 242-251

वे समाज में वापस आने के लिए आसानी से समायोजित नहीं हो पाते[28] (kashyap 2022)।

(ग) सामाजिक और आर्थिक चुनौतियाँ

आपराधिक सजा के साथ-साथ सामाजिक परेशानी भी आती है क्योंकि समाज द्वारा व्यक्ति को अपराधी माना जाता है। पहली बार अपराध करने वालों के लिए, दोषी व्यक्तियों का यह कलंक दोस्तों और परिवार के सदस्यों के साथ संबंधों को भी प्रभावित कर सकता है। परिवार के सदस्य शर्म के कारण या अपराधी से जुड़े होने के डर से पकड़े गए व्यक्ति से अपने संबंध खत्म करने का फैसला भी कर सकते हैं[29] (Karam and Onyeneke 2022))। यह सामाजिक रिश्तों को भी प्रभावित करता है, खासकर पारिवारिक रिश्तों को, क्योंकि यह शर्मनाक है। अपराधी के सामाजिक दायरे में शामिल लोगों द्वारा उनका समर्थन करने से विमुख होने के कारण व्यक्ति के सामाजिक दायरे का समर्थन कम हो सकता है। उपयोग किये जाने वाले कुछ तरीके इस प्रकार हैं: एक सफल पुनर्मिलन कार्यक्रम में समर्थन और प्रोत्साहन की आवश्यकता होती है, लेकिन सामाजिक अलगाव इस प्रक्रिया को धीमा कर देता है। वास्तव में, कुछ नियोक्ता आपराधिक पृष्ठभूमि वाले लोगों को नौकरी देने में बहुत अनिच्छुक होते हैं। इस सीमा के कारण कम नौकरियाँ उपलब्ध होती हैं, इसलिए जीवन निर्वाह मजदूरी पर बहुत बुरा असर पड़ता है। वे अस्थिर आय प्राप्त करने की स्थिति में होने की संभावना रखते हैं और इससे उनकी ज़रूरतों को पूरा करने में कठिनाई हो सकती है जिससे वे गरीबी में फंस सकते हैं। बुनियादी ज़रूरतों का सामना करने से व्यक्ति के अपराध की ओर पुनः लौटने की संभावना बढ़ जाती है, क्योंकि गिरफ़्तार होने की संभावना लाभदायक रोज़गार पाने की संभावना को समाप्त कर देती है[30] (J Fox 2013)। साथ ही, जमानत की राशि, जुर्माना, वकील की फ़ीस और अन्य संबंधित लागतें अपराधी के लिए बहुत ज़्यादा हो सकती हैं। यह भी दर्शाता है कि पहली बार अपराध करने वालों को कानूनी निहितार्थों के साथ-साथ सामाजिक और वित्तीय प्रभावों का भी सामना करना पड़ता है। चूँकि समस्याएँ बहुआयामी हैं, इसलिए सुधारवादी, पारस्परिक और नीतिगत उपचार को शामिल करते हुए उपचार की एक व्यापक रणनीति का पालन किया जाना चाहिए।

(घ) व्यवस्थित चुनौतियाँ

भारतीय आपराधिक न्याय प्रणाली में कई समस्याएं हैं, लेकिन सबसे अधिक उद्त और प्रमुख रूप से विचार की जाने वाली समस्याओं में से एक है पुनर्एकीकरण पर ध्यान केंद्रित न करना। परिवीक्षा और सामुदायिक सेवा निर्धारित करने वाले कानूनी प्रावधानों का बार-बार और अपूर्ण रूप से उपयोग किया जाता है। कैदियों के पास उचित कार्यक्रमों का अभाव है जो उन्हें समाज में फिर से एकीकृत करने में मदद कर सकते हैं क्योंकि जेल सेवाओं द्वारा उन्हें उचित पुनर्वास कार्यक्रमों के साथ मुक्त करने के लिए मुआवजा नहीं दिया जाता है[31] (Naik 2019)। इसके अलावा, रिहाई के बाद कैदियों के लिए पुनर्वास सेवाएं और सहायता संरचनाएं बहुत कम हैं। पूर्व अपराधियों को नौकरी या आवास या उनके मानसिक स्वास्थ्य संबंधी मुद्दों के लिए उपचार खोजने में मदद करने वाली सेवाएँ मिलना मुश्किल है। यह विशेष रूप से कहा गया है कि कई पहली बार अपराध करने वाले अपराधियों के साथ-साथ अन्य अपराधियों के लिए अपने जीवन को फिर से बनाना और ऐसे महत्वपूर्ण संसाधनों की कमी होने पर अपराध में वापस जाने से बचना बहुत चुनौतीपूर्ण है।

पुनरावृत्ति को कम करने के लिए पुनर्वास दृष्टिकोण

अपराध की पुनरावृत्ति उन अपराधियों की प्रवृत्ति है जिन्हें दोषी ठहराया गया है और वे अन्य आपराधिक गतिविधियों को जारी

[28] कश्यप, शुभम। 2022. "Major problems of prison system in India." Timesofindia.com. 01 01. https://timesofindia.indiatimes.com/readersblog/shubham-kashyap/major-problems-of-prison-system-in-india-40079/.

[29] करम, एली एच., और क्रिस्टोफर चिमाओबी ओनीनेके। 2022. "An Exploratory Study of Crime: Examining Lived Experiences of Crime through Socioeconomic, Demographic, and Physical Characteristics." शहरी विज्ञान 4-16

[30] जे.फॉक्स, कैथरीन। 2013. "Restoring the social: offender reintegration in a risky world." इंटरनेशनल जर्नल ऑफ कम्पेरेटिव एंड क्रिमिनल जस्टिस 236-252

[31] नाइक, किरण आर. 2019. "THE PROBLEMS OF PRISONERS: AN ANALYSIS." इंटरनेशनल जर्नल ऑफ रिसर्च एंड एनालिटिकल रिव्यूज़ 268-278

रखते हैं। यह एक ऐसा क्षेत्र है जिसे अपराधियों के पुनर्वास और सुधार के माध्यम से काफी हद तक निपटा जा सकता है। अपराध के कारणों पर योग्यता-आधारित ध्यान केंद्रित करके और पुनः एकीकरण के साथ समर्थन प्रदान करके पुनः अपराध को कम करना संभावित रूप से संभव है। ऐसी नीतियों के संचय के उपयोगी होने के लिए उन्हें सामाजिक, आर्थिक और व्यक्तिगत कारकों को ध्यान में रखना होगा जो अपराध को परिभाषित करते हैं। शर्म, नशीली दवाओं और शराब का उपयोग, बेरोजगारी, मानसिक विकार और अशिक्षा जैसे कारकों के कारण व्यक्ति एक या दूसरे तरीके से आपराधिक व्यवहार में वापस आ सकते हैं। पुनरावृत्ति अक्सर अप्रभावी निवारक उपायों का परिणाम होती है क्योंकि कई पारंपरिक दंडात्मक तकनीकें ऐसे मुद्दों को संबोधित करने में विफल रहती हैं। दूसरी ओर सुधारात्मक और पुनर्वास रणनीतियाँ इस चक्र में जारी नहीं रहने देती हैं और इसके बजाय अपराधियों को वैध जीवन जीने के लिए आवश्यक उपकरण और सहायता प्रदान करती हैं।

(क) पुनर्वास के घटक

i. **शिक्षा प्रशिक्षण-** शिक्षा और व्यावसायिक प्रशिक्षण पुनर्वास प्रक्रियाओं के महत्वपूर्ण पहलू हैं जिन्हें लागू किया जाना चाहिए। जबकि व्यावसायिक प्रशिक्षण कैदियों को ऐसे कौशल प्रदान कर सकता है जो जेल से बाहर आने के बाद रोजगार प्राप्त करने के लिए उपयोगी होते हैं, शिक्षा साक्षरता और संख्यात्मकता के स्तर को बढ़ाने में मदद कर सकती है[32] (Mohammed and Wan Mohamed, 2015)। रोजगार में लगे रहने से उद्देश्य और आर्थिक स्थिरता की भावना मिलती है, जिससे पुनरावृत्ति को रोकने में काफी मदद मिलती है।

ii. **मादक द्रव्यों के सेवन का उपचार-** अपराधियों के पास मादक द्रव्यों के सेवन की पुरानी पृष्ठभूमि होती है, और मादक द्रव्यों के सेवन से आपराधिक व्यवहार को बढ़ावा मिल सकता है। अपराधियों को व्यसनों पर उपचार कार्यक्रमों पर ध्यान केंद्रित करके मदद की जा सकती है जो अपराधियों के अपराध को दोहराने की भेद्यता को समाप्त करते हैं। ये ऐसे कार्यक्रम हैं जो व्यक्तियों को शराब की समस्या से निपटने और संयम बनाए रखने में मदद करते हैं; अक्सर इनमें चिकित्सा हस्तक्षेप, परामर्श और स्वयं सहायता समूह शामिल होते हैं।

iii. **मानसिक स्वास्थ्य परामर्श -** आपराधिक गतिविधियों ने संकेत दिया है कि अधिकांश अपराधी मानसिक बीमारी और विकारों से ग्रस्त हैं जो अपराध को बढ़ावा दे सकते हैं। इन समस्याओं को संबोधित कर यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि अपराधियों को मनोचिकित्सा के माध्यम से उन्हें परामर्श सत्र या उपचार में भाग लेने का अवसर मिले तो अपराधियों को उनके विकारों को नियंत्रित करने में मदद की जा सकती है [33] (Harte, 2015)।

सामाजिक कलंक को संबोधित करना

- **जागरूकता पहल-** पुनर्वास के महत्व और अपराधियों के मनोविज्ञान में बदलाव की संभावना के बारे में लोगों को शिक्षित करके दोषी व्यक्ति के दाग को कम किया जा सकता है। जन जागरूकता के लिए अभियान ऐसे लोगों की सफलता की कहानियों को प्रदर्शित कर सकते हैं जिन्होंने अपना जीवन बदल दिया है, यह साबित करते हुए कि पुनर्वास कारगर है। दोषी व्यक्तियों के पुनर्वास के बारे में जागरूकता पहल की कमी के कारण, दोषी को समाज से बहुत अधिक विरोध का सामना करना पड़ता है, जिससे उसके रिश्तेदारों के सामने उसका सम्मान कम हो जाता है।
- **सामुदायिक सहभागिता-** पुनर्वास पहल में समुदाय को शामिल करने से दोषी अपराधियों को उपलब्ध सहायता के नेटवर्क में काफी सुधार हो सकता है। ऐसे कार्यक्रम जिनमें स्वयंसेवकों को अपराधियों को सलाह देने और उनकी मदद करने की आवश्यकता होती है और उनके विश्वास को बढ़ावा देने और प्रतिकूल निर्णयों को कम करने के लिए स्थापित किया जा सकता है। दिशा और

[32] मोहम्मद, हादी, और वान अज़लिंडा वान मोहम्मद। 2015. "Reducing Recidivism Rates through Vocational Education and Training." प्रोसीडिया-सोशल एंड बिहेवियरल साइंसेज 272-276

[33] हार्टे, जोक एम. 2015. "Preventing crime in cooperation with the mental health care profession." अपराध, कानून और सामाजिक परिवर्तन 264-27

समर्थन प्रदान करके यह सहकारी दृष्टिकोण अपराधियों के अलावा समुदाय को पुनः एकीकरण प्रक्रिया को बेहतर ढंग से समझने और अपनाने में मदद करता है। इस तरह की सकारात्मक बातचीत आपराधिक रिकॉर्ड से जुड़े सामाजिक कलंक को कम कर सकती है जिससे एक ऐसा समुदाय विकसित हो सकता है जो अधिक स्वीकार्य और दयालु है। इन कार्यक्रमों में समुदाय द्वारा भागीदारी अंततः समुदाय की सामान्य सुरक्षा और शांति के साथ-साथ अपराधियों के प्रभावी पुनः एकीकरण को सुनिश्चित करने में मदद करती है।

- **सहायता नेटवर्क-** पूर्व अपराधियों के लिए सहायता नेटवर्क बनाने से उन्हें समाज में वापस आने के लिए आवश्यक महत्वपूर्ण सामाजिक संबंध बनाने में मदद मिल सकती है। सहायता समूह, सहकर्मी परामर्श कार्यक्रम और सामुदायिक संगठन ऐसे कुछ उदाहरण हैं जो अपराधियों को आवश्यक सहायता और प्रोत्साहन प्रदान कर सकते हैं, ताकि वे पुनः एकीकरण के दौरान आने वाली बाधाओं को दूर कर सकें (Nixon, 2020)[34]। व्यावहारिक और भावनात्मक सहायता प्रदान करने के अलावा ये नेटवर्क अपनेपन और समुदाय की भावना को बढ़ावा देते हैं जो पुनरावृत्ति को कम करने के लिए आवश्यक है (Kavanagh and Borrill, 2013)[35]। इन सहायता प्रणालियों के साथ बातचीत करके अपराधी दिशा-निर्देश और अनुकरणीय रोल मॉडल तक पहुँच प्राप्त कर सकते हैं - ये सभी समाज में अधिक सहज पुनः एकीकरण की सुविधा प्रदान करते हैं। अंत में ये पहल पुनः एकीकरण की संभावना को बढ़ाती है जो बड़े पैमाने पर समुदाय के साथ-साथ अपराधियों के लिए भी फायदेमंद है।[34/35]

बीएनएसएस और बीएनएस में की गई पहल-

(क) नए आपराधिक कानूनों में सामुदायिक सेवा का परिचय

छोटे-मोटे अपराधों के लिए सामुदायिक सेवा की शुरुआत भारत की कानूनी प्रणाली में एक क्रांतिकारी कदम है। इसमें एक निश्चित समय-सीमा के भीतर बिना भुगतान के काम पूरा करना शामिल है, जो कि सुधारात्मक मंजूरी के रूप में है, जो सेवा की प्रकृति को किए गए अपराध से जोड़ता है[36] (Bhat 2024)। यह अपराधी में जिम्मेदारी की भावना को बढ़ावा देता है और पुनः समाजीकरण और पुनर्स्थापनात्मक न्याय की अवधारणाओं के अनुरूप जेल प्रणाली पर भार को हल्का करता है।

यह छोटे-मोटे अपराधों के लिए पारंपरिक दंडात्मक उपायों से एक आदर्श बदलाव को दर्शाता है, जो न्याय के लिए अधिक पुनर्वास और समुदाय-केंद्रित दृष्टिकोण पर जोर देता है। सजा के रूप में सामुदायिक सेवा का प्रभाव न केवल अपने कानूनी निहितार्थों में क्रांतिकारी है, बल्कि व्यक्तिगत जवाबदेही, पुनः समाजीकरण और पुनर्स्थापनात्मक न्याय को बढ़ावा देने वाले अपराधियों की मानसिकता को फिर से आकार देने का भी वादा करता है[37]।

सामुदायिक सेवा बच्चों, बुजुर्गों, विकलांग लोगों और भाषा सीखने वालों सहित विभिन्न जरूरतमंद समूहों को लाभ पहुंचाने के लिए दी जा सकती है। इसके अतिरिक्त इसका उपयोग आश्रयों में जानवरों की मदद करने के लिए किया जा सकता है या स्थानीय पार्कों, ऐतिहासिक स्थलों, दर्शनीय क्षेत्रों आदि जैसे सार्वजनिक स्थानों के सुधार में योगदान दिया जा सकता है।

---

[34] निक्सन, सारा। 2020. " Giving back and getting on with my life': सहकर्मी सलाह, पूर्व अपराधियों की रोकथाम और पुनर्प्राप्ति।" प्रोबेशन जर्नल 48-60।

[35] कवानाघ, लौरा, और जो बोरिल। 2013. "Exploring the experiences ofex-offender mentors." प्रोबेशन जर्नल- जर्नल ऑफ़ कम्युनिटी एंड क्रिमिनल जस्टिस 401-410।

[36] भट, राजा मुजफ्फर। 2024. सामुदायिक सेवा: अब नए आपराधिक संहिता के तहत एक सजा। 06 11. 06 02, 2024 को एक्सेस किया गया। https://kashmirobserver.net/2024/06/11/community-service-now-a-punishment-under-new-criminal code/#:~:text=Community%20Service%20a%20Punishment,punishments%20for%20%E2%80%9Cpetty%E2%80%9D%20offences.

[37] शर्मा, नलिनी। 2023. भारत में पहली बार छोटे-मोटे अपराधों के लिए सामुदायिक सेवा को दंड के रूप में प्रस्तावित किया गया। 08 12. https://www.indiatoday.in/law-today/story/community-service-punishment-petty-offences-india-ipc-bharatiya-nyaya-sanhita-amit-shah-2419928-2023-08-12.

(ख) सामुदायिक दंड की पृष्ठभूमि

भारत में पहली बार, नई भारतीय न्याय संहिता ने सामुदायिक सेवा को दंड के एक तरीके के रूप में प्रस्तावित किया है।

लेकिन दंड के गैर-हिरासत रूपों के उपयोग पर पिछले कई न्यायिक निर्णयों और समितियों के साथ-साथ आयोगों द्वारा चर्चा की गई है। 42वें विधि आयोग की रिपोर्ट ने दंड के गैर-हिरासत रूपों को शामिल करने का सुझाव दिया[38] "भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 ने कारावास के विकल्प के रूप में पर्यवेक्षित सामुदायिक सेवा आदेशों की अवधारणा को पेश करने की मांग की;[39] और मलिमथ समिति की रिपोर्ट ने सामाजिक कल्याण, आर्थिक और अन्य अपराधों से संबंधित कम गंभीर अपराधों के लिए वैकल्पिक दंड के रूप में सामुदायिक सेवा की शुरूआत की सिफारिश की (आपराधिक न्याय प्रणाली के सुधार पर समिति खंड: 1, (15.6) 2003)[40]।

हिरासत में सजा के विकल्प के रूप में सामुदायिक सेवा को 1978 में *बाबू सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य* 1978[41] मामले में न्यायिक समर्थन भी मिला, जिसके सिद्धांतों को *राज्य बनाम संजीव नंदा 2012*[42] में इस तरह दोहराया गया कि 'विभिन्न देशों में अपराधी अब स्वेच्छा से समुदाय की सेवा करने के लिए आगे आते हैं, खासकर मोटर वाहनों से संबंधित अपराधों में। अपराध जितना गंभीर होगा, सजा उतनी ही अधिक होगी। लेकिन, समाज की सेवा करना वास्तव में सही अर्थों में सजा नहीं है, क्योंकि अपराधी उस समुदाय को कुछ वापस देता है, जिसका वह ऋणी है। अपराधी के आचरण की न केवल समुदाय द्वारा सराहना की जाएगी, बल्कि इससे उसे बहुत सांत्वना भी मिलेगी, खासकर ऐसे मामले में, जहां किसी व्यक्ति की कार्रवाई और निष्क्रियता के कारण मानव जीवन खो गया हो।'

सामुदायिक सेवाओं की अवधारणा में समुदाय के कल्याण के लिए, अवकाश के समय और एक निश्चित अवधि के भीतर अवैतनिक कार्य करना शामिल हो सकता है। इस प्रकार, सामुदायिक सेवा का मूल दर्शन दंड (पुनः समाजीकरण) के विशेष निवारक उद्देश्य के साथ-साथ व्यक्तिगत जवाबदेही पर जोर देकर पुनर्स्थापनात्मक न्याय के विचार के साथ बहुत अच्छी तरह से फिट बैठता है।

- **छोटे अपराधों पर ध्यान केंद्रित करना:**

बड़े और छोटे अपराधों के बीच सज़ा की मात्रा को उचित रूप से अलग करना आवश्यक है, और सामुदायिक सेवाएँ इसका सबसे अच्छा उदाहरण है जहाँ सामुदायिक सेवा मुख्य रूप से छोटे अपराधों को लक्षित करती है, छोटे अपराधों के लिए सूक्ष्म प्रतिक्रियाओं की आवश्यकता को पहचानती है। पारंपरिक दंड के विकल्प को प्रस्तुत करके, कानूनी प्रणाली का उद्देश्य छोटे उल्लंघनों के लिए न्याय के अधिक संतुलित और पुनर्वासकारी रूप को बढ़ावा देना है।

सामुदायिक सेवा के लिए योग्य अपराधों के उदाहरण

भारतीय न्याय संहिता, 2023 के तहत कई ऐसे अपराधों की पहचान की गई है जिनके लिए सामुदायिक सेवा निर्धारित की जा सकती है। इनमें शामिल हैं, लेकिन इन्हीं तक सीमित नहीं हैं:

- अवैध व्यापार में लोक सेवकों की संलिप्तता (धारा 202)
- भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 की धारा 84 के तहत एक उद्घोषणा के जवाब में गैर-उपस्थिति
- वैध शक्ति के प्रयोग को रोकने या मजबूर करने के लिए आत्महत्या का प्रयास (धारा 226)
- 5000 रुपये से कम के अपराध के लिए संपत्ति की चोरी का पहला दोषसिद्धि (धारा: 303(2))
- शराब के नशे में धुत व्यक्ति द्वारा सार्वजनिक स्थान पर दुर्व्यवहार (धारा 355)
- मानहानि (धारा:356)

[38] के.वी.सुंदरम। 1971. भारतीय दंड संहिता पर 42वें विधि आयोग की रिपोर्ट। आपराधिक कानून में संशोधन, नई दिल्ली: विधि मंत्रालय, भारत सरकार।

[39] "खंड 27, भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978"

[40] आपराधिक न्याय प्रणाली के सुधार पर समिति खंड:1,(15.6)। नई दिल्ली: गृह मंत्रालय, 2003

[41] बाबू सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य। 1978. 1978 एआईआर 527 (भारत का सर्वोच्च न्यायालय, 31 जनवरी)।

[42] राज्य ट्र.पी.एस.लोधी कॉलोनी, नई दिल्ली बनाम संजीव नंदा। 2012. एआईआर 2012 एससी 3104 (भारत का सर्वोच्च न्यायालय, 3 अगस्त)।

दंड के रूप में सामुदायिक सेवा की शुरूआत के साथ, इसकी शर्तें/रूपरेखा संबंधित सरकारों द्वारा परिभाषित की जानी है।

(ग) उभरती दलील सौदेबाजी में नया आपराधिक कानून:

भारत में 2006 में शुरू की गई **दलील सौदेबाजी** ,अभियोजन पक्ष से रियायतों के बदले में प्रतिवादियों को कम आरोपों या कम सजा के लिए दोषी होने की अनुमति देती है। भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता (बीएनएसएस) इस प्रक्रिया को नियंत्रित करती है, जो योग्य अपराधों, आवेदन प्रक्रियाओं और अदालती दिशा-निर्देशों को रेखांकित करती है (भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 एन.डी.)[43]। नए कानूनों में, **दलील सौदेबाजी** के तहत, पहली बार अपराध करने वालों को कम सजा देना भी एक बहुत जरूरी बदलाव है, जिसमें उन्हें न्यूनतम सजा का 1/6 हिस्सा मिलेगा; शुरू में, उन्हें न्यूनतम सजा का केवल 1/4 हिस्सा ही मिला था।

(i) बीएनएसएस के अंतर्गत दलील सौदेबाजी के मुख्य बिंदु

- **पात्रता: दलील सौदेबाजी** उन अपराधों पर लागू होती है जिनमें मृत्युदंड, आजीवन कारावास या सात साल से अधिक की सजा नहीं होती। इसमें देश की सामाजिक-आर्थिक स्थिति को प्रभावित करने वाले अपराध शामिल नहीं हैं, जैसे महिलाओं के खिलाफ या 14 साल से कम उम्र के बच्चों के खिलाफ अपराध।

- **आवेदन:** अभियुक्त को आरोप तय होने के 30 दिनों के भीतर आवेदन प्रस्तुत करना होगा, साथ में एक हलफनामा भी प्रस्तुत करना होगा जिसमें यह पुष्टि की गई हो कि वह स्वेच्छा से ऐसा कर रहा है तथा उसे पहले कभी इसी अपराध के लिए दोषी नहीं ठहराया गया है।

- **अदालती कार्यवाही:** स्वैच्छिकता सुनिश्चित करने के लिए अदालत कैमरे के सामने अभियुक्त की जांच करती है। यदि संतुष्ट हो तो यह दोनों पक्षों को पारस्परिक रूप से संतोषजनक समाधान के लिए बातचीत करने के लिए अधिकतम 60 दिन का समय देता है, जिसमें पीड़ित को मुआवजा देना भी शामिल है।

- **निपटान के लिए दिशा-निर्देश:** न्यायालय में सरकारी वकील, जांच अधिकारी, आरोपी और पीड़ित को चर्चा में शामिल किया जाता है। यह प्रक्रिया स्वैच्छिक होनी चाहिए, अगर वांछित हो तो कानूनी प्रतिनिधित्व की अनुमति दी जा सकती है।

- **परिणाम:** यदि कोई निर्णय हो जाए, अदालत एक रिपोर्ट तैयार करती है। अन्यथा, यह अवलोकनों को दर्ज करता है और मुकदमे को आगे बढ़ाता है।

- **सज़ा:** सफल दलील सौदेबाजी में न्यायालय पीड़ित को मुआवजा प्रदान करता है तथा परिवीक्षा, अच्छे आचरण के लिए रिहाई या कम सजा पर विचार करता है। पहली बार अपराध करने वाले अपराधियों के प्रति उदारता दिखाई जाती है, जिन्हें संभावित रूप से निर्धारित सजा का एक-चौथाई (न्यूनतम सजा के लिए) या एक-छठा (विस्तार योग्य सजा के लिए) मिलता है।

- **अंतिम स्थिति :** न्यायालय का निर्णय अंतिम होता है, तथा अपील के लिए सीमित रास्ते होते हैं। कुल मिलाकर, बीएनएसएस ने दलील-सौदेबाजी प्रक्रिया को सुव्यवस्थित किया है, जिसमें दक्षता, पीड़ित की भागीदारी और पहली बार अपराध करने वालों के लिए उदारता पर ध्यान केंद्रित किया गया है। हालाँकि, सख्त समय सीमा और कुछ अपराधों के बहिष्कार से इसकी प्रयोज्यता सीमित हो सकती है, जिसके लिए अभ्यास के साथ-साथ सुधार की आवश्यकता है।

(ii) दंड प्रक्रिया संहिता (सीआरपीसी) में प्रमुख परिवर्तन:

- **समय सीमा:** बीएनएसएस ने आवेदन दाखिल करने के लिए (30 दिन) और सीआरपीसी में अनुपस्थित रहने पर निपटान के लिए (60 दिन) तक की समय सीमा शुरू की है।

[43] 2024."New Criminal Law." jpassociates.co.in/. 01 04. 06 04, 2024 को एक्सेस किया गया। https://jpassociates.co.in/bharatiya-nagarik-suraksha-sanhita-2023-bnss/

- **पहली बार अपराध करने वालों के लिए उदारता:** बीएनएसएस पहली बार अपराध करने वालों के लिए न्यूनतम और बढ़ाई जा सकने वाली सजाओं के बीच अंतर करते हुए सीआरपीसी से अलग हटकर उदारता को प्रोत्साहित करता है। बीएनएसएस की धारा 293 के अनुसार न्यायालय पहली बार अपराध करने वाले ऐसे अपराधियों के लिए कानून में निर्धारित न्यूनतम सजा के एक-चौथाई के बराबर सजा दे सकता है जिनका कोई आपराधिक इतिहास नहीं है। सीआरपीसी की धारा 265ई के तहत न्यायालय को यह छूट उपलब्ध नहीं थी।

- **सुनवाई में देरी**: बीएनएसएस की धारा 479 के अनुसार, पहली बार अपराध करने वाले व्यक्ति को जमानत दी जा सकती है, जिसने कानून में निर्धारित कारावास की अधिकतम अवधि के एक तिहाई समय तक हिरासत में रखा हो। अन्य मामलों में, हिरासत में बिताई गई अवधि अधिकतम अवधि की आधी होनी चाहिए। इसके अलावा, यदि अभियुक्त को निर्णय से पहले जेल में रखा जाता है, तो सजा का एक तिहाई पूरा होने के बाद, जेल अधीक्षक का यह कर्तव्य है कि वह बीएनएसएस की धारा 481 (सी) के अनुसार एक आवेदन लिखे।

- **पीड़ित की भागीदारी:** बीएनएसएस, सीआरपीसी के विपरीत निपटान प्रक्रिया में पीड़ित की भागीदारी पर जोर देता है।

निष्कर्ष

भारतीय आपराधिक न्याय प्रणाली में, विशेष रूप से नए आपराधिक कानूनों के आगमन के साथ, पहली बार अपराध करने वालों पर ज़्यादा ज़ोर दिया जाता है क्योंकि उनकी संख्या बढ़ रही है और सही हस्तक्षेप के साथ प्रभावी पुनर्संयोजन की संभावना है। अपराध की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के प्रकाश में आपराधिक व्यवहार को परिभाषित करना और उससे निपटना अधिक कठिन है, क्योंकि सामाजिक रूप से निर्मित शब्द अलग-अलग संस्कृतियों में अलग-अलग होता है। चूँकि वे आम तौर पर आपराधिक दुनिया में कम शामिल होते हैं, इसलिए पहली बार अपराध करने वाले अपराधियों को शुरुआती हस्तक्षेप और पुनर्वास के लिए एक विशेष अवसर मिलता है।

भारत में कानूनी ढाँचे जो दंड की तुलना में सुधार की संभावना पर जोर देते हैं जैसे कि अपराधियों की परिवीक्षा अधिनियम और दंड प्रक्रिया संहिता के विशेष प्रावधान पुनर्वास और उदारता के अवसर प्रदान करते हैं। जेल के विकल्प प्रदान करके इन उपायों से पहली बार अपराध करने वालों के बीच दोबारा अपराध करने के जोखिम को कम करने की उम्मीद है।

प्रभावी पुनर्संयोजन को सक्षम करने के लिए ऐसे संबंध समुदाय में एकजुटता और सदस्यता की भावना को बढ़ावा देते हैं। इसलिए रोकथाम, पुनर्वास और पुनर्संयोजन को पहली बार अपराध करने वालों के लिए भारतीय आपराधिक न्याय प्रणाली की बहुआयामी प्रतिक्रिया के आवश्यक लक्ष्यों के रूप में माना जा सकता है। अपराधों की पुनरावृत्ति से बचने और एक सुरक्षित समाज को बढ़ाने के लिए जो समानता के संदर्भ में संतुलित है, आपराधिक व्यवहार से संबंधित एक संपूर्ण स्पेक्ट्रम को समझा जाना चाहिए और परिणामस्वरूप बेहतर सहायता प्रणाली लागू की जानी चाहिए।

पारंपरिक दंडात्मक उपायों से अलग हटकर यह एक प्रगतिशील दृष्टिकोण को दर्शाता है जो पुनर्स्थापनात्मक न्याय और पुनर्वास में वैश्विक रुझानों के साथ संरेखित है। भारतीय न्याय संहिता, 2023 पहली बार भारत में दंड की एक विधि के रूप में सामुदायिक सेवा का प्रस्ताव करके और दलील सौदेबाजी जैसे अन्य पुनर्वास दृष्टिकोणों में सुधार करके नई राह खोलता है।

अपराधियों को दंडित करने के बजाय उनके पुनर्वास पर ध्यान केंद्रित करना एक प्रभावी तरीका है जो न केवल व्यक्तिगत अपराधियों को बल्कि पूरे समुदाय को भी लाभ पहुंचाता है। पहली बार अपराध करने वालों के पुनः एकीकरण में कानून, सामाजिक समर्थन और सार्वजनिक जागरूकता के लिए निरंतर प्रयासों से महत्वपूर्ण रूप से मदद मिलेगी ताकि एक सहिष्णु समाज को बढ़ावा दिया जा सके।

तकनीकी विचारणः साक्ष्यों का नए कानूनी परिदृश्य के अनुकूल होना

अदिति त्रिपाठी*

सार

इण्डियन एवीडेंस एक्ट का क्रमिक विकास, जो हाल ही में प्रस्तुत भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 के रूप में परिणत हुआ है, भारतीय आपराधिक न्याय प्रणाली की परिवर्तनकारी यात्रा को दर्शाता है। यह लेख भारतीय साक्ष्य अधिनियम की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को बताता है और भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 के कार्यान्वयन के माध्यम से साक्ष्य कानून में लाए गए परिवर्तनों पर ध्यान केंद्रित करता है। भारतीय साक्ष्य अधिनियम इलेक्ट्रॉनिक रिकार्ड के अर्थ को विस्तृत करता है, प्रमाणीकरण प्रक्रिया को सरल बनाता है तथा उन अंतरालों को पाटता है जो इलेक्ट्रॉनिक डेटा के उचित मूल्यांकन में बाधा डालते हैं। लेख में उन ऐतिहासिक कानूनी निर्णयों पर चर्चा की गई है, जिन्होंने इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य की व्याख्या, भारतीय साक्ष्य अधिनियम के तहत प्रमाणीकरण आवश्यकताओं को आकार दिया है तथा बताया है कि नए कानूनों के आलोक में आज वे निर्णय किस प्रकार लागू हैं। यह नए आपराधिक कानूनों के माध्यम से पेश किए गए विधायी सुधारों के व्यापक संदर्भ की पड़ताल करता है, देश के एक सुसंगत और कुशल आपराधिक कानूनी परिदृश्य को बनाने के लिए नए आपराधिक कानून के माध्यम से पेश किए गए परिवर्तनों के तालमेल पर जोर देता है।

भारतीय साक्ष्य अधिनियम की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और विकास

इण्डियन एवीडेंस एक्ट का मसौदा सर जेम्स फिट्ज़ जेम्स स्टीफन द्वारा स्टीफन आयोग के तहत तैयार किया गया था, जो वायसराय की विधान परिषद के विधि सदस्य थे। यह 1 सितंबर, 1872 को लागू हुआ। समय के साथ, भारतीय साक्ष्य अधिनियम में कई अन्य कानूनों की तुलना में अपेक्षाकृत कम संशोधन हुए। संशोधनों का पहला सेट 17 अगस्त, 1872 को भारत के राजपत्र के माध्यम से पेश किया गया था। 'साक्ष्य अधिनियम में संशोधन के लिए विधेयक' शीर्षक वाले इस प्रकाशन को 12 संशोधनों के साथ प्रकाशित किया गया था।

* अधिवक्ता, सर्वोच्च न्यायालय

विधेयक के साथ संलग्न उद्देश्यों और कारणों के कथन में कहा गया है कि *"इस विधेयक का प्राथमिक उद्देश्य कुछ नियमों को जारी रखना है, जिनके बारे में माना जाता है कि उन्हें भारतीय साक्ष्य अधिनियम द्वारा अनजाने में निरस्त कर दिया गया था"*[1] और कहा कि *"साथ ही कुछ लिपिकीय और अन्य आकस्मिक त्रुटियों को ठीक करने का अवसर लिया गया है, जिन पर ध्यान आकर्षित किया गया है।"* [1] कानून के अधिनियमन के 128 वर्षों के बाद संशोधनों का अगला सेट पेश किया गया है। वर्ष 1995 में भारत के आमजन को पहली बार इंटरनेट की सुविधा मिली और उसके पांच साल बाद, 'इलेक्ट्रॉनिक डेटा इंटरचेंज और इलेक्ट्रॉनिक संचार के अन्य साधनों द्वारा किए गए लेनदेन को कानूनी मान्यता'[2] प्रदान करने के लिए सूचना और प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 पारित किया गया। इसने आधुनिक तकनीक के साथ भारतीय कानूनों को एकीकृत करने की शुरुआत की और इलेक्ट्रॉनिक डेटा से जुड़े मामलों के उचित न्यायनिर्णयन को संबोधित करने के लिए भारतीय दंड संहिता और भारतीय साक्ष्य अधिनियम में संशोधन किए जाने का नेतृत्व किया। भारतीय साक्ष्य (संशोधन) अधिनियम, 2000 द्वारा पेश किए गए संशोधनों ने 'इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड' को शामिल करने के लिए दस्तावेजी साक्ष्य और अन्य प्रावधानों की परिभाषा का विस्तार किया और भारतीय साक्ष्य अधिनियम में धारा 65ए[3] और 65बी[4] सहित नई धाराओं को शामिल किया। संशोधनों का अंतिम सेट 2013 के आपराधिक कानून संशोधन अधिनियम के माध्यम से पेश किया गया था, जिसने यौन अपराधों के मामले में महिलाओं की सुरक्षा के लिए महत्वपूर्ण सुधार किए थे।

सहस्राब्दी की शुरुआत और भारतीय साक्ष्य (संशोधन) अधिनियम, 2000 की शुरुआत के बाद से, हमारी दैनिक दिनचर्या में इसके व्यापक एकीकरण के साथ, प्रौद्योगिकी पर हमारी निर्भरता में अधिक वृद्धि हुई है। न्याय तंत्र के स्पष्ट बैकलॉग और अक्षम प्रक्रियाओं के अलावा, न्याय के प्रशासन को प्रौद्योगिकी के साथ एकीकृत करने की एक महत्वपूर्ण आवश्यकता थी क्योंकि प्रौद्योगिकी स्वयं अपराध करने की प्रकृति और तरीकों को तेजी से बदल रही थी। समकालीन सामाजिक परिवर्तनों द्वारा उत्पन्न गतिशील चुनौतियों का समाधान करने के लिए आपराधिक न्याय प्रणाली को सुसज्जित करने हेतु प्रौद्योगिकी के उपयोग का लाभ उठाने और इसके पहलुओं को समझने की स्पष्ट आवश्यकता थी। हाल के विधायी सुधार - भारतीय न्याय संहिता, भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता और भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 एक अधिक उत्तरदायी, विश्वसनीय और जवाबदेह आपराधिक न्याय प्रणाली विकसित करने के लिए एक उपकरण के रूप में प्रौद्योगिकी का उपयोग करने में एक महत्वपूर्ण क्षण है।

प्रौद्योगिकी एकीकरण- कानूनों के बीच अंतर को पाटना

प्रौद्योगिकी के एकीकरण के संबंध में तीनों नए आपराधिक कानूनों में उल्लेखनीय सामंजस्य है। भारतीय न्याय संहिता[5] अपराधों के घटित होने में इलेक्ट्रॉनिक साधनों की भूमिका पर प्रकाश डालती है, भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता[6] अपराधों के अन्वेषण, पूछताछ और न्यायायिक परीक्षण में प्रौद्योगिकी को शामिल करती है तथा भारतीय साक्ष्य अधिनियम[7] इलेक्ट्रॉनिक अभिलेखों के बारे में अधिक व्यापक जानकारी प्रदान करता है।

नए आपराधिक कानूनों का एक प्रमुख उद्देश्य जांच की विश्वसनीयता बढ़ाना है। भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता में

[1] फिट्जजेम्स स्टीफन, क्यूसी द्वारा न्यायिक साक्ष्य के सिद्धांतों पर एक परिचय के साथ भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 " https://upati.gov.in/MediaGallery/POINT_23.pdf

[2] सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000) 2000 का क्रमांक 21)

[3] धारा 65ए. भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872) 1872 का 1) के इलेक्ट्रॉनिक अभिलेख से संबंधित साक्ष्य के संबंध में विशेष प्रावधान

[4] धारा 65बी. भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872) 1872 का 1) के इलेक्ट्रॉनिक अभिलेखों की स्वीकार्यता

[5] भारतीय न्याय संहिता , 2023) 2023 का क्रमांक 45)

[6] भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता , 2023) 2023 का क्रमांक 46)

[7] भारतीय साक्ष्य अधिनियम (2023 का क्रमांक 47)

साक्ष्य संग्रह और संरक्षण की प्रमाणिकता बढ़ाने पर विशेष ध्यान दिया गया है। साक्ष्य संग्रह के लिए अपराध स्थल पर फोरेंसिक विशेषज्ञों[8] को स्पष्ट रूप से शामिल करना यह सुनिश्चित करता है कि महत्वपूर्ण साक्ष्य पहले दिन से ही क्षेत्र के विशेषज्ञों द्वारा संभाले जाएं। पुलिस रिपोर्ट में किसी इलेक्ट्रॉनिक उपकरण की 'अभिरक्षा के अनुक्रम'[9] की रिकॉर्डिंग यह सुनिश्चित करती है कि पुलिस द्वारा जब्त किए गए सभी इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों की अभिरक्षा का विवरण दर्ज हो। 'कस्टडी की श्रृंखला' संभवतः कस्टडी की श्रृंखला की सामान्य समझ से आता है, जिसका अर्थ है डिजिटल परिसंपत्ति के स्वामित्व का दस्तावेजीकरण, उसका हस्तांतरण, ऐसे हस्तांतरण की सटीक तारीख, समय और उद्देश्य। यह कानून के पत्र में दिया गया एक महत्वपूर्ण आश्वासन है जो इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य के उचित संरक्षण को सुनिश्चित करता है। इन प्रावधानों को भारतीय साक्ष्य अधिनियम के माध्यम से पेश किए गए टेक्टोनिक सुधारों द्वारा और मजबूत किया गया है। इस कानून के केंद्र में कानूनी प्रणाली के भीतर इलेक्ट्रॉनिक डेटा को कैसे समझा और सराहा जाता है, इसका महत्वपूर्ण विकास निहित है।

'दस्तावेज' और 'साक्ष्य' का विस्तारित अर्थ

भारतीय साक्ष्य अधिनियम (अधिनियम) ने मूल रूप से साक्ष्य को तीन प्रकारों में वर्गीकृत किया - दस्तावेजी, मौखिक और इलेक्ट्रॉनिक, इस प्रकार इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड को दस्तावेजी रिकॉर्ड से अलग तरीके से माना जाता है, जो सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम द्वारा लाए गए संशोधनों के बाद भी अपरिवर्तित रहा। भारतीय साक्ष्य अधिनियम (अधिनियम) इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड[10] और दस्तावेजों के बीच के इस अंतर को समाप्त करता है और इसको हटाता है और 'दस्तावेज'[11] की परिभाषा में शामिल करता है। इस समावेशन को एक नए चित्रण के माध्यम से स्पष्ट किया गया है जो इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड के विभिन्न रूपों जैसे स्थान संबंधी डाटा, सर्वर लॉग, ध्वनि संदेश, ई-मेल के उदाहरण प्रदान करता है जिन्हें अब कानूनी ढांचे में दस्तावेजों के रूप में समझा जाना है। यह समावेशन शमशेर सिंह बनाम हरियाणा राज्य[12] में सुप्रीम कोर्ट के फैसले की भावना के अनुरूप है, जिसने सीडी को 'दस्तावेज' के अर्थ में लाने के लिए कहा था।

'साक्ष्य'[13] की परिभाषा का विस्तार करके इसमें 'इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड' को भी शामिल किया गया है, जहाँ यह दस्तावेजी साक्ष्य से संबंधित है। यह भारतीय साक्ष्य (संशोधन) अधिनियम, 2000 के माध्यम से किए गए संशोधनों के कारण हुआ है। नया कानून 'मौखिक साक्ष्य' के दायरे का विस्तार करके 'इलेक्ट्रॉनिक रूप से दिए गए बयानों' को भी शामिल करता है। यह भारतीय साक्ष्य अधिनियम को भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता में किए गए बदलावों के साथ सामंजस्य स्थापित करता है, जो इलेक्ट्रॉनिक रूप से साक्ष्य प्रस्तुत करने में सक्षम बनाता है।

प्राथमिक साक्ष्य के रूप में इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड

भारतीय साक्ष्य अधिनियम, प्राथमिक साक्ष्य के दायरे का विस्तार करके इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड और दस्तावेज़ के बीच समानता को आगे बढ़ाता है। 'प्राथमिक साक्ष्य'[14] की परिभाषा में चार नए स्पष्टीकरण जोड़े गए हैं जो साक्ष्य कानून द्वारा इलेक्ट्रॉनिक डेटा की व्याख्या और सराहना के परिदृश्य को व्यापक रूप से बदल देते हैं। पहला नया स्पष्टीकरण जोड़ा गया, स्पष्टीकरण 4 में कहा गया है कि जब कोई इलेक्ट्रॉनिक या डिजिटल रिकॉर्ड बनाया या संग्रहीत किया जाता है, तो ऐसा भंडारण, जो क्रमिक रूप से या एक साथ, कई फ़ाइलों में होता है, संग्रहीत प्रत्येक ऐसी फ़ाइल प्राथमिक साक्ष्य होती है। एक परिदृश्य की कल्पना करें जहां जांच के लिए महत्वपूर्ण इलेक्ट्रॉनिक या डिजिटल रिकॉर्ड को संदिग्ध द्वारा मिटा दिया गया है। उदाहरण के लिए,

[8] भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता की धारा 3)176)

[9] भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता , 2023 की धारा 3)193)(i)(i)

[10] अब से इसे ‹इलेक्ट्रॉनिक और डिजिटल रिकॉर्ड› के रूप में पढ़ा जाएगा

[11] भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 की धारा 1)2)(डी)

[12] एआईआर 2016 एससी (क्रिमिनल) 1

[13] भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 1)2)(ई), 2023

[14] धारा 57. भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 का प्राथमिक साक्ष्य

एक अधिकारी एक ऐसे मामले की जांच कर रहा है जिसमें एक संदिग्ध पर आपत्तिजनक वीडियो डिलीट करने का आरोप है। संदिग्ध व्यक्ति आरोपों से इनकार करता है और दावा करता है कि वीडियो कभी अस्तित्व में ही नहीं थे। संदिग्ध व्यक्ति के कंप्यूटर की जांच करने पर, फोरेंसिक टीम सिस्टम से कथित रूप से हटाए गए वीडियो की एक अस्थायी फ़ाइल बरामद करती है। भारतीय साक्ष्य अधिनियम के अनुसार, यह बरामद अस्थायी फ़ाइल हटाए गए वीडियो के अस्तित्व का समर्थन करने के लिए पर्याप्त प्राथमिक सबूत मानी जाएगी।

बहुत सारे इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड कंप्यूटर पर कई फाइलों में संग्रहीत होते हैं, खासकर जहां ऐसा रिकॉर्ड बड़ा या जटिल होता है। उदाहरण के लिए, एक वीडियो की सामग्री को प्रबंधित करने के लिए कई फाइलों में सहेजा जाता है। कंप्यूटर, स्वचालित प्रक्रिया के माध्यम से, रिकॉर्ड के कुछ हिस्सों को एक के बाद एक अलग-अलग फाइलों में क्रमिक रूप से संग्रहीत कर सकता है या समानांतर प्रसंस्करण या वितरित भंडारण प्रणालियों का उपयोग करने वाला कंप्यूटर एक साथ कई फाइलों में इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड संग्रहीत कर सकता है। यह स्पष्टीकरण एक इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड के कई फाइलों में संग्रहीत होने की घटना को स्वीकार करता है और प्रत्येक ऐसी फाइल को प्राथमिक साक्ष्य के रूप में निर्धारित करता है। 'भंडारण होता है' और 'एक साथ या क्रमिक रूप से' शब्द दर्शाते हैं कि यह स्पष्टीकरण केवल कंप्यूटर की स्वचालित प्रक्रियाओं तक ही सीमित है।

स्पष्टीकरण 5 में कहा गया है कि कोई भी इलेक्ट्रॉनिक या डिजिटल रिकॉर्ड जब उचित अभिरक्षा से प्रस्तुत किया जाता है तो वह प्राथमिक साक्ष्य होता है जब तक कि ऐसी अभिरक्षा विवादित न हो। एक इलेक्ट्रॉनिक उपकरण की उचित अभिरक्षा तब होती है जब उपकरण एक ऐसे व्यक्ति द्वारा देखा जाता है जो इलेक्ट्रॉनिक उपकरण के लिए जिम्मेदार है और कोई भी अभिरक्षा अनुचित नहीं है यदि इसकी वैध उत्पत्ति साबित हो जाती है।

एक ऐसे मामले पर विचार करें जिसमें एक व्यक्ति पर सोशल मीडिया के माध्यम से अपमानजनक सामग्री प्रसारित करने का आरोप है। एक अधिकारी एक ऐसी घटना की जांच कर रहा है जिसमें एक संदिग्ध पर आरोप है कि उसने बिना सहमति के एक सहकर्मी का शर्मनाक वीडियो रिकॉर्ड किया और सोशल मीडिया पर साझा किया। सहकर्मी का दावा है कि वीडियो मैसेजिंग ऐप के ज़रिए कई लोगों को भेजा गया था, जिससे व्यक्तिगत और पेशेवर तौर पर उसको काफ़ी नुकसान हुआ। संदिग्ध व्यक्ति ने आरोपों से इनकार करते हुए खुद को निर्दोष बताया। मामले को सुलझाने के लिए, संदिग्ध व्यक्ति अपने स्मार्टफ़ोन की फ़ोरेंसिक जाँच के लिए राज़ी हो जाता है। जाँच करने पर, डिवाइस पर संबंधित वीडियो पाया जाता है, जो आरोपों की पुष्टि करता है। हालांकि, जांच के दौरान, संदिग्ध ने खुलासा किया कि वीडियो रिकॉर्ड किए जाने और शेयर किए जाने के समय फोन किसी तीसरे पक्ष के पास था। भारतीय साक्ष्य अधिनियम के अनुसार, संदिग्ध के फोन में वीडियो का होना प्राथमिक साक्ष्य नहीं माना जाएगा क्योंकि उस समय डिवाइस की उचित कस्टडी विवादित है। अगर ऐसी कस्टडी विवादित नहीं होती, तो वीडियो का इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड प्राथमिक साक्ष्य माना जाता।

'उचित अभिरक्षा' इलेक्ट्रॉनिक अभिलेखों की प्रमाणिकता सुनिश्चित करती है और भारतीय साक्ष्य अधिनियम के अनुसार, डिजिटल साक्ष्य का स्रोत और प्रबंधन, न्यायालय में उसकी स्वीकार्यता और विश्वसनीयता निर्धारित करने में सर्वोपरि है। यदि कोई इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड उचित अभिरक्षा में नहीं है, तो उसमें छेड़छाड़, उसका स्थानान्तरण, परिवर्तन या गढ़े जाने का जोखिम है। उचित अभिरक्षा यह सुनिश्चित करती है कि डेटा अपरिवर्तित या नष्ट न हो, तथा उसका मूल स्वरूप और विषय-वस्तु बनी रहे। यह इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड की अभिरक्षा की एक श्रृंखला भी स्थापित करता है, जो यह दर्शाता है कि डेटा तक किसकी और कब पहुँच थी। इसलिए, प्राथमिक साक्ष्य के रूप में इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड स्थापित करने के लिए 'उचित अभिरक्षा' एक महत्वपूर्ण पहलू बन जाता है।

स्पष्टीकरण 6 वीडियो में इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड की प्रकृति के बारे में बताता है जब इसे अलग-अलग रूपों में एक साथ संग्रहीत और प्रसारित किया जाता है। इसमें प्रत्येक ऐसा संग्रहण शामिल है, जो वीडियो को किसी अन्य डिवाइस पर प्राथमिक साक्ष्य के रूप में स्थानांतरित, प्रेषित या प्रसारित करते समय होता है। यह स्पष्टीकरण अनिवार्य रूप से वीडियो रिकॉर्डिंग के संदर्भ में 'मूल इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड' के सिद्धांत को कमजोर करता है। ऐसे इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड को प्राथमिक साक्ष्य के रूप में स्थापित करने के लिए वीडियो की रिकॉर्डिंग करने वाले मूल उपकरण को प्रस्तुत करना अब आवश्यक नहीं है। उस वीडियो के हस्तांतरण, ट्रांसमिशन या ब्रॉडकास्ट से संबंधित

सभी इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड भी उस वीडियो के प्राथमिक साक्ष्य होंगे। यदि प्रैंक वीडियो के प्रसारित होने के उपर्युक्त परिदृश्य के मामले में, यह स्पष्ट नहीं है कि व्हाट्सएप के माध्यम से प्रसार ऐसे इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड को प्राथमिक साक्ष्य के रूप में गिनने के लिए वैध होगा या नहीं, क्योंकि ऐसा प्रसार वीडियो की रिकॉर्डिंग के साथ-साथ नहीं होता है, लेकिन यह पूरी तरह से स्पष्ट है कि यदि वीडियो को Youtube Live के माध्यम से वास्तविक समय में प्रसारित किया गया होता, तो प्रसारण के कारण ऐसे इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड का प्रत्येक ऐसा भंडारण उस इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड के बराबर होता जिसे प्राथमिक साक्ष्य माना जाता।

स्पष्टीकरण 7 में कंप्यूटर की स्वचालित प्रक्रिया के माध्यम से कई स्थानों पर संग्रहीत इलेक्ट्रॉनिक या डिजिटल रिकॉर्ड की बात की गई है। इसका तात्पर्य यह है कि यदि उपर्युक्त मानहानिकारक वीडियो को YouTube लाइव के माध्यम से रिकॉर्ड और प्रसारित किया गया था, तो डिवाइस पर संग्रहीत इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड और YouTube के सर्वर पर सहेजे गए इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड को अलग-अलग प्राथमिक साक्ष्य माना जाएगा। जबकि स्पष्टीकरण 4 में कई फ़ाइलों में इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड के भंडारण के बारे में बताया गया है, स्पष्टीकरण 7 में कई स्टोरेज स्पेस में इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड के भंडारण के बारे में बताया गया है। दोनों के बीच अंतर यह है कि एकाधिक फाइलों में भंडारण का तात्पर्य है कि इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड के विभिन्न भागों को अलग-अलग फाइलों में संग्रहीत किया जा सकता है, और विभिन्न भंडारण स्थानों का तात्पर्य है कि इलेक्ट्रॉनिक डेटा को समग्र रूप से विभिन्न स्थानों पर रखा जाता है।

भारतीय साक्ष्य अधिनियम के स्पष्टीकरण 4 से 7 के माध्यम से प्रस्तुत संशोधन, कानून के माध्यम से इलेक्ट्रॉनिक अभिलेखों को प्राथमिक साक्ष्य के रूप में मान्यता देने की अभूतपूर्व अवधारणा प्रस्तुत करते हैं। इलेक्ट्रॉनिक डेटा को उसके विभिन्न रूपों में मान्यता देकर, कानून आधुनिक इलेक्ट्रॉनिक डेटा मूल्यांकन की जटिलताओं को स्वीकार करता है और उन्हें समायोजित करता है। यह इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य की प्रामाणिकता और संरक्षण को प्राथमिकता देने के साथ-साथ छेड़छाड़ और परिवर्तन के खिलाफ सुरक्षा प्रदान करता है।

इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य के इस नए दृष्टिकोण से सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इस बात पर निर्णय देने में अपनाई गई भिन्न-भिन्न स्थिति समाप्त हो जाती है कि क्या इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड को प्राथमिक साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। अधिनियम में प्राथमिक साक्ष्य के रूप में इलेक्ट्रॉनिक अभिलेखों की समझ अर्जुन पंडितराव खोतकर बनाम कैलाश किशनराव गोरट्याल मामले में न्यायमूर्ति नरीमन की समझ के समान है।[15] न्यायमूर्ति नरीमन ने समझा कि इलेक्ट्रॉनिक अभिलेख को न्यायालय में प्राथमिक साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है, यदि वह अपने मूल स्वरूप में हो, तो ऐसी स्थिति में धारा 65बी का अनुपालन आवश्यक नहीं होगा। उन्होंने कहा –

"अगर अपीलकर्ता ने घोषणा और गीतों के लिए इस्तेमाल की गई सीडी को साक्ष्य के रूप में उपलब्ध कराकर प्राथमिक साक्ष्य पेश किया होता तो स्थिति अलग होती। अगर आपत्तिजनक गीतों या घोषणाओं के लिए इस्तेमाल की गई उन सीडी को पुलिस या चुनाव आयोग के माध्यम से जब्त कर लिया गया होता और उन्हें प्राथमिक साक्ष्य के रूप में इस्तेमाल किया गया होता, तो उच्च न्यायालय यह देखने के लिए अदालत में उन्हें चला सकता था कि आरोप सही हैं या नहीं। इस मामले में स्थिति ऐसी नहीं है। भाषण, गीत और घोषणाएं अन्य उपकरणों का उपयोग करके रिकॉर्ड की गई थीं और उन्हें कंप्यूटर में फीड करके उनसे सीडी बनाई गई थीं, जिन्हें बिना उचित प्रमाणीकरण के अदालत में पेश किया गया था। उन सीडी को साक्ष्य के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता क्योंकि साक्ष्य अधिनियम की धारा 65-बी की अनिवार्य आवश्यकताएं पूरी नहीं हुई हैं। यह स्पष्ट किया जाता है कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 59, 65-ए और 65-बी के संदर्भ में इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड के द्वितीयक साक्ष्य पर हमने पिछले पैराग्राफों में जो कुछ कहा है, उसके बावजूद, यदि इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड को साक्ष्य अधिनियम की धारा 62 के तहत प्राथमिक साक्ष्य के रूप में उपयोग किया जाता है, तो वह साक्ष्य अधिनियम की धारा 65-बी की शर्तों के अनुपालन के बिना भी साक्ष्य के रूप में स्वीकार्य है।"[16]

न्यायालय में प्राथमिक साक्ष्य के रूप में इलेक्ट्रॉनिक अभिलेखों की प्रस्तुति के संबंध में अधिनियम में उल्लिखित रूपरेखा न्यायमूर्ति नरीमन के दृष्टिकोण से मेल खाती है, क्योंकि दोनों

[15] एआईआर 2020 सुप्रीम कोर्ट 4908

[16] पैरा 24, एआईआर 2020 सुप्रीम कोर्ट 4908

ही प्राथमिक साक्ष्य के रूप में इलेक्ट्रॉनिक अभिलेखों की स्वीकार्यता को स्वीकार करते हैं। हालाँकि, अधिनियम इससे आगे बढ़कर उस मूल उपकरण पर दिए गए महत्व को कम करता है जहाँ से इलेक्ट्रॉनिक डेटा उत्पन्न होता है और इसके बजाय इलेक्ट्रॉनिक अभिलेख के उन गुणों पर ध्यान केंद्रित करता है जो इसे प्राथमिक साक्ष्य बनाते हैं। यह इलेक्ट्रॉनिक अभिलेख को प्राथमिक साक्ष्य के रूप में योग्य बनाता है जब यह उचित अभिरक्षा से उत्पन्न होता है और कंप्यूटर सिस्टम की स्वचालित प्रक्रियाओं के माध्यम से उत्पन्न होता है - चाहे वह एक साथ हो या अनुक्रमिक।

द्वितीयक साक्ष्य के रूप में इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड और उसका प्रमाण-पत्र

इंडियन एवीडेंस एक्ट के परिष्कृत संस्करण भारतीय साक्ष्य अधिनियम में प्रावधानों की अभिव्यक्ति को समझना अधिनियम की धारा 61 के समावेश को समझने के लिए महत्वपूर्ण है। अधिनियम का अध्याय V दस्तावेजी साक्ष्य से संबंधित है और यह धारा 56 से धारा 93 तक विस्तारित है। अधिनियम की धारा 56,[17] अधिनियम की धारा 61 का पुनरुत्पादन है। इसमें कहा गया है कि किसी दस्तावेज़ की सामग्री को प्राथमिक या द्वितीयक साक्ष्य द्वारा साबित किया जा सकता है। अधिनियम की धारा 57 प्राथमिक साक्ष्य से संबंधित है, जिसे ऊपर चर्चा किए गए विभिन्न प्रकार के इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड को शामिल करने के लिए विस्तारित किया गया है। अधिनियम की धारा 59[18] अधिनियम की धारा 64 के अनुरूप है जिसमें कहा गया है कि किसी दस्तावेज़ को प्राथमिक साक्ष्य द्वारा 'इसके बाद उल्लिखित मामलों को छोड़कर' साबित किया जाएगा, यह दर्शाता है कि धारा 59 के बाद की धाराएँ द्वितीयक साक्ष्य से संबंधित हैं। धारा 61[19], अधिनियम में एक नया जोड़ा गया प्रावधान है जो इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड की स्वीकार्यता को दृढ़ता से स्थापित करता है। यह स्पष्ट हो जाता है कि धारा 61 को शामिल करने से इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य की द्वितीयक साक्ष्य के रूप में स्वीकार्यता पर विशेष रूप से ध्यान दिया गया है। यह रणनीतिक स्थान पुष्टि करता है कि धारा 57 के अंतर्गत विस्तार द्वितीयक साक्ष्य के माध्यम से इलेक्ट्रॉनिक अभिलेखों को प्रामाणित करने की संभावना को बाहर नहीं करता है। धारा 61 में कहा गया है कि अधिनियम में कोई भी बात इलेक्ट्रॉनिक अभिलेख की स्वीकार्यता को इस आधार पर अस्वीकार नहीं करेगी कि यह एक इलेक्ट्रॉनिक अभिलेख है, और धारा 63 के अधीन, उस इलेक्ट्रॉनिक अभिलेख में किसी अन्य दस्तावेज़ के समान ही प्रवर्तनीयता, वैधता और कानूनी प्रभाव होगा। यह सुनिश्चित करता है कि इलेक्ट्रॉनिक अभिलेख अपने प्राथमिक साक्ष्य की अनुपस्थिति में स्वीकार्यता बनाए रखते हैं। यह अधिनियम की धारा 63 में दिए गए प्रमाण पत्र के अनुपालन के बारे में बहस को शांत करता है, जो अधिनियम की धारा 65बी के अनुरूप है। धारा 61 में कहा गया है कि इसके अंतर्गत स्वीकार्य इलेक्ट्रॉनिक अभिलेख धारा 63 के प्रावधानों के अधीन होंगे, जिससे यह स्पष्ट होता है कि जब इलेक्ट्रॉनिक अभिलेख को द्वितीयक साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत किया जाता है, तो उसके साथ धारा 63 में उल्लिखित प्रमाण पत्र संलग्न किए जाएंगे।

अधिनियम की धारा 65 बी में दिए गए प्रमाण पत्र की सर्वोच्च न्यायालय के कई फैसलों के माध्यम से जांच की गई है। अनवर पी.वी. बनाम पी.के. बशीर[20] मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि धारा 65बी की प्रयोज्यता भारतीय साक्ष्य अधिनियम के किसी भी अन्य प्रावधान पर हावी है तथापि यह - 'इस अधिनियम में निहित कुछ भी होने के बावजूद' से शुरू होती है। यह माना गया कि 'द्वितीयक साक्ष्य के माध्यम से एक इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड को साक्ष्य के रुप में तब तक स्वीकार नहीं किया जाएगा जब तक कि धारा 65B के तहत आवश्यकताओं को पूरा नहीं किया जाता है। बाद में, शाहफी मोहम्मद बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य[21] में सर्वोच्च न्यायालय ने इस समझ से अलग रुख अपनाया और माना कि धारा 65 बी (4) के तहत प्रमाण पत्र की आवश्यकता अनिवार्य नहीं है और यह

[17] धारा 56. दस्तावेजों की अंतर्वस्तु का सबूत, भारतीय साक्ष्य अधिनियम,2023

[18] धारा 59. प्राथमिक साक्ष्य द्वारा दस्तावेजों का सबूत भारतीय साक्ष्य अधिनियम , 2023

[19] धारा 61. भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 का इलेक्ट्रॉनिक या डिजिटल रिकॉर्ड

[20] (10 (2014 एससीसी 473

[21] (2 (2018 एससीसी 801

कि 'प्रमाण पत्र की आवश्यकता की प्रयोज्यता प्रक्रियात्मक होने के कारण न्यायालय द्वारा शिथिल की जा सकती है, जहां भी न्याय का हित उचित हो।'[22] धारा 65 बी के तहत प्रमाण पत्र के संबंध में कानून की स्थिति अंततः *अर्जुन पंडित राव खोतकर बनाम कैलाश किशन राव गोरटियाल* में स्थापित की गई, जिसमें इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य की स्वीकार्यता के बारे में दो प्रमुख टिप्पणियां की गईं – पहली, इसने स्थापित किया कि इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड को प्राथमिक साक्ष्य के रूप में पेश किया जा सकता है जब मूल डिवाइस जिस पर रिकॉर्ड पहली बार संग्रहीत किया गया था, अदालत में उपलब्ध कराया गया था, और दूसरा यह स्पष्ट किया कि जब भी इस तरह के मूल इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड को मानवीय हस्तक्षेप के माध्यम से किसी अन्य डिवाइस पर कॉपी किया जाता है।

अधिनियम की धारा 63 अधिनियम की धारा 65बी के अनुरूप है। इस धारा ने इलेक्ट्रॉनिक अभिलेख की प्रकृति और प्रमाणीकरण की प्रक्रिया दोनों को संशोधित किया है। इलेक्ट्रॉनिक अभिलेख के दायरे को सेमीकंडक्टर मेमोरी[23] और संचार उपकरणों[24] पर संग्रहीत इलेक्ट्रॉनिक अभिलेख को शामिल करने के लिए विस्तारित किया गया है। 'सृजन'[25] शब्द को जोड़ने से यह संकेत मिलता है कि कंप्यूटर या संचार उपकरण द्वारा की जाने वाली निर्माण प्रक्रिया अब इसके 'नियमित उपयोग'[26] की समझ में शामिल है। इन शब्दों को जोड़ना स्पष्टीकरणात्मक है, जिसका उद्देश्य अधिनियम की धारा 65बी के प्रारूपण में मौजूदा अस्पष्टताओं को संबोधित करना है। हालांकि उनका समावेश मुकदमेबाजी का विषय नहीं रहा है, लेकिन द्वितीयक साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत किए जाने पर इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों की प्रकृति का आकलन करने में धारा की मजबूती को बढ़ाने के लिए उन्हें जोड़ा गया है। इस धारा की उप-धारा (3) एक साथ काम करने वाले कई कंप्यूटरों या संचार उपकरणों को एक कंप्यूटर या उपकरण के रूप में मानने के लिए शर्तें प्रदान करती है। इस प्रावधान को फिर से तैयार किया गया है और कंप्यूटरों और संचार उपकरणों के विभिन्न संचालन मोड को दर्शाने के लिए उपयुक्त शब्दावली का उपयोग किया गया है। 'स्टैंडअलोन मॉडल'[27], 'कंप्यूटर सिस्टम'[28], 'कंप्यूटर नेटवर्क[29]', 'सूचना निर्माण को सक्षम करने वाला कंप्यूटर संसाधन या सूचना प्रसंस्करण और भंडारण प्रदान करना'[30] और 'मध्यस्थ'[31] जैसे शब्दों को सूचना बनाने, संग्रहीत करने या प्रसंस्करण के लिए वैध तरीकों के रूप में मान्यता दी गई है। यह विस्तारित दायरा तकनीकी सेटअप और परिदृश्यों की एक विस्तृत श्रृंखला को शामिल करता है, जो प्रावधान की समावेशिता और प्रयोज्यता को बढ़ाता है। 'मध्यस्थ के माध्यम से' शब्द का स्पष्ट समावेश इंटरनेट सेवा प्रदाताओं या सोशल मीडिया प्लेटफ़ॉर्म जैसी संस्थाओं की भूमिका को स्वीकार करता है जो इलेक्ट्रॉनिक गतिविधियों को सुविधाजनक बनाने और रिकॉर्ड करने में निभाते हैं और अदालत में इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य की स्वीकार्यता को बढ़ाते हैं। यह मध्यस्थ रिकॉर्ड से साक्ष्य प्रस्तुत करने में सक्षम बनाता है और साक्ष्य का दायरा बढ़ाता है, खासकर उन मामलों में जहां इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड को प्राथमिक साक्ष्य द्वारा इसके विनाश या क्षति के कारण साबित नहीं किया जा सकता है।

अधिनियम की धारा 63 में दिए गए प्रमाणन की प्रक्रिया को सरल बनाया गया है। धारा में दो प्रमाणपत्र प्रस्तुत करने का आदेश दिया गया है - एक कंप्यूटर या संचार उपकरण के प्रभारी व्यक्ति द्वारा प्रस्तुत किया जाना है और दूसरा किसी

[22] पैरा 2 (2018) ,12 एससीसी 801

[23] भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 की धारा 63(1)

[24] भारतीय साक्ष्य अधिनियम , 2023 की धारा 5)63 ,(4)63 ,(2) 63 , (1)63)

[25] भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 की धारा 2)63)(ए) एवं धारा 3)63)

[26] भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 की धारा 2)63)(ए)

[27] भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 की धारा 3)63)(ए)

[28] भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 की धारा 2)63)(बी)

[29] भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 की धारा 2)63)(सी)

[30] भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 की धारा 2)63)(डी)

[31] भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 की धारा 2)63)(ई)

विशेषज्ञ द्वारा प्रस्तुत किया जाना है। दो प्रमाण-पत्र प्रदान करने के लिए एक नई अनुसूची जोड़ी गई है, जिसे हस्ताक्षर करने वाले व्यक्ति के सर्वोत्तम ज्ञान और विश्वास के अनुसार भरा जाएगा। प्रवेश के लिए इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड प्रस्तुत किए जाने पर हर बार प्रमाणपत्र और इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड प्रस्तुत करना भी अनिवार्य है। विशेषज्ञ प्रमाणपत्र को शामिल करने से इलेक्ट्रॉनिक रूप में पाई जाने वाली जानकारी की प्रामाणिकता सुनिश्चित करने के लिए वांछित सुरक्षा मिलती है। प्रमाणपत्रों में स्वयं उस उपकरण की प्रकृति के बारे में विस्तृत जानकारी होती है जिससे इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड प्राप्त किया जाता है। इसमें डिवाइस का प्रकार (जैसे, डीवीआर, मोबाइल, फ्लैश ड्राइव, सर्वर, क्लाउड, सीडी/डीवीडी), मॉडल, सीरियल नंबर, रंग और विशिष्ट पहचानकर्ता (आईएमईआई/यूआईएन/यूआईडी/मैक/क्लाउड आईडी) जैसे विवरण शामिल हैं। इसके अतिरिक्त, डिवाइस के HASH मान को रिकॉर्ड करने से एक डिजिटल फिंगरप्रिंट उपलब्ध होने से सुरक्षा की एक परत जुड़ जाती है जिसका उपयोग इलेक्ट्रॉनिक डेटा की प्रामाणिकता को सत्यापित करने के लिए किया जा सकता है।

सेमीकंडक्टर मेमोरी या संचार डिवाइस में संग्रहीत इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड को मान्यता देकर इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड के दायरे का विस्तार करना और प्रमाणन की प्रक्रिया को परिष्कृत करना इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड को संभालने के लिए एक संरचित ढांचा प्रदान करता है। सुव्यवस्थित प्रमाणन प्रक्रिया, इसका अनिवार्य अनुपालन, किसी विशेषज्ञ द्वारा प्रमाण पत्र को शामिल करना और प्रमाण पत्र में विस्तृत डिवाइस जानकारी दर्ज करना, इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड को मान्य करने और इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य प्रस्तुति में विश्वसनीयता को बढ़ावा देने के लिए महत्वपूर्ण सुरक्षा उपाय जोड़ते हैं।

निष्कर्ष

इण्डियन एवीडेंस एक्ट 1872 और 2023 के भारतीय साक्ष्य अधिनियम की परिकल्पना बहुत ही भिन्न तकनीकी संदर्भों में की गई थी; और उनके बीच के 151 वर्षों में प्रौद्योगिकी का नाटकीय विकास उजागर होता है। 1876 तक, जब अलेक्जेंडर ग्राहम बेल ने टेलीफोन का आविष्कार किया, तब तक इण्डियन एवीडेंस एक्ट को लागू हुए चार साल हो चुके थे, और यह अधिनियम अपने समय की तकनीकी वास्तविकताओं पर आधारित था। 2000 के दशक की शुरुआत में, पहले पर्सनल कंप्यूटर, जो कभी डिजिटल तकनीक के शिखर का प्रतिनिधित्व करते थे, आज के परिष्कृत स्मार्टफ़ोन की तुलना में अब अल्पविकसित लगते हैं। यह तीव्र विरोधाभास समकालीन चुनौतियों का प्रभावी ढंग से समाधान करने के लिए तकनीकी प्रगति के साथ-साथ कानूनी प्रणाली के विकास की आवश्यकता को रेखांकित करता है।

भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 इस संबंध में एक महत्वपूर्ण कदम है। आधुनिक तकनीकी प्रगति को अपने ढांचे में एकीकृत करके, अधिनियम आज के कानूनी परिदृश्य में प्रौद्योगिकी की महत्वपूर्ण भूमिका को स्वीकार करता है। नए आपराधिक कानूनों द्वारा पेश किए गए सबसे प्रभावशाली परिवर्तनों में से एक न्यायिक प्रक्रिया में प्रौद्योगिकी को शामिल करना है, जिसका उदाहरण भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता की धारा 530 है।[32] यह प्रावधान इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों का उपयोग करके पूछताछ और परीक्षण करने की अनुमति देता है, जो एक निर्णायक बदलाव को दर्शाता है जिसे 'तकनीकी परीक्षण' युग कहा जा सकता है।

'तकनीकी परीक्षण' एक परिवर्तनकारी दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करता है, जहाँ प्रौद्योगिकी को आपराधिक न्याय प्रणाली में सहजता से एकीकृत किया जाता है, जिससे परीक्षण के संचालन के तरीके में मौलिक रूप से बदलाव आता है। नए आपराधिक कानून कई महत्वपूर्ण तरीकों से प्रौद्योगिकी का लाभ उठाते हैं: समन, नोटिस, दस्तावेजों की आपूर्ति और इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों से साक्ष्य प्रस्तुत करने की सुविधा प्रदान करना। यह परिवर्तन न केवल परीक्षणों के प्रक्रियात्मक पहलुओं को सुव्यवस्थित करता है, बल्कि उनकी दक्षता को भी बढ़ाता है। इलेक्ट्रॉनिक रूप से विचारण करने की क्षमता तार्किक चुनौतियों का समाधान करती है और देरी को कम करती है, जो विशेष रूप से अधिक मुकदमों के प्रबंधन और समय पर न्याय सुनिश्चित करने में लाभकारी हो सकती है।

इसके अलावा, प्रौद्योगिकी का एकीकरण न केवल प्रक्रियात्मक सुविधा को आगे बढ़ाता है बल्कि यह न्यायिक प्रक्रिया के भीतर जवाबदेही बढ़ाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका भी निभाता

[32] भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 की धारा 530 के तहत परीक्षण और कार्यवाही इलेक्ट्रॉनिक मोड में आयोजित की जाएगी,

है। उदाहरण के लिए, भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता गंभीर अपराधों की तलाशी और जब्ती कार्यवाही तथा फोरेंसिक जांच के लिए ऑडियो-वीडियो रिकॉर्डिंग के उपयोग को अनिवार्य बनाती है। यह आवश्यकता सुनिश्चित करती है कि जांच के महत्वपूर्ण पहलुओं को सावधानीपूर्वक प्रलेखित किया जाए, जिससे प्रक्रियात्मक प्रामाणिकता का एक विश्वसनीय रिकॉर्ड उपलब्ध हो। इसके अतिरिक्त, इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के लिए अभिरक्षा की श्रृंखला का दस्तावेज़ीकरण - स्वामित्व, हस्तांतरण और ऐसे साक्ष्यों को संभालने का विवरण - यह सुनिश्चित करता है कि सभी साक्ष्यों को सही तरीके से ट्रैक किया जाए, जिससे अदालत में उनकी विश्वसनीयता और स्थिरता बढ़े।

जैसे-जैसे तकनीक तेज़ी से विकसित हो रही है, न्याय को समयबद्ध और पारदर्शी तरीके से प्रदान करने में इसकी भूमिका लगातार महत्वपूर्ण होती जा रही है। एक प्रभावी और न्यायसंगत कानूनी प्रणाली को बनाए रखने के लिए उभरती हुई तकनीकों को अपनाना आवश्यक है। इस उद्देश्य के लिए, मज़बूत कानून और तकनीकी रूप से कुशल हितधारक जैसे कानून प्रवर्तन कर्मी, अभियोजक, अधिवक्ता और न्यायाधीश अनिवार्य हैं। विधि निर्माताओं को ऐसे कानून बनाने चाहिए जो न केवल वर्तमान तकनीकी प्रगति को समायोजित करें बल्कि भविष्य के विकास का भी अनुमान लगा सकें। इस बीच, आपराधिक न्याय प्रणाली के हितधारकों के पास डिजिटल साक्ष्य को प्रभावी ढंग से प्रबंधित करने और व्याख्या करने के लिए आवश्यक तकनीकी दक्षता भी होनी चाहिए।

निष्कर्ष में, तकनीकी प्रगति को अपनाकर और तीन नए आपराधिक कानूनों के माध्यम से उन्हें न्यायिक ढांचे में एकीकृत करके, भारतीय आपराधिक न्याय प्रणाली डिजिटल युग की चुनौतियों का समाधान करने के लिए बेहतर स्थिति में है। कानूनी प्रक्रिया के भीतर प्रौद्योगिकी का सामंजस्य आपराधिक न्याय प्रणाली की अधिक प्रक्रियात्मक दक्षता, साक्ष्य सटीकता और समग्र पारदर्शिता सुनिश्चित करता है। यह दृष्टिकोण न केवल कानूनी प्रणाली को आधुनिक बनाता है बल्कि सभी के लिए निष्पक्षता, समानता और न्याय के प्रति इसकी मौलिक प्रतिबद्धता को भी बनाए रखता है।

इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य की स्वीकार्यता: भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 का अवलोकन

डॉ . निशा धनराज देवानी[1]

सार

भारतीय साक्ष्य अधिनियम (बीएसए) 2023 का अधिनियमन भारत में डिजिटल साक्ष्य कानूनों के परिदृश्य में एक महत्वपूर्ण बदलाव को दर्शाता है, विशेष रूप से आपराधिक मुकदमों के क्षेत्र में। यह कानून पुराने इण्डियन एवीडेंस एक्ट, 1872 की जगह लेता है और कानूनी कार्यवाही में इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य को स्वीकार करने और मूल्यांकन के लिए एक संपूर्ण रूपरेखा प्रस्तुत करता है। साइबर अपराधों के क्षेत्र में, जहाँ डिजिटल साक्ष्य एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, भारतीय साक्ष्य अधिनियम इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य की स्वीकृति के लिए स्पष्ट और ठोस प्रावधान प्रदान करता है और इसकी प्रामाणिकता के मानदंड को परिभाषित करता है। यह उन शर्तों को रेखांकित करता है जिनके तहत इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड को प्राथमिक और द्वितीयक साक्ष्य के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, स्वीकार्यता आधारशिला है, जिसके आधार पर उदाहरणों के साथ बीएसए की धारा 57, 61, 62 और 63 पर चर्चा की गई। यह शोध पत्र 2023 तक डिजिटल साक्ष्य कानूनों की प्रकृति और आपराधिक कार्यवाही में इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य की अखंडता सुनिश्चित करने में आने वाली चुनौतियों पर प्रकाश डालता है।

मुख्य शब्द : *भारतीय साक्ष्य अधिनियम , इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य, स्वीकार्यता, इलेक्ट्रॉनिक्स में पूर्वधारणाएं*

परिचय

भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 (BSA), भारतीय न्यायशास्त्र में डिजिटल युग की जरूरतों को पूरा करने के लिए एक महत्वपूर्ण परिवर्तन की शुरुआत करता है, जो लंबे समय से चले आ रहे इण्डियन एवीडेंस एक्ट (IEA), 1872[2] की जगह लेता है। इसे क्रमशः 12 दिसंबर और 21 दिसंबर, 2023 को लोकसभा और राज्यसभा दोनों के माध्यम से पारित किया गया, जिसकी परिणति 25 दिसंबर, 2023 को राष्ट्रपति की स्वीकृति के रूप में हुई, जो कानूनी इतिहास में एक महत्वपूर्ण क्षण है। बीएसए के मुख्य उद्देश्यों में देश भर के न्यायालयों में साक्ष्यों को बढ़ाने और उसकी व्याख्या को आधुनिक एवं सरल बनाना और उनमें सामंजस्य स्थापित करना शामिल है, जिसमें

[1] एसोसिएट प्रोफेसर, महाराजा अग्रसेन इंस्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेंट, जीजीएसआईपीयू, नई दिल्ली

[2] भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1872 का मसौदा जेम्स फिट्जजेम्स स्टीफन द्वारा तैयार किया गया था।

इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य भी शामिल हैं। समकालीन प्रावधानों को एकीकृत करके, इस कानून का उद्देश्य न्यायिक प्रणाली को तकनीकी रूप से सशक्त बना कर निष्पक्षता और दक्षता को बढ़ावा देना है। IEA,1872 के मूलभूत तत्वों को बनाए रखते हुए, BSA 2023 उन्हें एक नए और समकालीन उपयोग में प्रस्तुत करता है। इसके अलावा, BSA न्यायिक कार्यवाही को सुविधाजनक बनाने और मुकदमे में किसी भी अनावश्यक देरी के बिना कानूनी ढांचे के भीतर पारदर्शिता बढ़ाने के उद्देश्य से कई नए और महत्वपूर्ण प्रावधान पेश करता है। 170 धाराओं वाले बीएसए के अधिनियमन में 23 धाराओं में संशोधन, 6 धाराओं को निरस्त करना तथा 2 नई धाराओं को जोड़ना शामिल है, जो सामूहिक रूप से भारतीय आपराधिक मामलों की आवश्यकताओं को पूरा करेंगे।

इसके अलावा, बीएसए में पेश किए गए संशोधन साइबर फोरेंसिक में इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य से संबंधित सुधारों पर ध्यान केंद्रित करते हैं, जो आपराधिक जांच में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। साइबर फोरेंसिक में डिजिटल स्रोतों से डेटा की पहचान, संग्रह, जांच और विश्लेषण करने के लिए वैज्ञानिक पद्धतियों को लागू करना शामिल है, जबकि सूचना की प्रामाणिकता सुनिश्चित करना और अभिरक्षा की श्रृंखला को बनाए रखने के लिए सख्त प्रोटोकॉल का पालन करना, सभी साक्ष्य के कानूनी नियमों के अनुसार है। इस क्षेत्र में वायरलेस परीक्षा, मीडिया विश्लेषण, नेटवर्क पूछताछ, डेटाबेस परीक्षा, मोबाइल जांच, डिस्क विश्लेषण, आईपी एड्रेस ट्रेसिंग, ईमेल जांच, क्लाउड कंप्यूटिंग विश्लेषण और डिजिटल जांच के अन्य तरीकों सहित विविध जांच कार्य शामिल हैं। इस महत्व को देखते हुए, ऑडियो-वीडियो इलेक्ट्रॉनिक को परिभाषित करने वाली धारा 2 (ए) भी बीएनएसएस[3] में शामिल की गई है।

इसके अलावा, इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य एकत्र करने का प्राथमिक उद्देश्य अभियुक्त और अपराध के बीच संबंध स्थापित करना है। यह "निष्पक्ष और उचित" प्रक्रिया के अंतर्गत डिजिटल डेटा को व्यवस्थित और सावधानीपूर्वक संरक्षित करने, निकालने, मूल्यांकन करने, व्याख्या करने और दस्तावेजीकरण के द्वारा प्राप्त किया जाता है। इस कार्य की जटिलता को कम करके नहीं आंका जाना चाहिए, क्योंकि इसमें डेटा को खोजना, हटाई गई जानकारी को पुनर्प्राप्त करना, छिपी या एन्क्रिप्ट की गई सामग्री को उजागर करना शामिल है, और यह सब कंप्यूटर सिस्टम की सुरक्षा करते हुए किया जाता है। अंततः, यह प्रक्रिया फोरेंसिक जांच के दौरान एकत्र किए गए निष्कर्षों के आधार पर साक्ष्य प्रस्तुत करने में परिणत होती है। प्रत्येक कानूनी मामले में, साक्ष्य में तीन आवश्यक घटक शामिल होते हैं: इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड, जिसमें ईमेल और डेटाबेस जैसी डिजिटल रूप से संग्रहीत जानकारी शामिल होती है; इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड के अलावा अन्य दस्तावेजी साक्ष्य, जैसे भौतिक दस्तावेज़ और तस्वीरें; और मौखिक साक्ष्य, जिसमें कानूनी कार्यवाही के दौरान गवाहों या शामिल पक्षों द्वारा दी गई मौखिक गवाही शामिल होती है जैसा कि चित्र संख्या- 1 में बताया गया है। ये घटक सामूहिक रूप से तथ्यों को प्रस्तुत करने, विश्वसनीयता स्थापित करने और न्यायिक निर्णयों के परिणाम को निर्धारित करने का आधार बनते हैं।

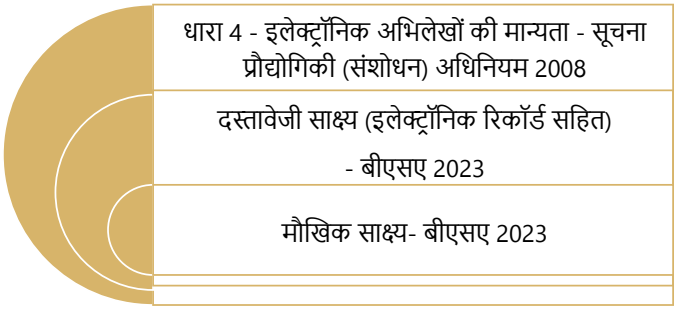

चित्र संख्या 1 साक्ष्य का समावेश

उपरोक्त आंकड़ों के अनुसार, कंप्यूटर उपयोग, कंप्यूटर प्रोग्राम, इंटरनेट ऑफ थिंग्स, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, डीपफेक तकनीक, ब्लॉकचेन तकनीक और डिजिटल सूचना भंडारण की प्रवृत्ति में वृद्धि के कारण डिजिटल साक्ष्य के संचालन के लिए उन्नत उपकरणों की मान्यता को संबोधित करने के लिए भारतीय आपराधिक कानूनों में संशोधन किया गया है।

[3] (क) "ऑडियो- वीडियो इलेक्ट्रॉनिक" का अर्थ किसी भी संचार उपकरण के उपयोग से है, जो वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग, पहचान प्रक्रिया, तलाशी और जब्ती या साक्ष्य की रिकॉर्डिंग, इलेक्ट्रॉनिक संचार के प्रसारण और ऐसे अन्य उद्देश्यों के लिए होता है, जैसा कि राज्य सरकार नियमों द्वारा प्रदान कर सकती है।

इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य का अर्थ और अवधारणा

"इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य" में यांत्रिक या इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों से सृजित जानकारी शामिल है, जो अक्सर कानूनी संदर्भों में तथ्यों की पुष्टि या खंडन करने में महत्वपूर्ण होती है। इस श्रेणी में कंप्यूटर सिस्टम, कंप्यूटर प्रोग्राम या किसी भी IoT डिवाइस में संग्रहीत या प्राप्त डेटा के साथ-साथ चुंबकीय या ऑप्टिकल माध्यमों जैसे कि फ्लॉपी डिस्क, हार्ड ड्राइव, सीडी, डीवीडी, सेलफोन, फैक्स मशीन, यूएसबी स्टिक, डिजिटल कैमरा, मेमोरी कार्ड, पीडीए, आंसरिंग मशीन, कॉर्डलेस फोन, पेजर, कॉलर-आईडी डिवाइस, स्कैनर, प्रिंटर, कॉपियर और सीसीटीवी सिस्टम के माध्यम से संचार नेटवर्क के माध्यम से इलेक्ट्रॉनिक रूप से प्रेषित जानकारी शामिल है, जो इलेक्ट्रॉनिक डेटा के लिए एक भंडार गृह के रूप में काम करती है।

इसके अलावा, "इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड" शब्द का विशेष रूप से बीएसए, 2023 में साक्ष्य के संबंध में उल्लेख किया गया है। इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड एक छवि या ध्वनि के रूप में डेटा रिकॉर्ड या सूचना को दर्शाता है जिसे इलेक्ट्रॉनिक रूप से या माइक्रोफिल्म या कंप्यूटर-जनरेटेड माइक्रोफिच[4] के माध्यम से संग्रहीत, प्राप्त या भेजा जाता है। उन्हें सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम 2008[5] के अनुसार कानूनी रूप से मान्यता प्राप्त है।

व्यावहारिक रूप से, यह न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत साक्ष्य है, जिसे सामान्यतः "डिजिटल साक्ष्य" कहा जाता है। लेकिन यहाँ एक प्रश्न उठता है:- इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड कैसे दस्तावेज़ या दस्तावेजी साक्ष्य बन जाता है? इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए BSA ने अपनी संशोधित परिभाषा में इलेक्ट्रॉनिक और डिजिटल रिकॉर्ड को साक्ष्य के रूप में शामिल किया है। जो इस प्रकार है:-

धारा 2 (घ) "दस्तावेज" से ऐसा कोई विषय अभिप्रेत है जिसको किसी पदार्थ पर अक्षरों, अंकों या चिह्नों के साधन द्वारा या उनमें से एक से अधिक साधनों द्वारा अभिव्यक्त या वर्णित या अन्यथा अभिलेखबद्ध किया गया है जो उस विषय के अभिलेखन के प्रयोजन से उपयोग किए जाने को आशयित हो या जिसका उपयोग किया जा सके और इसके अंतर्गत इलैक्ट्रानिक और डिजिटल अभिलेख भी सम्मिलित हैं।[6] यह परिभाषा पारंपरिक भौतिक रिकॉर्ड और आधुनिक इलेक्ट्रॉनिक या डिजिटल रिकॉर्ड दोनों को शामिल करती है। परिभाषा के अनुसार, दस्तावेजों में लैपटॉप या स्मार्टफोन, ईमेल, सर्वर लॉग, स्थान संबंधी डेटा, कंप्यूटर पर संग्रहीत फ़ाइलें, संदेश, वेबसाइट सामग्री और डिजिटल उपकरणों पर संरक्षित वॉयस मेल संदेश शामिल हैं[7]।

इसके अतिरिक्त, धारा 2 (ई) द्वारा प्रदत्त परिभाषा के अनुसार 'डिजिटल और इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड' को साक्ष्य में शामिल किया गया है। "साक्ष्य" में शामिल हैं-

(i) सभी कथन, जिसके अंतर्गत इलैक्ट्रॉनिक रूप से दिए गए कथन सम्मिलित हैं, जिसे न्यायालय जांच के अधीन तथ्य के विषयों के संबंध में अपने समक्ष साक्षियों द्वारा किए जाने की अनुमति देता है या अपेक्षा करता है और ऐसे कथन मौखिक साक्ष्य कहलाते हैं;

(ii) न्यायालय के निरीक्षण के लिए प्रस्तुत किए गए सभी दस्तावेज, जिनके अंतर्गत इलैक्ट्रॉनिक या डिजिटल अभिलेख भी हैं और ऐसे दस्तावेज दस्तावेजी साक्ष्य कहलाते हैं।"[8]

धारा 105, 176(1), 180, 183, 254, 265, 266, 316, 336 355, 356, और 530 जैसे प्रावधान BNSS में स्पष्ट रूप से आपराधिक मामलों की जांच, अन्वेषण और परीक्षण में ऑडियो-विजुअल साधनों के उपयोग के महत्व को रेखांकित करते हैं, जो BSA, 2023 की धारा 2(e)(i) की महत्वपूर्ण भूमिका को उजागर करते हैं। इसके बाद, धारा 2(e)(ii) यह प्रावधान करती है कि इलेक्ट्रॉनिक और डिजिटल अभिलेखों

[4] आईटी (संशोधन) अधिनियम, 2008 की धारा 2(1)(टी)

[5] आईटी (संशोधन) अधिनियम, 2008 की धारा 4

[6] बीएसए 2023 की धारा 2(डी)

[7] बीएसए, 2023 की धारा 2(डी) चित्रण iv

[8] बीएसए, धारा 2 (ई): भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 3 पैरा 6 भी देखें

को भी न्यायालय में निरीक्षण के लिए दस्तावेजी प्रमाण के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है।

मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य का वर्णन करने वाले कुछ दृष्टांत इस प्रकार हैं।

- मुकदमे के दौरान, एक गवाह वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से यातायात दुर्घटना के बारे में अपनी टिप्पणियों के बारे में अदालत में मौखिक रूप से गवाही दे सकता है।
- किसी व्यापारिक विवाद में शामिल दो व्यक्तियों के बीच रिकॉर्ड की गई टेलीफोन बातचीत को सुनवाई के दौरान साक्ष्य के रूप में चलाया जाता है।
- एक विशेषज्ञ गवाह वीडियो कॉन्फ्रेंस कॉल के माध्यम से किसी कलाकृति की प्रामाणिकता के संबंध में विशेषज्ञ राय प्रदान करता है।

दस्तावेज़ी साक्ष्य :

- दो पक्षों के बीच एक मुद्रित अनुबंध उनके समझौते के साक्ष्य के रूप में अदालत में प्रस्तुत किया जाता है।
- कार्यस्थल पर घटित किसी घटना पर चर्चा करते हुए कर्मचारियों के बीच ईमेल आदान-प्रदान को उत्पीड़न के साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत किया जाता है।
- सुरक्षा कैमरे से लिए गए सीसीटीवी फुटेज में प्रतिवादी को अपराध करते हुए कैद कर लिया जाता है और इसे मुकदमे के दौरान साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत किया जाता है।

चूंकि आईटी (संशोधन) अधिनियम, 2008 के तहत परिभाषित इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड को कानूनी रूप से मान्यता प्राप्त है और बीएसए 2023 के अनुसार उचित दस्तावेजी साक्ष्य माना जाता है। निष्पक्ष और त्वरित सुनवाई के उद्देश्यों को प्राप्त करने के मद्देनजर, इलेक्ट्रॉनिक शब्द और इसके निहितार्थ को बीएसए के विभिन्न प्रावधानों में जोड़ा गया है। इसके अलावा, बीएसए की धारा 15 न केवल किसी भी बयान के रूप में स्वीकारिता प्रदान करती है, चाहे वह मौखिक हो, दस्तावेज हो, बल्कि इसमें 'इलेक्ट्रॉनिक फॉर्म'[9] शब्द भी शामिल है, जो किसी प्रश्नगत तथ्य या किसी प्रासंगिक तथ्य के संबंध में अनुमान लगाता है। उदाहरण के लिए, 'ए' अनुबंध की शर्तों पर चर्चा करते हुए बी को एक ईमेल भेजता है। ईमेल में से एक में, बी डिलीवर किए गए सामान के लिए भुगतान प्राप्त करने की पुष्टि करता है, जो ए के इस दावे का समर्थन करता है कि अनुबंध पूरा हो गया था। इस परिदृश्य में, ईमेल एक्सचेंज इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य का गठन करता है और (बीएसए) की धारा 15 के अंतर्गत आता है। ईमेल में बी की पावती एक स्वीकृति के रूप में कार्य करती है, क्योंकि यह माल के लिए भुगतान प्राप्त करने के तथ्य के संबंध में एक अनुमान को दर्शाती है, जो अनुबंध विवाद के लिए उपयुक्त है। इस प्रकार, टेक्स्ट संदेश, ईमेल, सोशल मीडिया इंटरैक्शन और GPS स्थान डेटा प्रासांगिक तथ्य हैं और इन्हें इलेक्ट्रॉनिक अभिलेखों के माध्यम से न्यायालय में प्रस्तुत किया जा सकता है।

इसके अलावा, किसी सार्वजनिक या आधिकारिक खाता बही में दर्ज कोई भी रिकॉर्ड, चाहे वह भौतिक या इलेक्ट्रॉनिक रूप में हो, विचाराधीन मामले से संबंधित एक सुसंगत तथ्य का दस्तावेजीकरण करता है और किसी सार्वजनिक अधिकारी द्वारा उनकी आधिकारिक भूमिका में या किसी कानूनी दायित्व को पूरा करने वाले व्यक्ति द्वारा दर्ज किया जाता है, प्रासंगिक साक्ष्य के रूप में महत्व रखता है।[10] धोखाधड़ी के मामले में, अभियोजन पक्ष प्रतिवादी के बैंक खाते से प्राप्त इलेक्ट्रॉनिक बैंकिंग लेनदेन रिकॉर्ड पेश करता है। रिकॉर्ड में ऐसी प्रविष्टियाँ हैं जो विदेशी खातों में स्थानांतरित की गई बड़ी रकम से जुड़े संदिग्ध लेनदेन को दर्शाती हैं। बैंकिंग नियमों के अनुपालन में बैंक अधिकारियों द्वारा दर्ज की गई ये प्रविष्टियाँ धोखाधड़ी की गतिविधियों में प्रतिवादी की संलिप्तता को प्रदर्शित करने में प्रासंगिक साक्ष्य के रूप में काम करती हैं।

इसी प्रकार, BSA की धाराएँ 31 और 32, जो 'सार्वजनिक प्रकृति के दस्तावेज़ों' और 'पुस्तकों में निहित कानून' से संबंधित हैं, को भी इलेक्ट्रॉनिक शब्द के साथ संशोधित किया गया है। इसका उद्देश्य भारतीय न्याय प्रणाली को तीव्रता प्रदान करना है।

[9] सूचना के संदर्भ में आईटी अधिनियम, 2000 की धारा 2(1)(आर) का अर्थ है- "मीडिया, चुंबकीय, ऑप्टिकल, कंप्यूटर मेमोरी, माइक्रोफिल्म, कंप्यूटर जनित माइक्रोफिच या इसी तरह के उपकरण में उत्पन्न, भेजी, प्राप्त या संग्रहीत कोई भी सूचना।"

[10] बीएसए, 2023 की धारा 29

प्राथमिक और द्वितीयक साक्ष्य

प्राथमिक साक्ष्य कानूनी कार्यवाही में सर्वोपरि महत्व रखते हैं, जो साक्ष्य समर्थन की आधारशिला के रूप में कार्य करते हैं। जब कोई दस्तावेज़ सीधे जांच के लिए अदालत में पेश किया जाता है, तो उसे प्राथमिक साक्ष्य के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। यह ध्यान देने योग्य है कि कानूनी संदर्भ में, यदि किसी दस्तावेज़ में कई भाग होते हैं, तो प्रत्येक भाग प्राथमिक साक्ष्य के रूप में अपनी स्थिति बनाए रखता है, जो मामले की अखंडता और मजबूती में काफी योगदान देता है। हालाँकि, एक ही मूल दस्तावेज़ की प्रतियाँ प्राथमिक साक्ष्य के रूप में योग्य नहीं होती हैं यदि वे सभी एक ही प्रक्रिया का उपयोग करके तैयार की जाती हैं। प्राथमिक साक्ष्य द्वितीयक साक्ष्य पर वरीयता लेता है और मामले की सच्चाई को स्पष्ट रूप से स्थापित करने के लिए महत्वपूर्ण है। इस संदर्भ में, यहाँ दूसरा प्रश्न उठाया गया है कि किन मामलों में, डिजिटल डेटा को BSA के अनुसार प्राथमिक या द्वितीयक साक्ष्य माना जा सकता है?

आईईए, 1872 की धारा 62 के खंडों के अलावा, बीएसए के अनुसार धारा 57[11] के तहत प्राथमिक साक्ष्य रखा गया है, जिसमें तुलनात्मक रूप से 4 नए स्पष्टीकरण जोड़े गए हैं।[12]

"स्पष्टीकरण 4.— जहां कोई इलेक्ट्रॉनिक या डिजिटल रिकॉर्ड बनाया या संग्रहीत किया जाता है, और ऐसा भंडारण एक साथ या क्रमिक रूप से कई फाइलों में होता है, ऐसी प्रत्येक फाइल प्राथमिक साक्ष्य है।"

उदाहरण: साइबर अपराध की डिजिटल फोरेंसिक जांच के दौरान, कानून प्रवर्तन द्वारा फ़िशिंग, स्मिशिंग और ई-फ़ार्मिंग से संबंधित डेटा की खोज की गई और दिखाया गया कि संदिग्ध के कंप्यूटर, आईपैड और लैपटॉप में अलग-अलग जगहों पर संग्रहीत कई एन्क्रिप्टेड फ़ाइलें हैं, जिनमें से प्रत्येक में वित्तीय धोखाधड़ी जैसी अवैध गतिविधियों के सबूत हैं। एक साथ या क्रमिक रूप से संग्रहीत प्रत्येक एन्क्रिप्टेड फ़ाइल, संदिग्ध को आपराधिक गतिविधियों से जोड़ने वाले प्राथमिक साक्ष्य के रूप में काम करेगी।

"स्पष्टीकरण 5. - जहां कोई इलेक्ट्रॉनिक या डिजिटल रिकॉर्ड उचित अभिरक्षा से प्रस्तुत किया जाता है, ऐसा इलेक्ट्रॉनिक और डिजिटल रिकॉर्ड प्राथमिक साक्ष्य है, जब तक कि वह विवादित न हो।"

उदाहरण: एक हत्या के मामले की जांच में, पुलिस दूरसंचार कंपनी XYZ से संदिग्ध के सेलफोन रिकॉर्ड, जिसमें टेक्स्ट संदेश और कॉल लॉग शामिल हैं, प्राप्त करती है। रिकॉर्ड के साथ कस्टडी डॉक्यूमेंटेशन की एक श्रृंखला होती है जो उनकी प्रामाणिकता और सत्यनिष्ठा की पुष्टि करती है। चूंकि रिकॉर्ड उचित अभिरक्षा में तैयार किए जाते हैं, इसलिए उन्हें अपराध के समय संदिग्ध के ठिकाने और संचार को स्थापित करने में प्राथमिक साक्ष्य माना जाता है।

"स्पष्टीकरण 6 - जहां एक वीडियो रिकॉर्डिंग को एक साथ इलेक्ट्रॉनिक रूप में संग्रहीत किया जाता है और दूसरे को प्रेषित या प्रसारित या स्थानांतरित किया जाता है, वहां प्रत्येक संग्रहीत रिकॉर्डिंग प्राथमिक साक्ष्य है।"

उदाहरण: बैंक डकैती के एक मामले में, बैंक के अंदर निगरानी कैमरों ने आरोपी, उसके हथियार और नकदी चोरी करने की गतिविधि की फुटेज कैद कर ली। फुटेज को स्टोर के डीवीआर सिस्टम पर एक साथ रिकॉर्ड किया जाता है और एक केंद्रीय निगरानी स्टेशन को प्रेषित किया जाता है। स्थानीय रूप से संग्रहीत फुटेज और प्रेषित फुटेज दोनों प्राथमिक साक्ष्य हैं, जो अपराध का स्पष्ट दृश्य दस्तावेज़ीकरण प्रदान करते हैं।

स्पष्टीकरण 7.- जहां कोई इलेक्ट्रॉनिक या डिजिटल रिकॉर्ड कंप्यूटर में एकाधिक भंडारण स्थानों में संग्रहीत किया जाता है, वहां अस्थायी फाइलों सहित प्रत्येक ऐसा स्वचालित भंडारण प्राथमिक साक्ष्य है।

उदाहरण: POCSO मामले में, जांचकर्ताओं ने आरोपी के कंप्यूटर को जब्त कर लिया और पाया कि बच्चों की पोर्न तस्वीरें कई स्थानों पर संग्रहीत हैं, जिनमें छिपे हुए फ़ोल्डर और एन्क्रिप्टेड ड्राइव शामिल हैं। फोरेंसिक विश्लेषण से अस्थायी भंडारण क्षेत्रों में हटाई गई फ़ाइलों की उपस्थिति का पता चलता है। इनमें से प्रत्येक स्वचालित भंडारण स्थान संदिग्ध के पास अवैध सामग्री के कब्जे और वितरण के प्राथमिक सबूत

[11] बीएसए की धारा 57

[12] भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 62

के रूप में कार्य करता है, जो अभियोजन पक्ष के मामले में योगदान देता है।

ये उदाहरण दर्शाते हैं कि स्पष्टीकरण विशेष रूप से आपराधिक मामलों के संदर्भ में कैसे लागू होते हैं, जहां इलेक्ट्रॉनिक या डिजिटल साक्ष्य विभिन्न अपराधों की जांच और अभियोजन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

इसके अतिरिक्त, धारा 58[13] के तहत दिए गए द्वितीयक साक्ष्य में पुराने कानून के अलावा 3 और खंड (Vi, Vii, Viii) शामिल किए गए[14] :-

(vi) मौखिक स्वीकृतियाँ;

इन्हें एक आपराधिक मामले में शामिल व्यक्ति द्वारा दिए गए बयानों के रूप में माना जाता है जो उनके खिलाफ साक्ष्य के रूप में पेश किए जाते हैं। यह इण्डियन एवीडेंस एक्ट, 1872 की धारा 22A के संदर्भ में है, जिसे अब हटा दिया गया है। कानूनी व्याख्या यह है कि CD/DVD/पेन ड्राइव में संग्रहीत डेटा BSA की धारा 63 के तहत प्रमाण पत्र के बिना स्वीकार्य नहीं है। यह भी स्पष्ट है कि ऐसे प्रमाण पत्र की अनुपस्थिति में, मौखिक स्वीकृति जो कि इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड है, स्वीकार्य नहीं है।

(Vii) लिखित स्वीकृतियाँ;

ये लिखित कथन या दस्तावेज होते हैं, जिनमें व्यक्ति आपराधिक मामले से संबंधित कुछ तथ्यों को स्वीकार करता है। इसमें लिखित स्वीकारोक्ति, पत्र, ईमेल या सोशल मीडिया संदेश शामिल हो सकते हैं, जो आपराधिक गतिविधि में स्पष्ट रूप से शामिल होने की बात स्वीकार करते हैं। उदाहरण के लिए, ड्रग तस्करी के मामले में, कानून प्रवर्तन दो संदिग्धों के बीच अवैध नशीले पदार्थों के परिवहन और वितरण पर चर्चा करते हुए आदान-प्रदान किए गए टेक्स्ट संदेशों की एक श्रृंखला को रोकता है। एक संदिग्ध व्यक्ति टेक्स्ट संदेश के माध्यम से लिखित स्वीकारोक्ति भेजता है, जिसमें ड्रग ऑपरेशन में उनकी भूमिका स्वीकार की जाती है। इंटरसेप्ट किए गए संदेश लिखित स्वीकारोक्ति और दोनों संदिग्धों के खिलाफ़ साक्ष्य के रूप में काम करते हैं।

(viii) कानूनी कार्यवाही में, दस्तावेज़ परीक्षण में विशेषज्ञ/कुशल परीक्षक की प्रस्तुति को द्वितीयक साक्ष्य के रूप में स्वीकार्य माना जाता है। यह विशेष रूप से उन स्थितियों से संबंधित है जहाँ मूल दस्तावेज़ में कई खाते या दस्तावेज़ शामिल हैं जो अदालत में आसानी से जाँच योग्य नहीं हैं।

उदाहरण के लिए, मनी लॉन्ड्रिंग, गबन या फर्जी बैंक ऋण से जुड़े एक सफेदपोश अपराध की जांच में, अभियोजन पक्ष एक फोरेंसिक अकाउंटेंट को विशेषज्ञ गवाह के रूप में बुलाता है। अकाउंटेंट ने बैंक स्टेटमेंट, चालान और लेजर सहित कई वित्तीय दस्तावेजों की जांच की है, जो गबन योजना का आधार बनते हैं। अकाउंटेंट दस्तावेजों में पाई गई विसंगतियों के बारे में गवाही देता है और प्रतिवादी द्वारा की गई धोखाधड़ी गतिविधियों के बारे में विशेषज्ञ विश्लेषण प्रदान करता है।

आपराधिक मामलों में, मौखिक और लिखित स्वीकारोक्ति न्यायालय में प्रस्तुत किए जाने पर शक्तिशाली साक्ष्य के रूप हो सकते हैं, क्योंकि वे अक्सर कथित अपराध में प्रतिवादी की संलिप्तता के बारे में प्रत्यक्ष जानकारी प्रदान करते हैं। इसके अतिरिक्त, दस्तावेज़ परीक्षण में कुशल व्यक्तियों की विशेषज्ञ गवाही जटिल वित्तीय या साक्ष्य संबंधी मुद्दों को स्पष्ट करने में मदद कर सकती है, जिससे न्यायालय को मूल्यवान जानकारी मिल सकती है।

इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य की स्वीकार्यता

प्राथमिक और द्वितीयक साक्ष्य लेते समय न्यायालय में मूल प्रमाण के साथ या उसके बिना प्रासंगिक तथ्यों की स्वीकार्यता पर विचार किया जाता है। तीसरा सवाल यहाँ उठाया गया है कि कैसे और किन कारकों पर डिजिटल या इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड न्यायालय में स्वीकार्य है ? चौथा सवाल यह है कि प्रमाण पत्र पर किसे हस्ताक्षर करना है? बीएसए, 2023 के अनुसार एक नई जोड़ी गई धारा 61 इलेक्ट्रॉनिक और डिजिटल रिकॉर्ड स्वीकार्यता के बारे में बात करती है।

[13] बीएसए 2023

[14] भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1872 की धारा 63

बीएसए के कुछ प्रावधान हैं जो स्वीकार्यता पर विस्तार से चर्चा करते हैं।

"धारा 61:- इस अधिनियम की कोई बात इस आधार पर साक्ष्य में किसी इलैक्ट्रानिक या डिजिटल साक्ष्य की ग्राह्यता से इंकार नहीं करेगी कि यह कोई इलैक्ट्रानिक या डिजिटल अभिलेख है और धारा 63 के अधीन रहते हुए ऐसे अभिलेख का वही विधिक प्रभाव, विधिमान्यता और प्रवर्तनशीलता होगी, जो किसी अन्य अभिलेख की होती है।"

जैसा कि पहले चर्चा की गई है, 2000 से पहले इलैक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड को कोई कानूनी मान्यता नहीं थी। ऐसा सिर्फ़ सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम 2000 के कारण हुआ, जिसने धारा 4 को पेश किया जो इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड को कानूनी मान्यता प्रदान करता है। हालाँकि इसने इण्डियन एवीडेंस एक्ट, 1872 में कई संशोधन किए लेकिन फिर भी यह कई मामलों में विवादित रहा। अब बीएसए की धारा 61 (नया जोड़ा गया) इलैक्ट्रॉनिक या डिजिटल रिकॉर्ड को साक्ष्य के रूप में स्वीकार करने का विस्तार करती है। यह इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड को पारंपरिक कागजी दस्तावेजों के बराबर कानूनी वैधता, प्रवर्तनीयता और प्रभाव प्रदान करता है। इसका तात्पर्य यह है कि इलेक्ट्रॉनिक या डिजिटल रिकॉर्ड को केवल उनके डिजिटल स्वरूप के कारण खारिज नहीं किया जा सकता है। इसके बजाय, उन्हें कानूनी कार्यवाही में भौतिक दस्तावेजों के बराबर माना जाता है। इसे बीएसए की धारा 63 में विशेष रूप से रेखांकित किया गया है जैसे इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड की स्वीकार्यता या वैधता के बारे में विशेष शर्तों या अपवादों को संबोधित करना। उपरोक्त के अलावा, इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड की सामग्री को धारा 63 के अनुसार प्रमाणित किया जा सकता है।[15]

इण्डियन एवीडेंस एक्ट, 1872 के अंतर्गत वर्णित आपराधिक कानून कार्यवाही के क्षेत्र में, इलेक्ट्रॉनिक अभिलेखों का न्यायनिर्णयन धारा 65ए और 65बी में निर्धारित प्रावधानों द्वारा नियंत्रित होता है, जिन्हें अधिनियम में 2000 के संशोधन के माध्यम से शामिल किया गया था। इलैक्ट्रॉनिक साक्ष्य के विवेकपूर्ण संचालन को स्पष्ट करने वाला एक उल्लेखनीय न्यायशास्त्रीय उदाहरण राज्य (एनसीटी दिल्ली) बनाम नवजोत संधू[16] के मामले में सामने आया , जिसे सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय दिया था। इसमें न्यायिक पीठ ने इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य को स्वीकार करने और उसका मूल्यांकन करने की पूरी प्रक्रिया में कानूनी प्रोटोकॉल और मानकों का सावधानीपूर्वक पालन करने के सर्वोपरि महत्व को रेखांकित किया। फोन रिकॉर्ड्स को दर्शाने वाले प्रिंटआउट की स्वीकार्यता के बारे में अदालत के फैसले का विशेष महत्व था, जिसमें यह निर्धारित किया गया था कि अधिनियम की धारा 65बी(4) के अनुसार प्रमाण पत्र के अभाव में भी इस तरह के साक्ष्य को स्वीकार्य माना जा सकता है। इस निर्णय के बाद, अनवर पी. बनाम बशीर[17] के मामले में कानूनी ढांचे के भीतर इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य के प्रमाणीकरण और स्वीकार्यता के आसपास की सूक्ष्म पेचीदगियों में आगे की न्यायिक जांच प्रस्तुत की। हालांकि इस मौजूदा फैसले ने पिछले फैसले को पलट दिया और एक प्रमाण पत्र की आवश्यकता के बारे में व्यापक दिशानिर्देश निर्धारित किए। इन दिशानिर्देशों का उद्देश्य अदालती कार्यवाही में प्रस्तुत इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य की अखंडता और प्रामाणिकता सुनिश्चित करना है। निर्धारित मानदंड विभिन्न पहलुओं को शामिल करते हैं, जिसमें प्रश्नगत इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड की पहचान, उस प्रक्रिया का विस्तृत विवरण जिसके द्वारा रिकॉर्ड तैयार किया गया था, रिकॉर्ड तैयार करने में उपयोग किए गए उपकरण के बारे में विशिष्ट विवरण का प्रावधान, इण्डियन एवीडेंस एक्ट की धारा 65बी(2) के तहत उल्लिखित शर्तों की स्वीकृति और संबंधित डिवाइस के संचालन के लिए जिम्मेदार आधिकारिक पद रखने वाले व्यक्ति द्वारा समर्थन शामिल है। इन कठोर आवश्यकताओं को स्थापित करके, अदालत ने इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड के क्षेत्र में साक्ष्य स्वीकार्यता के मानकों को बनाए रखने की मांग की, जिससे कानूनी कार्यवाही में ऐसे साक्ष्य की स्थिरता और विश्वसनीयता बढ़े।

सोनू@अमर बनाम हरियाणा राज्य[18] *के वाद* के मामले में, अदालत ने अनवर पी. मामले में स्थापित मिसाल से अलग

[15] बीएसए, 2023 की धारा 62

[16] 2005 एससीसी 16 208

[17] अनवर पी. वि . पीके बशीर एवं अन्य (2015) 10 एससीसी 473.

[18] (2017) 8 एससीसी 746.

हटकर धारा 65बी(4) प्रमाणपत्रों की आवश्यकता की पुनः जांच की। इन प्रमाणपत्रों पर "प्रमाण के तरीके" के रूप में पुनर्विचार किया गया और उनकी अनुपस्थिति में सुधार योग्य दोष माना गया। इस दृष्टिकोण को शफी मोहम्मद बनाम हिमाचल प्रदेश[19] राज्य के 2018 के फैसले में और समर्थन मिला। हालाँकि, अर्जुन पंडितराव मामले [20] में सुप्रीम कोर्ट की स्थिति बदल गई, जहाँ इसने कई प्रमुख पहलुओं को स्पष्ट किया। इस मामले में यह कहा गया है कि धारा 65बी(1) के अंतर्गत गैर-बाधा खंड विशेष प्रक्रिया का पालन करने की अनिवार्यता को सुरक्षित करता है। इसमें इलेक्ट्रॉनिक अभिलेखों की स्वीकार्यता और प्रमाण के लिए इसे रेखांकित किया गया है। उल्लेखनीय रूप से, यह 'मूल' इलेक्ट्रॉनिक दस्तावेज़ और इसकी व्युत्पन्न प्रतियों के बीच स्पष्ट अंतर करता है। इसके अतिरिक्त, धारा 65बी(1) एक कानूनी कल्पना स्थापित करती है, जहाँ धारा 65बी(4) में निर्धारित शर्तों के अनुरूप प्रतियों को स्वीकार्य दस्तावेज़ माना जाता है, जिससे मूल की आवश्यकता समाप्त हो जाती है। यह उल्लेखनीय है कि प्राथमिक साक्ष्य के रूप में मान्यता प्राप्त मूल दस्तावेज़ को धारा 65बी आवश्यकताओं के अनुरूप किए बिना स्वीकार किया जा सकता है, जबकि द्वितीयक साक्ष्य के रूप में प्रतियों को धारा 65बी में निर्दिष्ट शर्तों का पालन करना चाहिए।

धारा 65ए और 65बी के अनुप्रयोग में देखे गए दुरुपयोग ने विधायी कार्रवाई को प्रेरित किया, जिसके परिणामस्वरूप बीएसए 2023 की शुरुआत हुई। इस कानून ने न केवल कड़े मानदंड पेश किए, बल्कि एक नया प्रावधान, धारा 61 भी शामिल किया, जिसका उद्देश्य इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य की स्वीकार्यता और हैंडलिंग से जुड़े मुद्दों को संबोधित करना और सुधारना था।

धारा 1)63) BSA 2023 के अनुसार, दस्तावेज़ को किसी भी जानकारी के रूप में परिभाषित किया गया है जो प्रिंट-आउट्स, कॉपी की गई, स्टोर की गई, या मैग्नेटिक, ऑप्टिकल या सेमी-कंडक्टर (नया जोड़ा गया शब्द) माध्यम से इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड में रिकॉर्ड की गई हो, और जो एक कंप्यूटर या संचार उपकरण द्वारा स्टोर या प्रस्तुत की गई हो, इसे दस्तावेज़ माना जाएगा। साथ ही, धारा 63(2) के तहत उल्लिखित कुछ शर्तों के अधीन, इसे अदालत में साक्ष्य के रूप में स्वीकार्य किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, कंप्यूटर आउटपुट उस अवधि के दौरान उत्पन्न किया जाना चाहिए जब कंप्यूटर नियमित रूप से उपयोग में था। दूसरे, इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड में मौजूद जानकारी को नियमित रूप से कंप्यूटर में इनपुट किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त, कंप्यूटर या संचार उपकरण अपराध स्थल के उस प्रासंगिक समय के दौरान सही ढंग से काम कर रहा होना चाहिए। यह ध्यान रखना उचित है कि खराबी से इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड की सटीकता प्रभावित नहीं होनी चाहिए अन्यथा यह अदालत में स्वीकार्यता के लिए समस्या पैदा कर सकता है। इसके अलावा, अदालत में प्रस्तुत इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड में मौजूद जानकारी को कंप्यूटर में उसके सामान्य क्रम के दौरान फीड किए गए डेटा से पुन: प्रस्तुत या प्राप्त किया जाना चाहिए। धारा 63(2) के तहत उल्लिखित मानदंडों को समझाने के लिए, नीचे उदाहरण दिए गए हैं: -

- आपराधिक गतिविधि के लिए कंप्यूटर का नियमित उपयोग: बैंक खातों में सेंध लगाने के आरोपी संदिग्ध से संबंधित साइबर अपराध जांच में, संदिग्ध के कंप्यूटर से जब्त इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड, जैसे नेटवर्क ट्रैफिक लॉग और अनधिकृत पहुंच प्रयासों के टाइमस्टैम्प को साक्ष्य के रूप में स्वीकार किया जा सकता है, यदि यह दर्शाया जाता है कि प्रासंगिक अवधि के दौरान कंप्यूटर का नियमित रूप से ऐसी आपराधिक गतिविधियों के लिए उपयोग किया गया था।
- सूचना का नियमित इनपुट: ऑनलाइन उत्पीड़न और धमकियों से जुड़े मामले में, इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड के रूप में ईमेल आदान-प्रदान और सोशल मीडिया संदेशों की स्वीकार्यता इस बात पर निर्भर करती है कि क्या सामान्य क्रम में संदिग्ध के कंप्यूटर या संचार उपकरण पर इसी तरह के संचार नियमित रूप से भेजे और प्राप्त किए गए थे, जिससे व्यवहार का एक पैटर्न स्थापित होता है।

[19] (2018) 2 एससीसी 801

[20] (2020) 7 एससीसी 1

- उपकरणों का उचित संचालन: दुर्घटना की स्थिति में, सीसीटीवी कैमरे में निहित हार्ड डिस्क या वीडीआर की समय-सीमा और क्षमता के साथ कार्य और सटीकता।

इसके अतिरिक्त, धारा 63(3), जो एकल कंप्यूटर की परिभाषा को संबोधित करती है, जिसे पहले धारा 65बी (3) कहा जाता था, को संशोधित किया गया है ताकि मौजूदा शब्द कंप्यूटर के अलावा "संचार उपकरण" जैसे शब्दों को शामिल किया जा सके। इस खंड में संशोधन करते समय किसी भी गतिविधि के कार्य के दायरे में 'सृजन' शब्द को शामिल किया गया है, साथ ही उप-धारा (2) के खंड (ए) में उल्लिखित उस अवधि में नियमित रूप से की जाने वाली किसी भी गतिविधि के प्रयोजनों के लिए सूचना को संग्रहीत या संसाधित करना नियमित रूप से एक या अधिक कंप्यूटर या संचार उपकरण के माध्यम से किया जाता था। यह अनुसूची में दिए गए प्रमाण पत्र के संबंध में है।

इसके अलावा, बीएसए, 2023 की धारा 63 (4) की अनुसूची में दिए गए हस्ताक्षर की आवश्यकता को अनिवार्य बनाती है। इस प्रमाण पत्र को 2 भागों में विभाजित किया गया है: भाग ए और भाग बी। प्रमाण पत्र के प्रारूप का भाग ए - 'पार्टी द्वारा दिया जाना' और भाग बी- 'विशेषज्ञ द्वारा' जैसा कि बीएसए द्वारा निर्दिष्ट किया गया है। इस प्रकार, भाग ए मालिक, हैंडलर, ऑपरेटर, प्रथम उत्तरदाता, संचार प्रबंधक या संबंधित कंप्यूटर डिवाइस द्वारा प्रदान किया जाता है। दूसरी ओर, यदि किसी कांस्टेबल ने वीडियोग्राफी रिकॉर्ड की है, तो हेड कांस्टेबल या रिकॉर्ड हेड-मोहरिर प्रमाण पत्र प्रदान कर सकता है। अभिरक्षा की श्रृंखला में स्पष्ट रूप से परिवर्तन और उन परिवर्तनों के कारणों का दस्तावेजीकरण किया जाना चाहिए। भाग बी के लिए जिम्मेदार आधिकारिक पद पर बैठे व्यक्ति से प्रमाण पत्र की आवश्यकता होती है जिसने घटनाओं को देखा हो। दूसरी ओर, पहले के उदाहरण के अनुसार, पुलिस स्टेशन का एसएचओ या फोरेंसिक टीम का प्रभारी भाग बी पर हस्ताक्षर कर सकता है। इस प्रमाणपत्र में रिकॉर्ड की पहचान, इसके बनाने का तरीका और डिवाइस का विवरण, धारा 63 (2) की शर्तें और सुरक्षित हैश एल्गोरिदम (SHA1, SHA 256, MD 5 या सरकार द्वारा निर्धारित कोई अन्य मानक) का उचित विवरण शामिल होना चाहिए। प्रथम प्रत्युत्तरकर्ता या SHO को प्राथमिक साक्ष्य की अभिरक्षा की श्रृंखला के साथ, उचित रूप से प्रमाणित, मिरर कॉपी में ऑडियो-वीडियो दस्तावेज़ प्रस्तुत करना चाहिए। पर्याप्त वरिष्ठता वाला कोई अधिकारी, जिसने या तो प्रक्रिया देखी हो या इसकी प्रामाणिकता को प्रमाणित कर सकता हो, वह भी बीएसए[21] के अनुपालन को सुनिश्चित करने के लिए यह प्रमाणीकरण प्रदान कर सकता है। इस मामले में विशेषज्ञ पर्याप्त वरिष्ठता वाला जिम्मेदार अधिकारी होता है जो या तो खुद पूरी प्रक्रिया का साक्ष्य होता है या जो अपने सर्वोत्तम ज्ञान और विश्वास के अनुसार हैंडलर की निरंतरता और प्रामाणिकता की पुष्टि कर सकता है। न्यायालय सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 की धारा 79ए में निर्दिष्ट इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य परीक्षक की राय ले सकता है और पक्ष द्वारा प्रदान की गई सभी हैशिंग और अभिरक्षा की श्रृंखला की जांच कर सकता है[22]। केंद्र सरकार ने पहले ही फोरेंसिक लैब की अधिसूचना जारी कर दी है। इस अधिसूचना का उल्लेख नीचे सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम 2000 की धारा 79ए के तहत 'इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य परीक्षक' के रूप में किया गया है[23]।

[21] अपराध स्थलों की ऑडियो और वीडियो रिकॉर्डिंग पर गृह मंत्रालय का मानक संचालन प्रक्रिया (SoP) उपलब्ध है: अपराध स्थल के लिए ऑडियो-वीडियो रिकॉर्डिंग का SOP (1).pdf (bprd.nic.in) (24.07.2024 को अभिगमित)

[22] सूचना प्रौद्योगिकी (संशोधन) अधिनियम, 2008 की धारा 79ए- "केंद्र सरकार इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य के परीक्षक को अधिसूचित करेगी। केंद्र सरकार किसी भी अदालत या अन्य प्राधिकरण के समक्ष इलेक्ट्रॉनिक रूप के साक्ष्य पर विशेषज्ञ राय प्रदान करने के प्रयोजनों के लिए, आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, केंद्र सरकार या राज्य सरकार के किसी भी विभाग, निकाय या एजेंसी को इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य के परीक्षक के रूप में नियुक्त कर सकती है।"

[23] इलेक्ट्रॉनिक परीक्षक पर अधिसूचना। https://www.meity.gov.in/notification-forensic-labs-%E2%80%98examiner-electronic-evidence%E2%80%99-under-Section-79a-information-technology पर उपलब्ध है । (8 मई 2024 को अभिगमित)

क्र. सं.	फोरेंसिक प्रयोगशाला	स्थान
1	डिजिटल फोरेंसिक प्रयोगशाला, एनएफएसयू परिसर	गुजरात
2	क्षेत्रीय फोरेंसिक विज्ञान प्रयोगशाला (आरएफएसएल)	सूरत, गुजरात
3	साइबर फोरेंसिक और डिजिटल साक्ष्य परीक्षक प्रयोगशाला	कोलकाता, पश्चिम बंगाल
4	फोरेंसिक विंग लैब, रक्षा साइबर एजेंसी (DCyA)	राजाजी मार्ग, नई दिल्ली
5	साइबर फोरेंसिक प्रयोगशाला, नौसेना साइबर समूह	तालकटोरा एनेक्सी, नई दिल्ली
6	साइबर फोरेंसिक प्रभाग, राज्य फोरेंसिक विज्ञान प्रयोगशाला	तिरुवनंतपुरम, केरल
7	साइबर फोरेंसिक प्रयोगशाला, वायु सेना साइबर समूह	नई दिल्ली
8	साइबर फोरेंसिक लैब, CERT-In	-
9	क्षेत्रीय फोरेंसिक विज्ञान प्रयोगशाला, उत्तरी रेंज	धर्मशाला, हिमाचल प्रदेश
10	साइबर फोरेंसिक प्रयोगशाला, सेना साइबर समूह, डीजीएमओ	सिग्नल्स एन्क्लेव, नई दिल्ली
11	राज्य फोरेंसिक विज्ञान प्रयोगशाला	मदिवाला , बैंगलोर
12	केंद्रीय फोरेंसिक विज्ञान प्रयोगशाला (सीएफएसएल)	हैदराबाद
13	फोरेंसिक विज्ञान निदेशालय	गांधी नगर, गुजरात
14	कंप्यूटर फोरेंसिक और डेटा माइनिंग प्रयोगशाला (सीएफडीएमएल), गंभीर धोखाधड़ी जांच कार्यालय (एसएफआईओ)	दिल्ली
15	फोरेंसिक विज्ञान प्रयोगशाला राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र सरकार	रोहिणी, नई दिल्ली

तालिका संख्या: 1 - *आईटी अधिनियम, 2000 की धारा 79ए के तहत भारत में इलेक्ट्रॉनिक परीक्षक*

स्रोत:- इलेक्ट्रॉनिक और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय (Meity)

तालिका संख्या 1 में दर्शाई गईं ये अधिसूचनाएं भारत भर में विभिन्न फोरेंसिक प्रयोगशालाओं को नामित करती हैं। धारा 63(4) (सी) के प्रयोजन के लिए उनकी राय पर भी विचार किया जा सकता है।

इलेक्ट्रॉनिक लेनदेन में पूर्वधारणाएं

समकालीन कानूनी ढाँचे में, इलेक्ट्रॉनिक लेन-देन के सुचारू संचालन को सुविधाजनक बनाने के लिए प्रावधान स्थापित किए गए हैं। इन प्रावधानों में कानून के प्रासंगिक खंडों में उल्लिखित कई धारणाएँ शामिल हैं, जो इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड और हस्ताक्षरों की अखंडता और विश्वसनीयता सुनिश्चित करती हैं। यहाँ आईटी अधिनियम 2000 के संदर्भ में बीएसए 2023 के तहत स्पष्ट की गई प्रमुख धारणाएँ दी गई हैं:

राजपत्रों और आधिकारिक अभिलेखों के बारे में अनुमान: धारा 81 के तहत, न्यायालय इलेक्ट्रॉनिक या डिजिटल अभिलेखों की प्रामाणिकता मानता है। इसका आशय किसी भी इकाई द्वारा बनाए जाने के लिए विधि द्वारा निर्देशित आधिकारिक राजपत्र या अभिलेख होना है। यह अनुमान तब लागू होता है जब इलेक्ट्रॉनिक अभिलेख कानून द्वारा अपेक्षित रूप में रखे जाते हैं और उचित अभिरक्षा से प्रस्तुत किए जाते हैं[24]। धारा 80 से जुड़ी व्याख्या में उचित अभिरक्षा को उस स्थान के रूप

[24] भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023

में समझाया गया है जो सुरक्षा उद्देश्य के लिए दस्तावेजों[25] की देखभाल करता है। 'उचित अभिरक्षा' (Proper Custody) शब्द का इस्तेमाल बीएसए के विभिन्न अन्य प्रावधानों जैसे धारा 57, 80, 81, 93 आदि में किया गया है।

इलेक्ट्रॉनिक समझौतों और हस्ताक्षरों के बारे में उपधारणा : धारा 85 उन समझौतों के संबंध में उपधारणा प्रदान करती है जो इलेक्ट्रॉनिक या डिजिटल प्रकृति के हैं। यह उपधारणा दस्तावेजों पर पक्षों के डिजिटल हस्ताक्षरों पर आधारित है[26]।

इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड और हस्ताक्षरों के बारे में उपधारणा : धारा 86 के तहत डिजिटल हस्ताक्षर और इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड की अखंडता और सुरक्षा और इलेक्ट्रॉनिक हस्ताक्षर को सुरक्षित रखने में पार्टियों के इरादे को स्थापित करते हैं। हालांकि, यदि ये सुरक्षित नहीं हैं, तो ये उपधारणाओं को लागू नहीं किया जाता है [27]।

इलेक्ट्रॉनिक हस्ताक्षर प्रमाणपत्रों (ESC) के बारे में उपधारणा : धारा 87 एक पूर्वधारणा को स्पष्ट करती है जो इलेक्ट्रॉनिक सिग्नेचर सर्टिफिकेट्स (ESCs) के संबंध में है। अदालत यह मानती है, जब तक इसके विपरीत प्रमाणित नहीं किया जाता, कि ESC में सूचीबद्ध जानकारी सही है। यह पूर्वधारणा सभी जानकारी पर लागू होती है, सिवाय उन सब्सक्राइबर की जानकारी के जो अभी तक सत्यापित नहीं की गई है, बशर्ते कि सर्टिफिकेट को सब्सक्राइबर द्वारा स्वीकार किया गया हो [28]।

इलेक्ट्रॉनिक संदेशों के बारे में उपधारणा : यह धारा 90 के तहत बीएसए में लाया गया एक नया बदलाव है। टेलीग्राफ संदेश की जगह इलेक्ट्रॉनिक संदेश ने ले ली है। यह मानता है कि प्रेषक द्वारा अग्रेषित किया गया इलेक्ट्रॉनिक संदेश, प्रेषण के लिए उनके कंप्यूटर में डाले गए संदेश से मेल खाता है। हालाँकि, यह प्रेषक की पहचान के बारे में अनुमान लगाने से परहेज करता है [29]।

पांच वर्ष पुराने इलेक्ट्रॉनिक अभिलेखों के बारे में उपधारणा : धारा 93 न्यायालय को यह उपधारणा करने की अनुमति देती है कि किसी इलेक्ट्रॉनिक अभिलेख पर, जो पांच वर्ष पुराना माना जाता है या सिद्ध किया जाता है, उस व्यक्ति या उसके अधिकृत प्रतिनिधि द्वारा इलेक्ट्रॉनिक हस्ताक्षर लगाए गए हैं, बशर्ते कि इसे उचित अभिरक्षा (Proper Custody) में प्रस्तुत किया गया हो [30]।

बीएसए के विभिन्न अनुभागों में उल्लिखित ये पूर्वधारणाएं, इलेक्ट्रॉनिक अभिलेखों और हस्ताक्षरों की अखंडता और विश्वसनीयता सुनिश्चित करते हुए, आपराधिक मामलों में शामिल इलेक्ट्रॉनिक लेनदेन की कानूनी स्वीकृति और व्याख्या को सरल बनाने का काम करती हैं।

निष्कर्ष

अंत में, भारतीय साक्ष्य अधिनियम , 2023, कानूनी कार्यवाही में इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य की स्वीकार्यता के लिए एक व्यापक रूपरेखा प्रदान करता है, यह सुनिश्चित करता है कि डिजिटल रिकॉर्ड को पारंपरिक साक्ष्य के समान ही जांच और विश्वसनीयता के साथ माना जाता है। एक सुझाव के रूप में, भारतीय संविधान की निरंतर समीक्षा और अद्यतन साक्ष्य तकनीकी प्रगति और इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य के उभरते रूपों के साथ तालमेल बनाए रखने के लिए अधिनियम की आवश्यकता हो सकती है। इसके अतिरिक्त, इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य को संभालने के बारे में कानूनी पेशेवरों के लिए जागरूकता और प्रशिक्षण में वृद्धि से अदालत में समकालीन चुनौतियों का समाधान करने में कानून की प्रभावकारिता बढ़ सकती है।

[25] धारा 81, स्पष्टीकरण

[26] Ibid

[27] Ibid

[28] Ibid

[29] Ibid

[30] Ibid

मानव तस्करी और कानूनी संरचना : पूर्वव्यापी और संभावित

डॉ. (प्रो.) शरणजीत[1]

सार

मानव तस्करी एक ऐसा सीमा रहित अपराध है जो पूरी दुनिया में लाखों लोगों को प्रभावित करता है। वैश्विक समझौते और घरेलू कानून इस संगठित अपराध को रोकने और दंडित करने का प्रयास करते हैं, हालांकि सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक कमजोरियों और यौन व्यापार के कारण मानव तस्करी की समस्या मानवता को झकझोरती रहती है। यह मानवाधिकारों के उल्लंघन का सबसे बुरा रूप है। भारतीय संदर्भ में मानव तस्करी के विभिन्न आयामों से निपटने के लिए मजबूत कानूनी ढांचा मौजूद है। मूल आपराधिक कानूनों में मानव तस्करी को दंडित करने के लिए विभिन्न रूपों में विशिष्ट प्रावधान भी शामिल हैं।

मुख्य शब्द : तस्करी, दुर्व्यवहार, बाल पोर्नोग्राफी, संगठित अपराध, लिंग तटस्थ, ट्रांसजेंडर व्यक्ति, मजबूरन श्रम , यौन गतिविधियों के लिए वाणिज्यिक शोषण।

परिचय

समकालीन समय में, व्यक्तियों की तस्करी एक अंतरराष्ट्रीय संगठित अपराध है। पूरी दुनिया इस तरह के अपराध से प्रभावित है, चाहे वह पीड़ित की उत्पत्ति के संबंध में हो, या पारगमन के देश या गंतव्य देश के संबंध में।[2] मानव तस्करी को रोकने और दंडित करने के लिए अंतरराष्ट्रीय और राष्ट्रीय स्तर पर महत्वपूर्ण पहल की गई है।[3] यह मानव शोषण के सबसे गंभीर रूपों में से एक है, जिसमें उन्हें वस्तुओं के रूप में छोड़ दिया जाता है और विभिन्न प्रकार के अवैध उद्देश्यों के लिए खरीदा/बेचा जाता है, जिसके परिणामस्वरूप शारीरिक,

[1] डॉ. शरणजीत, विधि प्रोफेसर, राजीव गांधी विधि विश्वविद्यालय, पटियाला।

[2] यूएनओडीसी की मानव तस्करी पर वैश्विक रिपोर्ट, 2022 के अनुसार, सीमा पार तस्करी के अधिकांश पीड़ित मूल क्षेत्र के भीतर या आस-पास के पड़ोसी देशों में पाए जाते हैं। घरेलू तस्करी में भी यही सिद्धांत देखा जाता है, जहाँ पीड़ितों को देश के कम आय वाले क्षेत्रों से मुख्य शहरों या आर्थिक केंद्रों में तस्करी करके लाया जाता है। घरेलू तस्करी आंतरिक प्रवास के साथ ओवरलैप हो सकती है।

[3] मानव तस्करी और अन्य लोगों की वेश्यावृत्ति के शोषण के दमन के लिए कन्वेंशन, 1949, नागरिक और राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय वार्ता, 1966, महिलाओं के खिलाफ भेदभाव के उन्मूलन पर कन्वेंशन, 1979, अंतर्राष्ट्रीय संगठित अपराध के खिलाफ संयुक्त राष्ट्र कन्वेंशन , 2003, मानव तस्करी, विशेष रूप से महिलाओं और बच्चों की रोकथाम, दमन और दंड के लिए प्रोटोकॉल। महिलाओं और बच्चों की तस्करी की रोकथाम और मुकाबला करने पर सार्क कन्वेंशन 2002।

यौन, मनोवैज्ञानिक, आर्थिक, भावनात्मक शोषण और हिंसा होती है।

संवैधानिक आदेशों और कानूनी प्रावधानों के बावजूद, मानवता अभी भी मानव तस्करी से निपटने के लिए संघर्ष कर रही है।[4] जो कि सामाजिक, मौद्रिक और अन्य प्रकार की कमजोरियों के कारण होने वाली आधुनिक गुलामी है।[5] मानव तस्करी को अक्सर अपराधों से भरा हुआ माना जाता है[6] क्योंकि मानव तस्करी विभिन्न उद्देश्यों के लिए हो सकती है जैसे वाणिज्यिक यौन शोषण, मजबूरन श्रम , अंगों का अवैध व्यापार , बच्चों का श्रम , मजबूरन विवाह,[7] सैनिकों के रूप में बच्चों की भर्ती[8] कुछ प्रमुख उद्देश्य हैं।

इस अपराध का अध्ययन अंतर-पीढ़ीगत यौन कार्य के परिप्रेक्ष्य से भी किया जा सकता है, जहां हजारों लड़कियों को परंपरा के रूप में उनके अपने माता-पिता द्वारा देह व्यापार के लिए मजबूर किया जाता है।[9] इस अपराध के लिए जिम्मेदार कारक हैं लिंग पूर्वाग्रह (ट्रांसजेंडरों को भी देह व्यापार में धकेला जाता है), प्राकृतिक आपदाएँ, संघर्ष की स्थितियाँ,[10] पर्यटन और तस्करी, औद्योगिकीकरण और प्रवास, हानिकारक पारंपरिक, सांस्कृतिक प्रथाएँ आदि।[11] यह अपराध गुप्त प्रकृति का है जो पुलिस अधिकारियों के काम को बहुत मुश्किल बना देता है। सर्वोच्च न्यायालय ने सही कहा कि, "पीड़ित महिलाएँ और बच्चे आमतौर पर अपनी मर्जी से वेश्यालय नहीं आते हैं, बल्कि उन्हें अत्यधिक व्यवस्थित तरीके से ऐसे व्यक्तियों के समूह द्वारा लाया जाता है जो लोगों को वेश्यावृत्ति में खरीदते और बेचते हैं।[12] बच्चों की तस्करी के अधिकांश मामले व्यावसायिक यौन शोषण की ओर ले जाते हैं।[13]

मानव तस्करी को परिभाषित करना

विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय दस्तावेजों में मानव तस्करी का वर्णन किया गया है।[14] इसमें धमकी, जबरदस्ती, अपहरण, छल, अधिकार या कमजोरी का दुरुपयोग करके या भुगतान या लाभ की पेशकश या प्राप्ति करके लोगों का चयन, पारगमन, स्थानांतरण, शरण देना या प्राप्त करना शामिल है।

---

[4] पंचानन पाधी बनाम ओडिशा राज्य, एआईआर ऑनलाइन 2020 ओआरआई 72।

[5] ग्लोबल स्लेवरी इंडेक्स 2023 के अनुसार, दुनिया के 20 सबसे अमीर देशों में आधुनिक गुलामी में रहने वाले अनुमानित 50 मिलियन लोगों में से आधे से ज़्यादा लोग रहते हैं। जी20 देशों में, भारत 11 मिलियन लोगों के साथ इस सूची में सबसे ऊपर है जो जबरन मज़दूरी करते हैं। स्रोत- https://www.thehindu.com.national .

[6] भारतीय न्याय संहिता, 2023 की विभिन्न धाराएँ देखें, जैसे धाराएँ 61,63,64, 70, 71, 74, 76, 79, 96,98,99,101, 111, 114, 116, 126,127, 129, 130,137, 138, 139,141, 142, 143, 144, 145, 146, 351। इस लेख में चर्चा किए गए विशेष कानून भी प्रासंगिक हैं।

[7] मानव तस्करी पर वैश्विक रिपोर्ट, 2022 के अनुसार - अंगों को निकालने के लिए 0.2% तस्करी, अवैध गोद लेने के लिए 0.3% तस्करी, शोषणकारी भीख मांगने के लिए 0.7% तस्करी, जबरन विवाह के लिए 0.9% तस्करी, जबरन आपराधिक गतिविधि के लिए 10.2% तस्करी, शोषण के मिश्रित रूप 10.3%, यौन शोषण के लिए 38.7% तस्करी, जबरन श्रम के लिए 38.8% तस्करी। (स्रोत - यूएनओडीसी द्वारा राष्ट्रीय डेटा का विस्तार। 2020 में 86 देशों में पाए गए कुल 36, 488 पीड़ितों के आधार पर, पृष्ठ 23)।

[8] बच्चों और सशस्त्र संघर्ष पर महासचिव के विशेष प्रतिनिधि के अनुसार, सशस्त्र समूहों से जुड़े बच्चों की भर्ती और उपयोग हमेशा मानव तस्करी का गठन करता है; संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार परिषद, बच्चों और सशस्त्र संघर्ष के लिए महासचिव के विशेष प्रतिनिधि की वार्षिक रिपोर्ट, ए/एचआरसी/37/47, पृष्ठ 15-16।

[9] अनुजा अग्रवाल, पवित्र पत्नियाँ और वेश्या बहन: भारत के बेदिया लोगों के बीच पितृसत्ता और वेश्यावृत्ति रूटलेज , नई दिल्ली 2008।

[10] मार्च 2022 में, संयुक्त राष्ट्र महासचिव ने कहा, "शिकारियों और मानव तस्करों के लिए, युद्ध एक त्रासदी नहीं है - यह एक अवसर है"। 2020 में, यूक्रेन में अफ़गानिस्तान में संघर्षों के बढ़ने से पहले, वैश्विक स्तर पर पाए गए मानव तस्करी के कुल पीड़ितों में से लगभग 12% संघर्ष से प्रभावित देश से थे। स्रोत - जैसा कि UNODC ग्लोबल रिपोर्ट ऑन ट्रैफिकिंग इन पर्सन्स, 2022 में उद्त किया गया है।

[11] हानिकारक सांस्कृतिक प्रथाओं के संबंध में विशाल जीत बनाम भारत संघ, एआईआर 1990 एससी 1412 देखें।

[12] बचपन बचाओ आंदोलन बनाम भारत संघ, (2011) 5 एससीसी 1।

[13] महिलाओं और लड़कियों के अनैतिक व्यापार के दमन अधिनियम, 1956, खंड-7 पर भारतीय विधि आयोग की 64 वीं रिपोर्ट देखें । महिलाओं और बच्चों की बिक्री, खंड 13 पर भारतीय विधि आयोग की 146 वीं रिपोर्ट भी देखें । बलात्कार कानूनों की समीक्षा पर भारतीय विधि आयोग की 172 वीं रिपोर्ट।

[14] मानव तस्करी, विशेषकर महिलाओं और बच्चों की तस्करी को रोकने, दबाने और दंडित करने के लिए संयुक्त राष्ट्र प्रोटोकॉल, अनुच्छेद 3(ए)।

भारतीय न्याय संहिता, 2023[15] ने इस अपराध को भी शामिल किया है। भारतीय कानून में निहित परिभाषा मोटे तौर पर संयुक्त राष्ट्र प्रोटोकॉल में दिए गए सभी मापदंडों को कवर करती है।[16] बीएनएस ने मानव तस्करी के लिए न्यूनतम अनिवार्य सजा सात साल निर्धारित की है जो 10 साल तक हो सकती है । हालांकि, कई पीड़ितों के मामले में, न्यूनतम 10 साल की सजा का प्रावधान किया गया है जिसे आजीवन कारावास तक बढ़ाया जा सकता है ।

मानव तस्करी से संबंधित कानून

इस गंभीर अपराध से निपटने के लिए अनेक कानून हैं, जिनका संक्षेप में वर्णन आगे किया गया है।[17]

संविधान हमारा सर्वोच्च कानून है। अनुच्छेद 23 मानव तस्करी, बेगार और अन्य प्रकार के अनिवार्य श्रम को रोकता है । इसी तरह, अनुच्छेद 39E और 39F में भी इस मुद्दे से निपटने के प्रावधान हैं। ये प्रावधान इस बात पर जोर देते हैं कि लोगों की भलाई और सहनशक्ति का सम्मान किया जाना चाहिए और पैसे की कमी के कारण किसी को भी उसकी उम्र या ताकत के विरुद्ध काम नहीं करना चाहिए और बचपन और युवावस्था को शोषण से बचाया जाना चाहिए।[18] संविधान, भाग III में व्यक्तियों के जबरन व्यापार पर प्रहार करता है।[19]

अनैतिक व्यापार निवारण अधिनियम, 1956[20] - यह एक विशेष कानून है जो वेश्यालय चलाने या परिसर को वेश्यालय के

---

[15] भारतीय न्याय संहिता, 2023 (अधिनियम 45, 2023), भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) को निरस्त करता है।

[16] (1) जो कोई शोषण के प्रयोजन से किसी व्यक्ति या व्यक्तियों को भर्ती करता है, परिवहन करता है, शरण देता है , स्थानांतरित करता है या प्राप्त करता है, (क) धमकी देकर; या (ख) बल प्रयोग करके, या किसी अन्य प्रकार का दबाव डालकर; या (ग) अपहरण करके; या (घ) धोखाधड़ी या छल करके; या (ङ) शक्ति का दुरुपयोग करके; या (च) भर्ती, परिवहन, आश्रय, स्थानांतरित या प्राप्त व्यक्ति पर नियंत्रण रखने वाले किसी व्यक्ति की सहमति प्राप्त करने के लिए भुगतान या लाभ देने या प्राप्त करने सहित प्रलोभन द्वारा, तस्करी का अपराध करता है।

स्पष्टीकरण 1 - "शोषण" शब्द में शारीरिक शोषण या किसी भी प्रकार का यौन शोषण, गुलामी या गुलामी, दासता, भिक्षावृत्ति या अंगों को जबरन निकालने जैसी कोई भी प्रथा शामिल होगी।

स्पष्टीकरण 2 – तस्करी के अपराध के निर्धारण में पीड़ित की सहमति महत्वहीन है।

(2) जो कोई दुर्व्यापार का अपराध करेगा, उसे कम से कम सात वर्ष के कठोर कारावास से दण्डित किया जाएगा, किन्तु उसे दस वर्ष तक बढ़ाया जा सकेगा, और वह जुर्माने से भी दण्डित किया जाएगा।

(3) जहां अपराध में एक से अधिक व्यक्तियों की तस्करी शामिल है, वहां उसे कम से कम 10 वर्ष के कठोर कारावास से, किंतु आजीवन कारावास तक के कारावास से, दंडनीय होगा और जुर्माने से भी दंडनीय होगा।

(4) जहां अपराध में किसी बालक का दुर्व्यापार अंतर्ग्रस्त है, वहां वह कठोर कारावास से दण्डनीय होगा, जिसकी अवधि 10 वर्ष से कम नहीं होगी, किन्तु जो आजीवन कारावास तक की हो सकेगी, तथा जुर्माने से भी दण्डनीय होगा।

(5) जहां अपराध में एक से अधिक बालकों की तस्करी शामिल है, वहां वह कठोर कारावास से दण्डनीय होगा, जिसकी अवधि 14 वर्ष से कम नहीं होगी, किन्तु जो आजीवन कारावास तक की हो सकेगी, तथा जुर्माने से भी दण्डनीय होगा।

(6) यदि किसी व्यक्ति को एक से अधिक बार बालक की तस्करी के अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जाता है, तो ऐसे व्यक्ति को आजीवन कारावास से, जिसका अर्थ उस व्यक्ति के शेष प्राकृतिक जीवनकाल के लिए कारावास होगा, दंडित किया जाएगा और वह जुर्माने से भी दंडनीय होगा।

(7) जब कोई लोक सेवक या पुलिस अधिकारी किसी व्यक्ति के अवैध व्यापार में संलिप्त हो, तो ऐसे लोक सेवक या पुलिस अधिकारी को आजीवन कारावास से, जिसका अर्थ उस व्यक्ति के शेष प्राकृत जीवनकाल के लिए कारावास होगा, दंडित किया जाएगा और वह जुर्माने से भी दंडनीय होगा।

[17] भारत का संविधान, 1950; सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000; मानव अंग प्रत्यारोपण अधिनियम, 1994; बंधुआ मजदूरी (उन्मूलन और निषेध) अधिनियम, 1976; अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989; किशोर न्याय (देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2015; यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण अधिनियम, 2012; ट्रांसजेंडर व्यक्ति (अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, 2019 आदि।

[18] इसके अलावा, मानव तस्करी के पीड़ितों को न्याय दिलाने के संबंध में अनुच्छेद 14, 15(3), 19 और 21 भी महत्वपूर्ण हैं।

[19] फ्रांसिस बनाम केंद्र शासित प्रदेश , एआईआर 1981 एससी 746 में यह माना गया कि अनुच्छेद 21 के तहत जीवन के अधिकार का अर्थ मानवीय गरिमा के साथ जीने के अधिकार से लिया जाना चाहिए।

[20] आईएमटीपी अधिनियम, 9 मई 1950 को न्यूयॉर्क में हस्ताक्षरित अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन अर्थात अनैतिक व्यापार की रोकथाम के लिए अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन के अनुसरण में अधिनियमित किया गया था।

रूप में इस्तेमाल करने की अनुमति देने के लिए दंड, वेश्यावृत्ति की आय से जीवित रहने के लिए दंड, वेश्यावृत्ति के उद्देश्य से किसी को प्राप्त करना, मजबूर करना या भर्ती करना, और किसी को ऐसी जगह पर रखना जहाँ वेश्यावृत्ति का अभ्यास किया जाता है, वेश्यावृत्ति के उद्देश्य से बहकाना/प्रलोभन करना, हिरासत में बहकाना दंडित करता है। यह अधिनियम विशेष जांच अधिकारियों को सर्च वारंट की आवश्यकता के बिना तलाशी लेने की बढ़ी हुई शक्तियाँ प्रदान करता है तथा व्यक्ति को छुड़ाने, वेश्यालय को बंद करने, संरक्षण गृहों के प्रावधान, अन्य प्रावधानों के अलावा विशेष न्यायालयों की स्थापना का प्रावधान करता है।

बंधुआ मजदूरी प्रणाली (उन्मूलन) अधिनियम, 1976 - गरीब मजदूरों को खरीदने और उन्हें वित्तीय ऋण चुकाने तक बंधुआ बनाकर रखने की सदियों पुरानी प्रथा को ध्यान में रखते हुए , बीएलए, 1976 अधिनियमित किया गया था। इस अधिनियम का प्राथमिक उद्देश्य भारतीय व्यवस्था से इस तरह की बुराई को खत्म करने के लिए पर्याप्त प्रावधान करना और यह सुनिश्चित करना था कि इस तरह की प्रथाओं का शिकार हुए लोगों का पुनर्वास किया जाए।

मानव अंग एवं ऊतक प्रत्यारोपण अधिनियम, 1994 - यह कानून आर्थिक लाभ के लिए मानव शरीर के अंगों के वाणिज्यिक व्यापार को रोकने के लिए बनाया गया है। इस कानून का उद्देश्य विनियमन करना है। यह कानून उन अस्पतालों के पंजीकरण को संबोधित करता है जो मानव अंगों और ऊतकों को निकालते हैं। यह इस कानून के तहत अवैध कृत्यों के लिए कई अपराधों और संबंधित दंडों का भी प्रावधान करता है।

अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 - पीओए को उन समुदायों की रक्षा के लिए क़ानून की किताब में लाया गया है जो ऐतिहासिक रूप से कमज़ोर रहे हैं यानी एससी/एसटी समुदाय। अधिनियम में यह प्रावधान है कि यदि एसटी/एससी समुदाय का कोई गैर-सदस्य इन समूहों में से किसी एक के सदस्य को सार्वजनिक उद्देश्यों से संबंधित सरकार द्वारा लगाए गए किसी अनिवार्य कार्य के अलावा बेगार या बंधुआ मज़दूरी करने के लिए मजबूर करता है, तो ऐसे व्यक्ति/व्यक्तियों को इस कानून के अनुसार दंडित किया जाएगा।

किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2015 - जेजे अधिनियम उन नाबालिगों की सुरक्षा के लिए लागू किया गया है जो अपराधी बन गए हैं और साथ ही उन नाबालिगों की भी सुरक्षा के लिए जिन्हें देखभाल की आवश्यकता है।[21] जेजे एक्ट में उन नाबालिगों के लिए विस्तृत रूप से प्रावधान किया गया है जिन्हें कानून के संरक्षण की आवश्यकता है।[22] इसलिए, जो बच्चे बंधुआ हैं, भीख मांगने के लिए मजबूर हैं, सड़कों पर रहते हैं, या ऐसे व्यक्ति के साथ रहते हैं जो या तो बच्चे का माता-पिता या अभिभावक है और जिसने बच्चे को नुकसान पहुंचाया है, उसका शोषण किया है, उसके साथ दुर्व्यवहार किया है या उसकी उपेक्षा की है या ऐसा करने की धमकी दी है; एक बच्चा जो लापता है या भाग गया है; एक बच्चा जिसके माता-पिता को ईमानदारी से प्रयास करने के बावजूद नहीं पाया जा सका; एक नाबालिग जिसके साथ यौन शोषण या गैरकानूनी कृत्यों आदि के लिए दुर्व्यवहार, अत्याचार या शोषण किया गया है या किया जा रहा है या होने की संभावना है, ये सभी कानून के दायरे में आते हैं। यह कानून राज्य सरकार से इस संबंध में कल्याण समितियों का गठन करने के लिए कहता है। कल्याण समितियों को तस्करी किए गए बच्चों के संबंध में विशेष कर्तव्यों के साथ-साथ दायित्व भी सौंपे जाते हैं, जैसे कि यौन शोषण के शिकार युवाओं को अपने पैरों पर खड़ा होने में मदद करना।

होरीलाल बनाम *दिल्ली पुलिस आयुक्त* दिल्ली[23] मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने लापता बच्चों की दुर्दशा को दूर करने के

[21] जे.जे. अधिनियम, बाल अधिकार सम्मेलन में निर्धारित मानकों, किशोर न्याय प्रशासन के लिए संयुक्त राष्ट्र मानक न्यूनतम नियम, 1985, स्वतंत्रता से वंचित किशोरों के संरक्षण के लिए संयुक्त राष्ट्र नियम, 1990, बच्चों के संरक्षण और अंतर्देशीय दत्तक ग्रहण के संबंध में सहयोग पर हेग सम्मेलन, 1993 और अन्य संबंधित अंतर्राष्ट्रीय साधनों को ध्यान में रखता है।

[22] इस कानून के अनुसार, देखभाल और संरक्षण की आवश्यकता वाले बच्चों में वह बच्चा भी शामिल है जो श्रम कानूनों का उल्लंघन करते हुए, भीख मांगते हुए, सड़कों पर रहते हुए पाया जाता है।

[23] डब्ल्यू.पी. (सीआरएल.) 610 ऑफ 1996.

लिए विस्तृत दिशा-निर्देश दिए, जिनमें एफआईआर दर्ज करना और उनका पता लगाने के लिए संस्थागत सहायता तंत्र बनाना शामिल है।[24]

तस्करी के शिकार बच्चों के संदर्भ में धारा 74 जे.जे. एक्ट भी महत्वपूर्ण है क्योंकि यह बच्चों के नाम और अन्य विवरणों का खुलासा करने के बारे में निषेध से संबंधित है। धारा 75 बच्चों के साथ क्रूरता करने पर दंड का प्रावधान करती है।[25] धारा 76 भिक्षा एकत्र करने के लिए नाबालिगों को काम पर रखने पर दंड का प्रावधान करती है।[26] धारा 77 बच्चों को मादक ड्रग्स या शराब देने पर दंड का प्रावधान करती है। धारा 81 किसी भी उद्देश्य के लिए बच्चों की बिक्री और खरीद से संबंधित है।[27] इसके अलावा, धारा 83 उग्रवादी समूहों द्वारा नाबालिगों के शोषण के लिए दंड का प्रावधान करती है।[28] धारा 84 बच्चे के अपहरण और अपहरण के अपराध से संबंधित है। धारा 85 विकलांग बच्चों पर किए गए अपराध से संबंधित है। धारा 87 इस अधिनियम के तहत अपराधों के लिए उकसाने से संबंधित है। मानव तस्करों द्वारा अंतर-राष्ट्रीय रूप से बच्चों को गोद लेने का भी दुरुपयोग किया जाता है।[29]

सूचना एवं प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 – आईटी अधिनियम, प्रौद्योगिकी का उपयोग करके किए गए अपराधों से संबंधित है। साइबर पोर्नोग्राफी की धारा 67 के तहत अवैध है, जो ऑनलाइन आपत्तिजनक सामग्री भेजने को भी दंडित करती है। धारा 67A किसी भी ऐसी सामग्री को प्रकाशित करने या इलेक्ट्रॉनिक रूप से भेजने के लिए दंड को संबोधित करती है जिसमें यौन कार्य आदि स्पष्ट रूप से शामिल हैं। धारा 67B इलेक्ट्रॉनिक सामग्री पोस्ट करने या भेजने के लिए दंड को संबोधित करती है जिसमें युवाओं को स्पष्ट यौन व्यवहार आदि में संलिप्त दिखाया गया हो।

यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण अधिनियम, 2012 - यह एक लिंग-तटस्थ कानून[30] है जो यौन हमलों, गंभीर यौन हमलों, यौन उत्पीड़न और पोर्नोग्राफी के अपराधों से निपटता है। इस कानून द्वारा बच्चों पर यौन हमले से निपटने वाले मामलों की जांच, पूछताछ और सुनवाई के लिए एक विशेष तंत्र बनाया गया है।

ट्रांसजेंडर व्यक्ति (अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, 2019 यह एक कल्याणकारी कानून है जिसका उद्देश्य ट्रांसजेंडरों के विरुद्ध भेदभाव को रोकना और समावेशिता को बढ़ावा देता है।[31] धारा 18 अपराधों और दंडों को संबोधित करती है। सार्वजनिक उद्देश्यों के लिए सरकार द्वारा लगाई गई किसी भी अनिवार्य सेवा के अलावा, यह किसी ट्रांसजेंडर व्यक्ति

---

[24] किशोर न्याय (बालकों की देखभाल एवं संरक्षण) अधिनियम, 2015 की धारा 32, 33, 39, 40, 41, 42 का भी संदर्भ लें।

[25] धारा में यह प्रावधान है कि जो कोई, किसी बालक का वास्तविक प्रभार या नियंत्रण रखते हुए, बालक पर हमला करता है, उसे छोड़ देता है, उसका शोषण करता है, उसे अनावृत करता है या जानबूझकर उसकी उपेक्षा करता है या बालक पर हमला करता है, उसे छोड़ देता है, उसके साथ दुर्व्यवहार करता है, उसे अनावृत करता है और उसके साथ इस प्रकार का व्यवहार करता है जिससे बालक को अनावश्यक मानसिक या शारीरिक कष्ट हो, तो उसे तीन वर्ष तक के कारावास या एक लाख रुपए के जुर्माने या दोनों से दण्डित किया जा सकता है।

[26] इसमें कहा गया है कि जो कोई भी किसी बच्चे को भीख मांगने के लिए नियुक्त करता है या उसका उपयोग करता है, उसे पांच वर्ष तक के कारावास की सजा हो सकती है और एक लाख रुपये का जुर्माना भी देना होगा: बशर्ते कि यदि भीख मांगने के उद्देश्य से, कोई व्यक्ति बच्चे को लांछित करता है या अपंग बनाता है, तो उसे कम से कम सात वर्ष की अवधि के कठोर कारावास की सजा हो सकती है, जिसे दस वर्ष तक बढ़ाया जा सकता है और पांच लाख रुपये का जुर्माना भी देना होगा।

[27] इस धारा में यह प्रावधान है कि कोई भी व्यक्ति जो किसी भी उद्देश्य के लिए बच्चे को बेचता या खरीदता है, उसे 5 वर्ष तक के कठोर कारावास की सजा दी जा सकती है और एक लाख रुपये के जुर्माने का भी भुगतान करना होगा: बशर्ते कि जहां ऐसे अपराध बच्चे की वास्तविक देखभाल करने वाले व्यक्ति द्वारा किए जाते हैं, जिसमें अस्पताल या नर्सिंग होम या प्रसूति गृह के कर्मचारी भी शामिल हैं, कारावास की अवधि तीन वर्ष से कम नहीं होगी और 7 वर्ष तक बढ़ाई जा सकती है।

[28] धारा 83 उग्रवादी समूहों द्वारा बच्चों के इस्तेमाल के अपराध से संबंधित है और इसके लिए 7 वर्ष तक के कठोर कारावास तथा पांच लाख रुपए के जुर्माने की सजा हो सकती है।

[29] लक्ष्मीकांत पांडे बनाम भारत संघ एआईआर 1984 एससी 469 को देखें।

[30] साक्षी बनाम भारत संघ, एआईआर 2004 एससी 3566

[31] नालसर बनाम भारत संघ, (2014) एससीसी 438

को जबरन या बंधुआ मजदूरी में शामिल होने के लिए मजबूर करने या लालच देने को दंडित करती है। किसी ट्रांसजेंडर के जीवन, सुरक्षा, स्वास्थ्य, कल्याण - चाहे शारीरिक या मानसिक - को नुकसान पहुंचाना/चोट पहुंचाना, शारीरिक, यौन, मौखिक, भावनात्मक या मौद्रिक दुर्व्यवहार जैसी गतिविधियों को करने की प्रवृत्ति, अधिकतम दो साल की जेल और जुर्माने से दंडनीय है।

महत्वपूर्ण बात यह है कि बीएनएस, 2023 धारा 2(10) ने लिंग की परिभाषा को परिष्कृत करके इसे समावेशी बनाया है।[32]

भारतीय दंड संहिता, 1860 के तहत मानव तस्करी से निपटने के लिए प्रासंगिक प्रावधानों का बीएनएस, 2023 के साथ तुलनात्मक विश्लेषण

आईपीसी, 1860 में धारा 370 मानव तस्करी से संबंधित है, बीएनएस, 2023 में धारा 143 इसी तरह के अपराध से संबंधित है। बीएनएस में स्पष्टीकरण 1 के माध्यम से 'भीख मांगना' भी जोड़ा गया है। दोनों में शेष तत्व समान हैं।

भारतीय दंड संहिता की धारा 370 ए तस्करी के शिकार व्यक्ति के शोषण के अपराध से संबंधित है, बीएनएस में यह धारा 144 है और 'बच्चे'[33] शब्द के स्थान पर 'नाबालिग' शब्द का प्रयोग किया गया है, जो कि भारतीय दंड संहिता की धारा 370 ए में प्रयोग किया गया था। नए कानून की धारा 144 में सजा को 5 वर्ष से बढ़ाकर 7 वर्ष कर दिया गया है।

आईपीसी की धारा 371 में आदतन गुलामों का व्यापार करने के अपराध को शामिल किया गया है। बीएनएस की धारा 145 के तहत इस अपराध के लिए दंड का प्रावधान है।

आईपीसी की धारा 372 'वेश्यावृत्ति आदि के लिए नाबालिग की बिक्री' के अपराध से संबंधित है, धारा 373 'वेश्यावृत्ति के लिए नाबालिग की खरीद' से संबंधित है। बीएनएस की धारा 98 वेश्यावृत्ति के लिए बच्चे की बिक्री से संबंधित है। दोनों प्रावधानों की तुलना करने पर यह बात सामने आती है कि नए आपराधिक कानून में 'नाबालिग' शब्द की जगह 'बच्चा' शब्द का इस्तेमाल किया गया है। महत्वपूर्ण बात यह है कि इस अपराध के लिए सजा में कोई बदलाव नहीं किया गया है।

भारतीय दंड संहिता की धारा 373 व्यावसायिक उद्देश्यों के लिए बच्चों के व्यापार पर रोक लगाती है । बीएनएस की धारा 99 वेश्यावृत्ति आदि के लिए बच्चों को खरीदने के कृत्य को अपराध बनाती है। पुराने औपनिवेशिक कानून में धारा 373 के तहत कोई न्यूनतम अनिवार्य सजा का प्रावधान नहीं था। इसके विपरीत, बीएनएस ने न्यूनतम अनिवार्य कारावास और अधिकतम सजा में वृद्धि करके कठोर सजा का प्रावधान किया है।[34]

आईपीसी की धारा 374 के तहत गैरकानूनी अनिवार्य श्रम को अपराध माना गया है । बीएनएस की धारा 146 के तहत इसे अपराध माना गया है।

भारतीय दंड संहिता की धारा 366ए नाबालिग लड़की को खरीदने के अपराध से संबंधित है। इसी तरह धारा 366बी किसी दूसरे देश से लड़की को लाने के अपराध से संबंधित है। बीएनएस धारा 141 अब किसी लड़की या लड़के को दूसरे देश से लाने के अपराध से संबंधित है ।

धारा 372 वेश्यावृत्ति के उद्देश्य से नाबालिग को बेचने से संबंधित है। बीएनएस में धारा 98 वेश्यावृत्ति आदि के उद्देश्य से बच्चे को बेचने को अपराध मानती है । बीएनएस के तहत सजा में कोई बदलाव नहीं किया गया है।

बीएनएस की धारा 111, संगठित अपराध और मानव तस्करी से संबंधित है और इसमें यौन कार्य के लिए मानव तस्करी भी शामिल है। यह उल्लेखनीय है कि आईपीसी में इस तरह के संगठित अपराध के संबंध में कोई प्रावधान नहीं है।

मानव तस्करी के पीड़ितों को न्याय

भारतीय न्यायपालिका स्वतंत्रता के सच्चे संरक्षक के रूप में कार्य

[32] लिंग का अर्थ है "सर्वनाम "वह" और इसके व्युत्पन्न किसी भी व्यक्ति के लिए उपयोग किए जाते हैं, चाहे वह पुरुष, महिला या ट्रांसजेंडर हो"

[33] धारा 2(3) बीएनएस, 2023 में "बच्चे" की परिभाषा 18 वर्ष से कम आयु के किसी भी व्यक्ति के रूप में दी गई है।

[34] धारा 99 के तहत न्यूनतम अनिवार्य सजा सात वर्ष तथा अधिकतम सजा 14 वर्ष निर्धारित की गई है।

करती है। संवैधानिक न्यायालयों ने पीड़ितों के अधिकारों की रक्षा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। सर्वोच्च न्यायालय[35] ने अनुच्छेद 23 की व्यापकता और दायरे पर विचार करते हुए, विशेष रूप से "मानव तस्करी", "बेगार" और अन्य प्रकार के जबरन श्रम को लक्षित किया है , जहाँ भी वे पाए जा सकते हैं।

सर्वोच्च न्यायालय[36] ने वेश्याओं से पैदा हुए बच्चों की शिक्षा के मुद्दे पर भी विचार किया और मानव तस्करी की जांच कर समस्या से निपटने के तरीके और साधन सुझाने के लिए एक समिति के गठन[37] का आदेश दिया। इसी तरह, सर्वोच्च न्यायालय[38] ने यौन शोषण के शिकार बच्चों से संबंधित मुद्दों और अधिकारियों के रवैये में संवेदनशीलता की कमी का संज्ञान लिया। राजस्थान राज्य बनाम ओम प्रकाश[39] के मामले में, न्यायालय ने एक बार फिर इस बात पर जोर दिया कि बच्चों के साथ बलात्कार और यौन शोषण के मामलों को न्यायाधीशों के लिए समझदारी से निपटाना कितना महत्वपूर्ण है। फिर से, सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि बच्चों के साथ यौन शोषण या बलात्कार के मामलों की सुनवाई के संबंध में ठोस सुझाव दिए गए।[40] यौन दुर्व्यवहार और उत्पीड़न के शिकार बच्चों के संबंध में संविधान के अनुच्छेद 15(3), 21, 21ए, 23 और 45 का हवाला देते हुए मामले की सुनवाई की गई।[41]

एम.सी. मेहता बनाम *तमिलनाडु राज्य एवं अन्य* के मामले में,[42] न्यायालय ने खतरनाक उद्योगों में काम करने वाले बच्चों की सुरक्षा के लिए व्यापक सिफारिशें कीं। उच्च न्यायालयों[43] ने मानव तस्करी, वेश्यावृत्ति के खतरे और समाज पर उनके प्रभाव पर भी विचार किया है। पुनः,[44] संवैधानिक न्यायालय ने जबरन यौन शोषण की जांच के लिए एक विशेष एजेंसी (मानव तस्करी विरोधी इकाई) की आवश्यकता पर बल दिया। स्थानीय पुलिस स्टेशन में दर्ज ऐसी एफआईआर को 24 घंटे के भीतर आगे की जांच के लिए विशेष एजेंसियों को सौंप दिया जाना चाहिए। फिर से, सर्वोच्च न्यायालय[45] ने *संघीय और प्रांतीय सरकारों को* मानव तस्करी के खिलाफ कार्रवाई करने, पीड़ितों को बचाने और उनका पुनर्वास करने और अपराधियों पर मुकदमा चलाने का निर्देश दिया।

इसी प्रकार, सर्वोच्च न्यायालय[46] ने राज्य कानून के तहत बार में डांस पर प्रतिबंध को रद्द करने के मुंबई उच्च न्यायालय के फैसले को बरकरार रखते हुए बार डांसरों के हितों और जीविकोपार्जन के लिए उनकी नौकरी के अधिकार की रक्षा की।[47] बार डांसिंग बंद होने से बड़ी संख्या में बार डांसरों का रोजगार छिन गया और उनमें से कुछ को जीवित रहने के लिए वेश्यावृत्ति में जाने के लिए मजबूर होना पड़ा क्योंकि उनके पास जीवित रहने का कोई अन्य साधन नहीं था। सर्वोच्च न्यायालय ने कहा - "हमारी राय में ऐसे उपाय करना अधिक उचित होगा, जिससे बार डांसर के रूप में काम करने वाले व्यक्तियों की सुरक्षा सुनिश्चित हो सके तथा उनकी कार्य स्थितियों में सुधार हो सके।"

[35] पीपुल्स यूनियन फॉर डेमोक्रेटिक राइट्स बनाम भारत संघ, एआईआर 1982 एससी 1943।

[36] गौरव जैन बनाम भारत संघ, एआईआर 1997 एससी 3021।

[37] महाजन समिति।

[38] लक्ष्मीकांत पांडे बनाम भारत संघ, (1984) 2 एससीसी 244

[39] एआईआर 2002 एससी 2235

[40] साक्षी बनाम भारत संघ।

[41] चाइल्डलाइन इंडिया फाउंडेशन बनाम एलन जोहुत वालर्स , 2011 Cr.LJ 2305 (SC)

[42] एआईआर 1997 एससी 699

[43] तारा दास बनाम त्रिपुरा राज्य, गुवाहाटी उच्च न्यायालय, 2008; सहयोग महिला मंडल और अन्य बनाम गुजरात राज्य, (2004) 2 जीएलआर 1764

[44] अहीद मंडल बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, कलकत्ता उच्च न्यायालय, 2021

[45] प्रज्वला बनाम भारत संघ, रिट याचिका (सी) संख्या 56/2004

[46] महाराष्ट्र राज्य और अन्य बनाम इंडियन होटल और रेस्तरां एसोसिएशन अन्य , एआईआर 2013 एससी 2582

[47] यह भी देखें, अनुज गर्ग बनाम होटल एसोसिएशन ऑफ इंडिया , एआईआर 2008 एससी 663।

आगे बढ़ना

अमेरिकी रिपोर्ट में बताया गया है कि भारत सरकार और राज्यों द्वारा किए गए विभिन्न प्रयासों के बावजूद, मानव तस्करी से पर्याप्त रूप से निपटा नहीं जा सका है।[48] इस रिपोर्ट के प्रमुख निष्कर्ष हैं: 2021 में मानव तस्करी के मामलों में बरी होने की दर 84% थी, फरवरी 2022 में, गृह मंत्रालय ने बताया कि भारत के 732 जिलों में से 696 में AHTU हैं। इससे निपटने के लिए, NCW द्वारा उठाए गए कदमों सहित कई अन्य उपाय शुरू किए गए हैं।[49]

सुझाव

- मानव तस्करी पर लगाम लगाना समय की मांग है। दूसरे देशों के विदेशी पीड़ितों के हितों की रक्षा के लिए अंतर्राष्ट्रीय सहयोग और पारस्परिक कानूनी सहायता संधियों का उपयोग जरूरी है।
- स्रोत, पारगमन और गंतव्य बिंदुओं पर जांच की जानी चाहिए। जांच अधिकारियों को खरीददारों, भर्ती करने वालों, समर्थकों, परिवहनकर्ताओं और पीड़ितों के शोषकों और यहां तक कि अपराधियों के परिवार के सदस्यों की भूमिका को भी चिह्नित करना चाहिए। जांचकर्ताओं को मानव तस्करी के स्रोत से आवश्यक जानकारी एकत्र करनी चाहिए ताकि पीड़ित की भर्ती या नौकरी के लिए जिम्मेदार स्थानीय गिरोह के सदस्यों का पता लगाया जा सके। इसी तरह, गंतव्य स्थानों में गहन जांच से समूहों की पहचान, शोषण की प्रकृति, शोषण के स्थान, गिरोह के सदस्यों की संपत्ति और परिसंपत्तियों का पता लगाने में मदद मिलती है। मनी लॉन्ड्रिंग में समानांतर वित्तीय जांच भी सक्रिय रूप से की जानी चाहिए।
- सूचना साझा करना, अंतर-एजेंसी समन्वय, खुफिया जानकारी साझा करना, मानव तस्करों और शोषकों का डेटाबेस बनाए रखना, खुफिया जानकारी एकत्र करने के लिए गैर सरकारी संगठनों को शामिल करना इस गुप्त अपराध में उपयोगी होगा। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि एक मामले में बचाव अन्य अपराधों के लिए खुफिया जानकारी प्रदान कर सकता है।
- पुनः उत्पीड़न को रोकने के लिए पुलिस अधिकारियों द्वारा कई स्तरों पर बार-बार साक्षात्कार से बचना चाहिए।
- जांच अधिकारी को आरोपी व्यक्ति को आसानी से जमानत मिलने से रोकने के लिए कानून की गंभीर धाराओं को शामिल करना चाहिए। पुलिस अधिकारी को मानव तस्करों को कड़ी सजा सुनिश्चित करने के लिए इस शोध पत्र में चर्चा किए गए अनैतिक व्यापार (रोकथाम) अधिनियम और अन्य प्रासंगिक कानूनों के तहत मामले दर्ज करने चाहिए। इसके अलावा, समय पर बचाव अभियान भी महत्वपूर्ण है।
- गैर सरकारी संगठनों की भूमिका को रेखांकित किया जाना चाहिए और उन्हें पुलिस स्टेशनों तक पहुंच और सहायता की अनुमति दी जानी चाहिए। पीड़ितों और आरोपी व्यक्तियों को अलग-अलग रखा जाना चाहिए। रजिस्टर, टिकट, होटल विवरण, ग्राहक विवरण, मेडिकल रिकॉर्ड आदि सहित साक्ष्यों को वैज्ञानिक तरीके से इकट्ठा करने की तत्काल आवश्यकता है।
- प्रवासी तस्करी को रोकने के लिए अप्रवासन कानूनों को भी मजबूत किया जाना चाहिए।
- अंत में, हम कह सकते हैं कि बचाव, पुनर्वास, पुनः एकीकरण, प्रत्यावर्तन द्वारा इस समस्या का समाधान किया जा सकता है।

[48] अमेरिकी विदेश विभाग की रिपोर्ट, 2023 "मानव तस्करी रिपोर्ट: भारत"।

[49] अप्रैल 2022 में, राष्ट्रीय महिला आयोग ने बांग्लादेशी और श्रीलंकाई नागरिकों से जुड़े मामलों सहित सीमा पार तस्करी के मामलों में कानून प्रवर्तन एजेंसियों और मानव तस्करी विरोधी इकाइयों, एनआईए की क्षमता निर्माण द्वारा तस्करी विरोधी प्रतिक्रियाओं में सुधार के लिए एक इकाई की शुरुआत की।

आपराधिक न्याय में परिवर्तन- अंतर्राष्ट्रीय निहितार्थ

- डॉ. स्वप्निल बंगाली[1]

सार

किसी भी देश में आपराधिक न्याय प्रणाली की सफलता और असफलता काफी हद तक अन्वेषण तकनीकों के सर्वोत्तम संभव तरीकों के अनुकूलन और न्यायिक अधिकारियों द्वारा साहसपूर्वक आधुनिक साक्ष्यों की सराहना और स्वीकार्यता पर निर्भर करती है। आधुनिक समाज तकनीकी प्रगति और वैज्ञानिक तथा फोरेंसिक साक्ष्य के नए रूपों से प्रेरित है। किसी एक देश के कानून में बदलाव अंतरराष्ट्रीय कानून में बदलाव का आधार है। एक देश के कानून अन्य देशों के लिए प्रवृत्ति निर्धारक (trend setters) बन सकते हैं तथा अंतर्राष्ट्रीय कानून में बहुत मजबूत अंतर्राष्ट्रीय स्वीकृति और निहितार्थ विकसित कर सकते हैं। यह लेख भारत में नए कानूनों के आलोक में आपराधिक न्याय प्रणाली में आधुनिक वैज्ञानिक और फोरेंसिक साक्ष्य की झलक दिखाने का एक छोटा सा प्रयास है।

मुख्य शब्द : आपराधिक न्याय प्रणाली, वैज्ञानिक और फोरेंसिक साक्ष्य, अंतर्राष्ट्रीय निहितार्थ, दंड प्रक्रिया (शनाख्त) अधिनियम, 2022, भारतीय न्याय संहिता, भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, भारतीय साक्ष्य अधिनियम 2023।

परिचय

पिछले दशक में भारतीय राजनीति और अर्थव्यवस्था का मुख्य पहलू विकास रहा है। विकास के इस दौर का शासन और कानून-व्यवस्था जैसे महत्वपूर्ण क्षेत्रों पर निरंतर प्रभाव पड़ता है। सबसे अच्छा और संभावित प्रभाव इस बात पर है कि पिछले दशक से पहले कानूनों को किस तरह देखा और लागू किया गया था और आने वाले समय में उनमें किस तरह बदलाव किया जाएगा। इसका सबसे अच्छा उदाहरण भारत में आपराधिक कानूनों में संशोधन है। नवनिर्मित और शीघ्र कार्यान्वित होने वाले भारतीय न्याय संहिता 2023, भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता 2023, और भारतीय साक्ष्य अधिनियम 2023, में उस तरह से परिवर्तन देखने को मिलेगा जैसा राष्ट्र चाहता है। 1 जुलाई, 2024 को लागू किए गए इन कानूनों से पीड़ित-केंद्रित प्रक्रियाओं के लिए आसान और स्पष्ट अधिदेश,

[1] निदेशक, सीआईसीटीएल, महाराष्ट्र राष्ट्रीय विधि विश्वविद्यालय, मुंबई

प्रौद्योगिकी के उपयोग के संदर्भ में एक बड़ा परिवर्तन देखने को मिलेगा, न केवल जांच एजेंसियों की क्षमता में सुधार होगा, बल्कि अदालतों और समग्र कानूनी प्रणाली के दिन-प्रतिदिन के कामकाज में वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग और अन्य सूचना संचार आधारित प्रणालियों के कार्यान्वयन से अदालती कार्यवाही में आने वाली रुकावटों को भी दूर किया जा सकेगा।

देश के राष्ट्रीय कानून के क्रियान्वयन के तरीके में समग्र अंतर हमेशा अंतरराष्ट्रीय कानून और क्रियान्वयन में कुछ न कुछ अंतर लाता है। आपराधिक न्याय प्रणाली में सबसे छोटे से छोटा बदलाव हमेशा अंतरराष्ट्रीय कानून पर दीर्घकालिक प्रभाव डालता है।

कुछ मुख्य परिवर्तन

कुछ प्रमुख परिवर्तनकारी मामलों, आपराधिक न्याय प्रणाली में परिवर्तन के माध्यम से अंतर्राष्ट्रीय निहितार्थों को दुनिया भर के सर्वोच्च न्यायालयों के कानूनों और निर्णयों के उदाहरणों से देखा जा सकता है। अपराधियों की पहचान के उद्देश्य से कानून के माध्यम से भारत में मूलभूत परिवर्तन लाए गए हैं। अपराधियों की पहचान के उद्देश्य से कानून बनाकर भारत में मौलिक परिवर्तन लाया गया है। भारत में दंड प्रक्रिया (शनाख्त) अधिनियम, 2022 को अपराधियों की पहचान को सरल बनाने के उद्देश्य से पारित किया गया है, विशेष रूप से उन मामलों में जहां अपराधी आदतन अपराध करने में शामिल रहे हैं। डीएनए और अन्य नमूनों के संग्रह की पद्धति को लागू करके और भविष्य के मामलों और परीक्षणों के लिए साक्ष्य के रूप में इसे रिकॉर्ड करके, बाद के मामलों में अपराध की पहचान साबित करने के लिए जांच एजेंसियों के समय और प्रयासों को कम करने का प्रयास किया गया है। डीएनए जैसे फोरेंसिक साक्ष्य को मान्यता देने और ऐसे साक्ष्य की सराहना करने की इसी तरह की प्रवृत्ति यूरोप के कई देशों में देखी जाती है। संयुक्त राज्य अमेरिका में डीएनए और अन्य फोरेंसिक साक्ष्यों का संग्रहण और मूल्यांकन बड़े पैमाने पर किया जाता है। अमेरिका में मैरीलैंड बनाम किंग[2] के मामले में, सुप्रीम कोर्ट ने मैरीलैंड राज्य के गिरफ्तार व्यक्तियों के डेटाबेस की संवैधानिकता को इस आधार पर बरकरार रखा कि राज्य गिरफ्तार व्यक्तियों से पहचान के उद्देश्य से डीएनए देने की उचित मांग कर सकते हैं, ठीक उसी तरह जैसे उन्हें फिंगरप्रिंट देने के लिए मजबूर किया जाता है। हालांकि, अमेरिकी संविधान में चौथा संशोधन अमेरिकी न्यायालयों में विवाद का आधार बन रहा है। चौथा संशोधन संभावित रूप से आपराधिक मामलों में अदालत में डीएनए साक्ष्य को चुनौती दे रहा है। अमेरिकी संविधान में चौथा संशोधन व्यक्तियों को 'अकारण तलाशी और जब्ती' से बचाता है। इसमें कोई संदेह नहीं कि न्यायिक व्याख्याएं कानून की स्थापना करेंगी, लेकिन अमेरिका की अधिकांश अदालतें और विभिन्न राज्य अदालतें चौथे संशोधन के प्रभाव को समाप्त नहीं कर रही हैं। अमेरिका में विभिन्न निर्णयों के माध्यम से और तुलनात्मक रूप से भारत में दंड प्रक्रिया (शनाख्त) अधिनियम, 2022 के विकास को देखना वास्तव में दिलचस्प होगा।

इसके अलावा, जांच के तरीके भी बदल गए हैं। तकनीकी और फोरेंसिक साक्ष्य पर निर्भरता बढ़ गई है और अदालतों के साथ-साथ नए कानूनों के विभिन्न प्रावधानों और सर्वोच्च न्यायालयों के निर्णयों के माध्यम से अदालती प्रक्रियाओं के तहत भी इसकी अनुमति है। अन्वेषण तकनीक में परिवर्तन की आवश्यकता है, क्योंकि अपराधी अपराध करने के तरीकों में बदलाव कर रहे हैं, तथा वे आधुनिक सूचना संचार प्रौद्योगिकी और उपकरणों का उपयोग अपराध करते समय एक उपकरण और अपराध करने के लक्ष्य के रूप में कर रहे हैं। जांच एजेंसियों को तदनुसार जांच तकनीक में बदलाव करना होगा और अदालत में साक्ष्य प्रस्तुत करने होंगे, जिससे मामले की सच्चाई अदालत के सामने आ सके।

हाल के दिनों में फोरेंसिक जांच में बड़ा बदलाव देखने को मिला है। डीएनए, रक्त के नमूने, लार, अन्य शारीरिक तरल पदार्थ और अर्क के रूप में वैज्ञानिक साक्ष्य उपयोगी साक्ष्य हो सकते हैं। जांच एजेंसियों को वैज्ञानिक साक्ष्यों के संग्रहण, अभिलेखीकरण और संरक्षण के साथ-साथ उन्हें अदालत के समक्ष प्रस्तुत करने में शामिल वैज्ञानिक तकनीकों से अच्छी तरह परिचित होना होगा। सूचना संचार प्रौद्योगिकी के आधुनिक तरीके साइबर अपराधों के संबंध में बहुत बड़ी चुनौती पेश करते हैं और डिजिटल उपकरणों और नेटवर्क की

[2] 569 यू.एस. 435 (2013)

जांच सर्वोच्च स्तर पर बढ़ गई है। जांच एजेंसियों से अपेक्षा की जाती है कि वे प्रौद्योगिकी के साथ तालमेल बनाए रखें, क्योंकि आधुनिक समय में तकनीकी जांच में सफलता पाने का यही एकमात्र तरीका है।

जांच एजेंसियों के लिए क्षमता निर्माण अभ्यास के अलावा, मौजूदा कानूनों में परिवर्तन का प्रस्ताव करके और स्थापित कानूनों में प्रावधानों को सामने लाकर एक समान अनुकूल कानूनी माहौल बनाया जाना चाहिए, जिससे देश के साथ-साथ पूरे विश्व में कानूनी प्रक्रियाओं में वैज्ञानिक और फोरेंसिक अनुकूलन को शामिल किया जा सके।

दंड प्रक्रिया (शनाख्त) अधिनियम, 2022

दंड प्रक्रिया (शनाख्त) अधिनियम, 2022 एक हाल ही में पारित एक कानून है जिसकी प्रशंसा और आलोचना दोनों हुई है। यह अधिनियम कानून प्रवर्तन एजेंसियों को विभिन्न प्रकार के व्यक्तियों से कुछ पहचान योग्य जानकारी एकत्र करने का अधिकार देता है, जिनमें दोषी, किसी अपराध के लिए गिरफ्तार व्यक्ति तथा किसी निवारक निरोध कानून के तहत हिरासत में लिए गए व्यक्ति शामिल हैं। एकत्रित की जाने वाली जानकारी में उंगलियों के निशान, फोटोग्राफ, आईरिस और रेटिना स्कैन, जैविक नमूने और व्यवहार संबंधी विशेषताएं शामिल हैं।

यह अधिनियम भारत में अपराधों की बढ़ती संख्या को देखते हुए पारित किया गया था। सरकार का मानना है कि इस अधिनियम से कानून प्रवर्तन एजेंसियों को अपराधियों की पहचान करने और उन्हें पकड़ने में आसानी होगी। हालांकि, कुछ लोगों ने इस कानून की आलोचना करते हुए कहा है कि यह निजता का हनन है। इस कानून के वास्तविक रूप से लागू होने से पहले इसकी सफलता और असफलता का अनुमान लगाना जल्दबाजी होगी।

दंड प्रक्रिया (शनाख्त) अधिनियम, 2022 ने भारत में आपराधिक न्याय प्रणाली में परिवर्तन का बीज बोया है और यह दुनिया भर में तकनीकी प्रगति के अनुरूप है। इस कानून के प्रावधानों के आलोक में आदतन अपराधियों से निपटने में भारत के साथ-साथ विदेशों में भी बड़ा बदलाव आएगा।

फोरेंसिक साक्ष्य

आपराधिक न्याय प्रणाली अन्वेषण के दौरान साक्ष्य के रूप में एकत्रित की गई सामग्री पर बहुत अधिक निर्भर करती है। चूंकि कानून की अपेक्षा किसी भी संदेह से परे मामले को साबित करना है, इसलिए यह अन्वेषण एजेंसियों के कंधों पर भारी बोझ डालता है। फोरेंसिक साक्ष्य इस बोझ को थोड़ा कम करने की पूरी कोशिश करते हैं। फोरेंसिक साक्ष्य स्थापित करने के लिए उचित और आधुनिक उपकरणों के साथ वैज्ञानिक और फोरेंसिक जांच के मामले में दुनिया भर में बड़ा बदलाव देखा जा रहा है।

प्रासंगिक तथ्य को स्वीकार्य तथ्य में परिवर्तित करने का कठिन कार्य साक्ष्य कानून के सटीक ज्ञान, कठोर जांच और जिरह में पूर्ण बुद्धिमता से आसान बनाया जा सकता है। परंतु हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि मामले का नतीजा इस बात पर निर्भर करता है कि अदालत के सामने क्या साक्ष्य प्रस्तुत किया जाता है। यहीं पर फोरेंसिक साइंस मुख्य भूमिका निभाती है।

राजकुमारी डायना की आकस्मिक मृत्यु पर विचार करें, तो कोई भी सामान्य व्यक्ति यह निष्कर्ष निकालेगा कि एक ब्रिटिश शाही नागरिक की फ्रांस में कार दुर्घटना में मृत्यु हो गई। ब्रिटेन की एक शाही नागरिक अपने मिस्र के प्रेमी के साथ एक जर्मन कार में फ्रांसीसी सुरंग में दुर्घटनाग्रस्त हो गई, जिसमें डच इंजन था, जिसे एक बेल्जियम का ड्राइवर चला रहा था, ड्राइवर ने स्कॉच (स्कॉटिश) व्हिस्की पी थी, उसका पीछा एक जापानी मोटरसाइकिल पर सवार इतालवी पत्रकार कर रहे थे, जिससे दुर्घटना हुई और अंत में एक अमेरिकी डॉक्टर ने ब्राजील की दवा से उसका इलाज किया । लेडी डायना की आकस्मिक मृत्यु के वर्णन में एक क्लासिक अंतरराष्ट्रीय फोरेंसिक तस्वीर केवल एक वकील और एक फोरेंसिक वैज्ञानिक ही देख सकते हैं। एक साधारण व्यक्ति के लिए, यह केवल एक आकस्मिक मृत्यु है। तथ्यों को जानने और फोरेंसिक रूप से तथ्यों को जानने के बीच यही अंतर है।

यदि जांच दल फोरेंसिक को हल्के में लेता है, तो साक्ष्य उनके साथ निर्दयता से पेश आते हैं। उदाहरण के लिए, आरुषि तलवार और हेमराज हत्याकांड में यदि बारिश नहीं होती, जिससे महत्वपूर्ण फोरेंसिक साक्ष्य बह गए और जांच टीम अधिक सक्रिय होती तथा समय पर फोरेंसिक टीम को बुलाया जाता, तो निश्चित रूप से परिणाम कुछ और होता। जांच और तथ्यों के फोरेंसिक विश्लेषण में विफलता किसी भी आपराधिक मामले के परिणाम को विफल कर देती है।

गवाहों के अस्थिर और अधूरे बयानों और वर्णनों के कारण किसी भी तकनीकी साक्ष्य का अभाव तथा कुछ मामलों में गवाहों की अनुपस्थिति के कारण जांच दल के लिए फोरेंसिक विज्ञान पर अत्यधिक निर्भर रहना आवश्यक हो जाता है। पहचान और जांच के लिए विभिन्न वैज्ञानिक तकनीकों का विकास अधिकांश मामलों में अंतिम निष्कर्ष तक पहुंचने में सक्षम है। ये फोरेंसिक तकनीकें धीरे-धीरे भारतीय कानूनी प्रणाली में विकसित हुईं।

फोरेंसिक साक्ष्य का उपयोग

क. मानव शरीर की पहचान

कभी-कभी, हत्या जैसे गंभीर अपराधों में ऐसा हो सकता है कि मृतक को अमानवीय और अकल्पनीय यातना का सामना करना पड़ता है और अभियुक्त द्वारा साक्ष्य नष्ट करने के प्रयास के परिणामस्वरूप मृतक की पहचान नहीं हो पाती है। ऐसी स्थितियों में, मृतक के शरीर की पहचान करना मुश्किल हो जाता है या फिर शव का कोई निशान ही नहीं होता। ऐसे मामलों में, खून के धब्बे, डीएनए विश्लेषण, फिंगरप्रिंट के मामले में जैविक विश्लेषण सबूत स्थापित करने या यहां तक कि पीड़ित की पहचान करने में जांचकर्ताओं की मदद करते हैं।

इसका एक उदाहरण तंदूर हत्याकांड का है।

i) तंदूर (नैना साहनी) मर्डर केस[3]

देश को झकझोर देने वाले कुछ सनसनीखेज हत्याकांड भी फोरेंसिक साक्ष्यों के उचित इस्तेमाल की वजह से सुलझ पाए। ऐसा ही एक शुरुआती मामला नैना साहनी हत्याकांड था जिसे तंदूर हत्याकांड के नाम से भी जाना जाता है। इस मामले में, सुशील शर्मा ने अपनी पत्नी नैना साहनी को तीन गोलियां मारकर हत्या कर दी, क्योंकि उसे संदेह था कि उसकी पत्नी का मतलूब करीम नामक एक व्यक्ति के साथ विवाहेतर संबंध था, जो नैना साहनी का सहपाठी और सुशील शर्मा का साथी कांग्रेस कार्यकर्ता था। हत्या के बाद सुशील शर्मा मृतका के शव को अपने घर से बगिया रेस्टोरेंट ले गया और फिर रेस्टोरेंट मालिक केशव कुमार की मदद से होटल के तंदूर में शव को जलाने का प्रयास किया।

पुलिस ने तंदूर से जली हुई लाश और आरोपी के खून से सने कपड़े और रिवॉल्वर बरामद की। जांच टीम ने खून से सने कपड़े और रिवॉल्वर को लोधी रोड फोरेंसिक प्रयोगशाला में भेजा और बाद में, जांच टीम ने मृतक नैना साहनी के माता-पिता हरभजन सिंह और जसवंत कौर के रक्त के नमूने भी एकत्र किए और इसे डीएनए परीक्षण के लिए हैदराबाद फोरेंसिक प्रयोगशाला में भेज दिया।

प्रयोगशाला रिपोर्ट के अनुसार यह साबित हो गया कि जला हुआ शव हरभजन सिंह और जसवंत कौर की संतान का था, जो निश्चित रूप से मृतक नैना साहनी का ही था। सभी फोरेंसिक साक्ष्यों के मिलान के बाद अदालत ने तंदूर हत्याकांड में सुशील शर्मा को दोषी पाया।

ii) बम विस्फोट मामलों और विघटित शव-

बम धमाकों और आतंकी हमलों में सबसे बड़ी चुनौती मृतक के शव की पहचान करना होती है। ऐसे मामलों में डीएनए प्रोफाइलिंग और रक्त के नमूनों से मृतक की पहचान करने में मदद मिलती है। वर्ष 2006 ,1993 और 2011 में मुंबई में हुए सिलसिलेवार बम विस्फोटों में बड़ी संख्या में नागरिक हताहत हुए थे और पीड़ितों के शरीर के अंग उस क्षेत्र में बिखरे पड़े थे जहां बम विस्फोट हुए थे, जिससे जांच दल के लिए विस्फोटों में मारे गए लोगों की संख्या का पता लगाना मुश्किल हो गया था। मारे गए लोगों की संख्या का पता लगाने के लिए मृतकों की पहचान हेतु रक्त के नमूने और अन्य फोरेंसिक साक्ष्य एकत्र किए गए।

यहाँ तक कि तमिलनाडु के श्रीपेरंबदूर में हुई पूर्व प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी की हत्या में भी बम विस्फोट की तीव्रता इतनी अधिक थी कि विस्फोट में मरने वाले लोगों की सही संख्या का पता लगाने और पूर्व

[3] सुशील शर्मा बनाम दिल्ली प्रशासन, 1996 CriLJ 3944

प्रधानमंत्री की पहचान करने में कई घंटे लग गए। मुंबई विस्फोटों और राजीव गांधी हत्या मामले में पीड़ितों की पहचान करने में फोरेंसिक साक्ष्यों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी।

शीना बोरा हत्याकांड की ताजा घटना में, जिसमें आरोपी मृतका के माता-पिता और एक टीवी चैनल के मालिक इंद्राणी और पीटर मुखर्जी थे, मृतका का शव महाराष्ट्र के कोंकण क्षेत्र में पश्चिमी घाट के जंगलों में सड़ी-गली अवस्था में पाया गया। मृतका के शव की पहचान डीएनए परीक्षण के माध्यम से की गई।

ख. पितृत्व विवाद

कोविड-19 के बाद पितृत्व विवादों से जुड़े तलाक के मामलों में काफी वृद्धि हुई है। बच्चों के पितृत्व से जुड़े प्रमुख पारिवारिक विवादों को केवल डीएनए प्रोफाइलिंग और अन्य चिकित्सकीय और वैज्ञानिक रूप से सिद्ध परीक्षणों के माध्यम से ही सुलझाया जा सकता है। ये परीक्षण दुनिया भर में साक्ष्य का प्रमुख स्रोत बन रहे हैं। दुनिया भर के कई देशों में बच्चे के पितृत्व को स्थापित करने के लिए इस तरह के पितृत्व परीक्षण और डीएनए प्रोफाइलिंग को कानूनी मान्यता प्राप्त है।

रोहित शेखर बनाम नारायण दत्त तिवारी मामले में,[4] दिल्ली उच्च न्यायालय ने प्रतिवादी के खिलाफ डीएनए परीक्षण के माध्यम से पितृत्व साबित करने के निर्देश जारी किए। दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा नारायण दत्त तिवारी के खिलाफ पितृत्व निर्धारण के लिए डीएनए परीक्षण कराने का आदेश पारित करने के बाद, उन्होंने सर्वोच्च न्यायालय में अपील दायर कर दावा किया कि यदि उन्हें पितृत्व निर्धारण के लिए डीएनए परीक्षण कराने के लिए बाध्य किया गया तो यह सार्वजनिक अपमान होगा। सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि इससे किसी भी प्रकार का सार्वजनिक अपमान नहीं होगा, क्योंकि डीएनए परीक्षण रिपोर्ट सीलबंद लिफाफे में उपलब्ध कराई जाएगी।[5]

ग. साइबर फोरेंसिक

कंप्यूटर धोखाधड़ी, जालसाजी, साइबर अपराध, डेबिट और क्रेडिट कार्ड धोखाधड़ी दिन-प्रतिदिन आम होती जा रही है। ऐसे मामलों की जांच सूचना प्रौद्योगिकी और कंप्यूटर सॉफ्टवेयर के क्षेत्र में विशेषज्ञता पर काफी हद तक निर्भर करती है। साइबर फोरेंसिक के क्षेत्र में जांचकर्ताओं और साइबर सेल तथा कंप्यूटर आपातकालीन प्रतिक्रिया टीम जैसी विशिष्ट एजेंसियों की भूमिका तेजी से बढ़ रही है। कंप्यूटर नेटवर्क के द्वारा दुनिया करीब आ गई है, लेकिन साथ ही इसने हमारी मानवता को भी चुनौती दी है। समकालीन अपराधियों का मुख्य लाभ यह है कि उन्हें अपराध को तेजी से अंजाम देने के साथ-साथ सबूतों को सटीक और साफ-सुथरा तरीके से नष्ट करने की तकनीक का ज्ञान है। आजकल दुनिया की हर चीज पर साइबर खतरा मंडरा रहा है। स्मार्ट गजट का उपयोग न हटाने वाली हथकड़ी के रूप में जर्मनी जैसे देश में देखा जाता है,, जहां दोषियों को सामुदायिक सेवा के लिए ले जाया जाता है या उनके दैनिक कर्तव्यों के रूप में पर्यावरण और सार्वजनिक स्थानों की सफाई की जाती है, जो आपराधिक न्याय प्रणाली में प्रौद्योगिकी के उपयोग का सबसे अच्छा उदाहरण है। हथकड़ी के साथ इस तरह की इलेक्ट्रॉनिक रूप से कॉम्पैक्ट जीपीएस ट्रैकिंग न केवल जेल परिसर के भीतर अपराधियों पर नज़र रखने में उपयोगी है, बल्कि तब भी जब वे अपने सामुदायिक सेवा कर्तव्यों पर होते हैं।

हमारे स्मार्ट फोन और सोशल नेटवर्किंग निजता के उल्लंघन और व्यक्तिगत अपराधों की अपार संभावना बढ़ा रहा है। भारत और दुनिया भर में गुमशुदा व्यक्तियों को खोजने के लिए मोबाइल ट्रैकर्स का

[4] एआईआर 2012 Del. 151

[5] नारायण दत्त तिवारी बनाम रोहित शेखर, (2012) 12 एससीसी 554 (सुप्रीम कोर्ट में अपील)

इस्तेमाल काफी आम है। कई आपराधिक मामलों में मोबाइल डिवाइस की ट्रैकिंग से कई निर्णायक और पुख्ता सबूत मिलते हैं। जांच एजेंसियों द्वारा अपराधियों और आतंकवादियों के ठिकानों का पता लगाने के लिए आईपी एड्रेस और मैक आईडी को ट्रैक करने जैसी तकनीकों का उपयोग किया जाता है। जैसा कि कई लोगों ने दावा किया है कि भविष्य का युद्ध साइबर युद्ध होगा, इसलिए डिजिटल फोरेंसिक भारत और विदेशों में भविष्य के राष्ट्रीय सुरक्षा मुद्दों के लिए महत्वपूर्ण है।

भारत में स्टिंग ऑपरेशन को पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज बनाम भारत संघ के मामले में[6] भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के कारण वैध माना गया है, जिसने टेलीग्राफ अधिनियम, 1885 की धारा 5 की संवैधानिक वैधता को बरकरार रखा है, जो जांच और राष्ट्रीय सुरक्षा के प्रयोजनों के लिए दूरसंचार उपकरणों की निगरानी और अवरोधन के साथ-साथ निगरानी की अनुमति देता है। दुनिया भर के कई देशों में स्टिंग ऑपरेशन की वैधता के मामले में भी यही स्थिति है। कई देशों में स्टिंग ऑपरेशन से प्राप्त साक्ष्य वास्तविकता है। यदि स्वीकार्य नहीं है, तो भी इसे अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रासंगिक साक्ष्य के रूप में स्वीकार किया जाता है।

घ. बैलिस्टिक साक्ष्य

हथियारों का इस्तेमाल और उसका सबूत आपराधिक मुकदमे में सबसे तथ्यात्मक सबूत होता है। कभी-कभी अपराध में हथियारों का इस्तेमाल और उन्हें छिपाना भी शामिल होता है। ऐसी परिस्थितियों में हथियारों के इस्तेमाल को बैलिस्टिक विशेषज्ञ की गवाही के रूप में विशेषज्ञ साक्ष्य की मदद से साबित करना पड़ता है।

हाल ही में गौरी लंकेश हत्या मामले में फोरेंसिक विशेषज्ञों ने पत्रकार गौरी लंकेश और कन्नड़ लेखक एम.एम. कलबुर्गी की हत्या में गोलियों और एक ही बंदूक के इस्तेमाल की समानता स्थापित की है। हाल के दिनों में बैलिस्टिक विज्ञान ने इतनी प्रगति कर ली है कि विशिष्ट हथियारों के उपयोग से लेकर विशिष्ट हथियारों से गोली चलाने के समय तक को आपराधिक मुकदमे में फोरेंसिक रूप से साबित किया जा सकता है।

दिल्ली में 1999 के बहुचर्चित जेसिका लाल हत्याकांड में आरोपी मनु शर्मा को बरी कर दिया गया क्योंकि इस बात का कोई निर्णायक सबूत नहीं था कि गोली उसके रिवॉल्वर से चली थी। इसके बाद दिल्ली उच्च न्यायालय के निर्देश पर बैलिस्टिक विशेषज्ञ प्रेम सागर मनोचा के खिलाफ झूठी गवाही देने का मामला दर्ज किया गया। मनु शर्मा[7] की मदद करने के लिए उनके खिलाफ निर्णायक सबूतों के अभाव में बैलिस्टिक विशेषज्ञ को सर्वोच्च न्यायालय ने बरी कर दिया।

बैलिस्टिक साक्ष्य के मानक दुनिया भर में लगभग समान हैं। भारत में फिलहाल लाइसेंस के साथ व्यक्तिगत इस्तेमाल के लिए विदेशी हथियारों के आयात पूरी तरह प्रतिबंधित है। बंदूक बेचने वाले या तो पुरानी और सेकेंड हैंड विदेशी बंदूकें इस्तेमाल कर रहे हैं या फिर वे भारत में ही बनाई और बेची जा रही हैं। बैलिस्टिक साक्ष्य की स्वीकार्यता अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अच्छी तरह से स्थापित है और दुनिया भर में किसी भी कानूनी प्रणाली में बैलिस्टिक साक्ष्य की स्वीकार्यता के बारे में कोई प्रतिकूल राय नहीं है।

III. फोरेंसिक साक्ष्य की वैधता

फोरेंसिक जांच की वैधता और व्यक्तियों को दिए गए अधिकारों के सवालों पर आधारित है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 3)20) किसी व्यक्ति को निष्पक्ष सुनवाई की गारंटी देता है, जिसमें कहा गया है कि किसी भी व्यक्ति को आत्म-दोषी बयान देने के लिए मजबूर नहीं किया जाएगा। लेकिन बॉम्बे राज्य बनाम काठी कालू ओघड़ में,[8] सुप्रीम कोर्ट ने माना कि

[6] एआईआर 1997 एससी 568

[7] एआईआर 2016 एससी 290

[8] एआईआर 1961 एससी 1808

अभियुक्त द्वारा अंगूठे का निशान, नमूना हस्ताक्षर, रक्त का नमूना, बाल या वीर्य देना भारतीय संविधान के अनुच्छेद 3) 20) के तहत 'गवाह होने' के बराबर नहीं है।

सेल्वी और अन्य बनाम कर्नाटक राज्य मामले में,[9] सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि नार्को-विश्लेषण, पॉलीग्राफ परीक्षण और ब्रेन इलेक्ट्रिकल एक्टिवेशन प्रोफाइल का अनिवार्य अनैच्छिक प्रशासन भारत के संविधान के अनुच्छेद 3)20) के तहत आत्म-दोष के खिलाफ अधिकार का उल्लंघन करता है क्योंकि परीक्षण के दौरान व्यक्ति प्रतिक्रियाओं पर सचेत नियंत्रण नहीं रखता है। अनुच्छेद 3)20) न केवल एक परीक्षण अधिकार है, बल्कि इसकी सुरक्षा जांच के चरण तक फैली हुई है। दुनिया भर के कई देशों में आपराधिक न्याय प्रणाली की स्थिति ऐसी ही है।

माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह भी माना है कि भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1872 की धारा 27 (भारतीय साक्ष्य अधिनियम 2023 की धारा 23 के तहत) के प्रावधान, जो इकबालिया बयानों की स्वीकार्यता प्रदान करते हैं, संविधान के अनुच्छेद 3)20) के निषेध के अंतर्गत नहीं आते हैं, जब तक कि सूचना प्राप्त करने में दबाव का उपयोग नहीं किया गया हो और कोई भी सूचना या सामग्री जो बाद में स्वैच्छिक प्रशासित परीक्षण के परिणामों की सहायता से खोजी गई हो, उसे स्वीकार नहीं किया जाएगा।

हाल ही में, के.ए. पुट्टस्वामी बनाम भारत संघ मामले में,[10] सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि निजता का अधिकार भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 के अर्थ में एक मौलिक अधिकार है। लेकिन निजता के अधिकार को मौलिक अधिकार मानते हुए, सर्वोच्च न्यायालय ने सावधानीपूर्वक इस बात पर जोर दिया कि वर्तमान में लागू कानून के किसी भी प्रावधान के तहत कोई भी जांच निजता को प्रभावित नहीं करेगी।

यह बहुत सावधानी से और जांच की पवित्रता को ध्यान में रखते हुए किया जाता है। अन्यथा, आरोपी अपने फायदे के लिए जांच प्रक्रिया का पालन न करने का पूरा फायदा उठाएगा और अपने खिलाफ तकनीकी सबूतों को अस्वीकार कर देगा।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 को 2005 में संशोधित किया गया था, ताकि अभियुक्तों की गिरफ्तारी तक उनसे विभिन्न प्रकार की चिकित्सा जानकारी एकत्रित की जा सके। वर्ष 2005 से, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 53 (भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 की धारा 183 के अंतर्गत) में यह प्रावधान है कि यदि यह मानने के उचित आधार हैं कि ऐसी जांच से अपराध के संबंध में साक्ष्य मिलेंगे, तो अभियुक्तों की गिरफ्तारी के बाद चिकित्सा जांच की जा सकती है और ऐसी चिकित्सा जांच में रक्त, रक्त के धब्बे, वीर्य, यौन अपराधों के मामले में स्वाब, थूक और पसीना, बाल के नमूने और आकृति के नाखूनों की कतरनें शामिल हो सकती हैं, जिसके लिए डीएनए प्रोफाइलिंग सहित आधुनिक वैज्ञानिक तकनीकों का उपयोग किया जा सकता है और ऐसे अन्य परीक्षण किए जा सकते हैं, जिन्हें पंजीकृत चिकित्सक विशेष मामले में आवश्यक समझता है।

हालाँकि, यह संशोधन दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 53 (भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 के खंड 183 के अंतर्गत) के तहत केवल भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 376 (भारतीय न्याय संहिता, 2023 की धारा 63 के अंतर्गत) के अंतर्गत बलात्कार के अपराध पर लागू होता है। यह प्रावधान और संशोधन शिकायत मामलों पर लागू नहीं है तथा यह शिकायतकर्ता को किसी अन्य तरीके से सक्षम नहीं बनाता है।

यह दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 164 ए (भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 की धारा 184 के अंतर्गत) में बलात्कार की कथित पीड़िता महिला की 24 घंटे के भीतर चिकित्सा जांच का प्रावधान है और ऐसी जांच में महिला की डीएनए प्रोफाइलिंग भी शामिल है। अब व्यावहारिक रूप से कठिन प्रश्न यह है कि बलात्कार के 24 घंटे के भीतर कितने मामलों की जांच की जाती है? और कितने चिकित्सक डीएनए एकत्र करने में सक्षम हैं? और ऐसे मामलों में डीएनए प्रोफाइलिंग

[9] एआईआर 2010 एससी 1974

[10] एआईआर 2017 एससी 4161

की सुविधा के लिए हमारे पास कितनी प्रयोगशालाएँ, केंद्र या अस्पताल हैं?

भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 45 (भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 की धारा 39 के अंतर्गत) विशेषज्ञों की राय का प्रावधान करती है। उक्त प्रावधान न्यायालय को किसी विशेष मामले में राय के लिए फोरेंसिक विज्ञान सहित किसी विशिष्ट विज्ञान के किसी विशेषज्ञ को बुलाने की शक्ति देता है। यह न्यायालय को उन मामलों में पर्याप्त सहायता प्रदान कर रहा है, जहां न्यायालय या न्यायाधीश स्वयं किसी विज्ञान या फोरेंसिक विज्ञान के विशेषज्ञ नहीं हैं। उक्त प्रावधान में यह परिकल्पना की गई है कि विशेषज्ञ की राय न्यायालय पर बाध्यकारी नहीं है क्योंकि किसी भी विज्ञान का "विशेषज्ञ" उस विज्ञान का विशेषज्ञ होता है लेकिन न्यायाधीश मामले के तथ्यों का विशेषज्ञ होता है।

लेकिन सबसे बड़ी चुनौती यह है कि विशेषज्ञ के साक्ष्य न्यायालय के लिए बाध्यकारी नहीं होते। विशेषज्ञ की राय को अन्य गवाहों और प्रत्यक्ष साक्ष्य की पुष्टि की कसौटी पर खरा उतरना होता है। भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 45 (भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 की धारा 39 के अंतर्गत) इसे कमजोर साक्ष्य बनाती है और इसलिए अदालतें अपने समक्ष लाए गए अन्य साक्ष्यों और तथ्यों के प्रकाश में विशेषज्ञों की राय लेती हैं।

महाराष्ट्र राज्य बनाम दामू गोपीनाथ शिंदे के मामले में,[11] सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि न्यायालय में गवाह के रूप में विशेषज्ञ की जांच किए बिना, केवल राय पर भरोसा नहीं किया जा सकता है। डेटा या आधार का उल्लेख किए बिना केवल दावा करना सबूत नहीं है, भले ही वह किसी विशेषज्ञ की ओर से आया हो।

भारत के विपरीत, संयुक्त राज्य अमेरिका और यूरोप के कई देशों सहित कई अन्य देशों में कानून में अंतर है। न केवल जांच में बल्कि न्यायिक प्रक्रिया में भी वैज्ञानिक और फोरेंसिक साक्ष्य की अधिक स्वीकृति और अनुकूलन है। उन देशों में जांच और ट्रायल के लिए 100 % विज्ञान की शब्दावली आधार है। इसका मतलब है कि जांच एजेंसी और न्यायिक अधिकारियों द्वारा जांच और ट्रायल में अच्छी तरह से स्थापित वैज्ञानिक और फोरेंसिक साक्ष्य को अधिक प्राथमिकता दी जाती है। भारत और पश्चिमी देशों में यह एक मुख्य अंतर है। दंड प्रक्रिया (शनाख्त) अधिनियम, 2022 को अधिनियमित करके तथा भारतीय न्याय संहिता, 2023, भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 और भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 के रूप में नए कानून बनाकर इस अंतर को यथासंभव समाप्त करने का प्रयास किया गया है।

नए आपराधिक कानूनों के माध्यम से परिवर्तन

नए आपराधिक कानून एक ऐसे बदलाव के रूप में सामने आए हैं, जिससे जांच के तरीके, खास तौर पर तलाशी और जब्ती तथा विशिष्ट अपराधों में प्रक्रिया में काफी अंतर आ सकता है। उदाहरण के लिए, भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 की धारा 53 के तहत अतिरिक्त चिकित्सा जांच का प्रावधान किया गया है। यह उन जघन्य अपराधों के लिए पर्याप्त होगा जहां जांच एजेंसियां केवल प्रारंभिक चिकित्सा जांच पर निर्भर नहीं रह सकतीं, क्योंकि अभियुक्त का अपराध साबित करने के लिए विशिष्ट प्रकार की चिकित्सा जांच की आवश्यकता हो सकती है। इससे पहले जांच एजेंसियों के लिए कोर्ट की अनुमति ही एकमात्र सहारा थी। इसी तरह भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 की धारा 105 के तहत तलाशी और जब्ती प्रक्रिया की वीडियोग्राफी, जिसमें आइटम सूची तैयार करना और गवाहों के हस्ताक्षर शामिल हैं, अनिवार्य कर दिया गया है। तलाशी और जब्ती की प्रक्रिया से जुड़ी चुनौतियों और उसमें गड़बड़ी को तलाशी और जब्ती प्रक्रिया के डिजिटल रिकॉर्ड की मदद से संबोधित किया जा सकता है। भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 की धारा 176(3) के तहत एक अन्य महत्वपूर्ण प्रावधान ने जांच और साक्ष्य संग्रह में बदलाव किया है। उक्त प्रावधान के तहत फोरेंसिक विशेषज्ञों को 7 साल या उससे अधिक की सजा वाले अपराधों के लिए अपराध स्थल पर जाना अनिवार्य है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि इन बदलावों से जांच एजेंसियों और राज्य पर बुनियादी ढांचा उपलब्ध कराने का बोझ बढ़ेगा, लेकिन फोरेंसिक विज्ञान के क्षेत्र में विकास और आपराधिक कानूनों में संशोधन के कारण कानूनी प्रक्रिया को देखते हुए, आपराधिक न्याय प्रणाली में बदलाव संभव लगता है।

[11] एआईआर 2000 एससी 1691

वर्तमान में, भारत बदलाव के चरण में है और सभी हितधारक नए कानूनों की सफलता और प्रभाव के संबंध में अवलोकन के चरण में हैं, जिससे एक बड़ा बदलाव आ सकता है जिसमें नए कानूनों के प्रकाश में भारत में आपराधिक न्याय प्रणाली काम करेगी।

निष्कर्ष

ये बदलाव निश्चित रूप से भारत और विदेशों में आपराधिक कानून के समग्र कार्यान्वयन में बड़े प्रभाव लाएंगे। फोरेंसिक तकनीकों को अपनाना और अभियुक्तों के खिलाफ मामला साबित करने के लिए जांच की जरूरतों के अनुरूप कानूनी प्रावधान बनाना समय की मांग है। किसी भी देश या यहां तक कि पूरे विश्व में आपराधिक न्याय में परिवर्तन तब तक होता रहेगा और यह एक सतत विषय-वस्तु बनी रहेगी, जब तक कि प्रौद्योगिकी के उपयोग और तौर-तरीकों में निरंतर परिवर्तन नहीं होता। भारतीय न्याय संहिता, 2023, भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 और भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 के प्रावधानों के आलोक में, एक राष्ट्र के रूप में भारत ने आपराधिक न्याय प्रणाली को बदलने में उल्लेखनीय प्रगति की है, जो प्रकृति में अधिक पीड़ित केंद्रित है, साथ ही ऐसे प्रावधानों और प्रक्रियाओं को लागू करना है जो वास्तविक व्यावहारिक दुनिया में वैज्ञानिक और फोरेंसिक तकनीकों को शामिल किया जा रहा हैं।

नए कानूनों में पीड़ित केंद्रित दृष्टिकोण

डॉ. आस्था तिवारी[1]

सार

परंपरागत रूप से, आपराधिक न्याय संरचना का झुकाव अभियुक्तों की ओर रहा है। यह वाक्यांश है कि "एक निर्दोष व्यक्ति को दोषी ठहराने से दस दोषी व्यक्तियों को मुक्त करना बेहतर है" इसी प्रवृत्ति को दर्शाता है। आरोपी का अपराध "उचित संदेह से परे" साबित करने का सख्त मानक भी आरोपी के पक्ष में है। हालाँकि, भारत की सर्वोच्च न्यायालय के हालिया फैसलों ने आपराधिक कार्यवाही में पीड़ितों की महत्वपूर्ण भूमिका को मान्यता दी है, जिससे उन्हें जांच से लेकर अपील तक व्यापक अधिकार प्रदान किए गए हैं। यह मान्यता हाल के आपराधिक कानूनों जैसे कि भारतीय न्याय संहिता, भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता और भारतीय साक्ष्य अधिनियम 2023 में अभिव्यक्त है, जहां "न्याय" शब्द में आरोपी, पीड़ित और गवाह समान रूप से शामिल हैं। न्यायालयों ने पीड़ितों के अधिकारों के संघर्ष को रेखांकित किया है, यह समझते हुए कि एक वैध शिकायत को दरकिनार नहीं किया जा सकता है, पीड़ितों को अब सक्रिय रूप से कानूनी प्रक्रियाओं में शामिल होने का अधिकार है। विक्टिमोलॉजी से वास्तविक पीड़ित न्याय की ओर यह बदलाव अत्यावश्यक है। आपराधिक कानूनों में हालिया बदलाव इस बदलाव को दर्शाते हैं, जिसमें पीड़ित की भागीदारी, सूचना तक पहुंच और सहायक अधिकारों पर जोर दिया गया है। यह आलेख अतीत से वर्तमान तक पीड़ित न्याय के विकास की आलोचनात्मक जांच करता है तथा भविष्य में इसके आगे बढ़ने के रास्ते का अनुमान लगाता है।

मुख्य शब्द : पीड़ित, आपराधिक कानून, बीएनएस, बीएनएसएस, बीएसए, न्याय, पीड़ित-केंद्रित

परिचय

अपराध सिर्फ़ एक व्यक्ति के खिलाफ़ नहीं, बल्कि पूरे समाज के खिलाफ़ अपराध है। यह शासन ही है जो अभियुक्त पर मुकदमा चलाने और न्याय पाने के लिए समुदाय के सामूहिक हितों का प्रतिनिधित्व करने का दायित्व लेता है। हालाँकि, कानूनी कार्यवाही के दौरान, पीड़ित अक्सर खुद को एक मूक दर्शक की भूमिका में पाता है, जो अभियोजन पक्ष और अभियुक्त के बीच प्रतिकूल लड़ाई से प्रभावित होता है। पूर्व अमेरिकी राष्ट्रपति रोनाल्ड रीगन ने इस असमानता पर मार्मिक ढंग से प्रकाश डाला जब उन्होंने टिप्पणी की, "बहुत लंबे समय

[1] पीएचडी स्कॉलर, महाराष्ट्र राष्ट्रीय विधि विश्वविद्यालय, मुंबई

से, अपराध के पीड़ित लोग हमारी आपराधिक न्याय प्रणाली के भूले हुए व्यक्ति रहे हैं।" दरअसल, पीड़ित अक्सर खुद को कानूनी प्रक्रिया में हाशिए पर पाते हैं, उनकी आवाज अदालत की औपचारिकताओं और प्रक्रियाओं के कारण दब जाती है। इस संदर्भ में, पीड़ित-केंद्रित कानूनों की अवधारणा आशा की किरण के रूप में उभरती है, जिनका उद्देश्य असंतुलन को सुधारना है और यह सुनिश्चित करना है कि पीड़ितों को वह ध्यान, समर्थन और मान्यता मिले जिसके वे हकदार हैं। ये कानून मानते हैं कि पीड़ित केवल मूक दर्शक नहीं हैं बल्कि ऐसे व्यक्ति हैं जिनके जीवन पर अपराध के कारण गहरा प्रभाव पड़ा है। यह कानून पीड़ित के दर्द और दुर्दशा को स्वीकारते हैं और पीड़ितों को न्याय प्रदान करने की प्रणाली में शामिल करने का प्रयास करते हैं। पीड़ितों की ज़रूरतों और अधिकारों को केंद्रित करके, इन कानूनों का लक्ष्य उन लोगों में सम्मान, प्रतिनिधित्व और सशक्तिकरण की भावना बहाल करना है जिन्हें नुकसान पहुँचाया गया है। वे स्वीकार करते हैं कि जब तक पीड़ितों की आवाज़ और दृष्टिकोण को नहीं सुना जाएगा और उनका सम्मान नहीं किया जाएगा तब तक न्याय पूरी तरह से नहीं मिल सकता है। पीड़ित केंद्रित दृष्टिकोण अधिक जागरूक और समावेशी वातावरण बनाता है। यह अपराध से प्रभावित लोगों के लिए समझ और समर्थन को बढ़ावा देने की आवश्यकता को पहचानता है। संक्षेप में, पीड़ित-केंद्रित कानून इस मानदंड को साकार करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम का प्रतिनिधित्व करते हैं कि न्याय न केवल किया जाना चाहिए, बल्कि इसमें शामिल सभी पक्षों के लिए भी न्याय किया जाना चाहिए। वे पीड़ितों के अधिकारों और सम्मान को बनाए रखने और एक ऐसी न्याय प्रणाली बनाने की प्रतिबद्धता का प्रतीक हैं जो वास्तव में निष्पक्ष, समावेशी और दयालु हो।

इन नए आपराधिक कानूनों को पुनः परिभाषित करने से दोहरा उद्देश्य पूरा होगा - पुराने औपनिवेशिक युग के कानून को आधुनिक बनाना और आरोपियों, पीड़ितों और गवाहों सहित सभी नागरिकों के अधिकारों की सुरक्षा के लिए तंत्र स्थापित करना। भारतीय नागरिक सुरक्षा सहिंता के रूप में नए आपराधिक प्रक्रिया संहिता का नामकरण इसके मुख्य उद्देश्य को रेखांकित करता है, जो पीड़ितों के लिए प्रक्रियात्मक अधिकारों को रेखांकित करने से कहीं आगे तक फैला हुआ है। बल्कि, इसका मूल उद्देश्य राष्ट्र के भीतर प्रत्येक व्यक्ति के लिए न्याय सुनिश्चित करना है। यह संभव नहीं होता यदि "वीएस मलिमथ समिति (2003)" और "भारत के विधि आयोग की 268वीं रिपोर्ट (2017)" जैसी विभिन्न एजेंसियों की सिफारिशें नहीं होतीं। प्रक्रिया संहिता को ये रिपोर्टें जमानत की कार्यवाही में भाग लेने के पीड़ित के अधिकार को बढ़ाती हैं और ऐसे मामलों में 'पीड़ित प्रभाव आकलन' पर एक रिपोर्ट की सिफारिश करती हैं। यह जरूरी है कि अपराध और उसके बाद के जमानत फैसलों के सामाजिक, मानसिक और शारीरिक प्रभाव सहित पीड़ितों की चिंताओं पर उचित चिंतन किया जाए। ऐतिहासिक रूप से, पीड़ितों को आपराधिक मुकदमों में हाशिए पर धकेल दिया गया है, उनके हितों को अक्सर नजरअंदाज कर दिया जाता है और उनकी सुरक्षा केवल भारतीय अदालत प्रणाली के भीतर बोझ वाले सरकारी अभियोजकों पर निर्भर करती है, जो लंबित मामलों की लंबित सूची से ग्रस्त हैं।

पीड़ित न्याय की ऐतिहासिक प्रासंगिकता

पीड़ितों के संरक्षण का विचार पहली बार 1970 के दशक में अमेरिका में आया था, जब पीड़ितों के अधिकार आंदोलन की लहर अपने चरम पर थी। यह देखा गया कि पीड़ितों पर अपराध के मनोवैज्ञानिक प्रभाव को अनदेखा करना, साथ ही उनकी ज़रूरतों की अनदेखी करना, उनकी दुर्दशा के प्रमुख कारणों के रूप में पहचाना गया है।[2] यह वॉरेन कोर्ट क्रांति थी जिसने एक ऐसी प्रणाली स्थापित की जो हमेशा अभियुक्तों के पक्ष में थी , जिसने अंततः अपराध पीड़ितों के अधिकारों में असंतुलन को बढ़ाया।[3] परिणामस्वरूप, अपराध पीड़ितों पर राष्ट्रपति की टास्क फोर्स का गठन किया गया, और एक रिपोर्ट तैयार की गई। रिपोर्ट के अनुसार, न्यायालय प्रणाली में संतुलन की कमी थी क्योंकि पीड़ितों को उनकी रक्षा के लिए बनाए गए संस्थान द्वारा प्रताड़ित किया जाता था। रिपोर्ट के अनुसार, इस उत्पीड़न को हर कीमत पर संबोधित किया जाना चाहिए।[4] इस मुद्दे को संबोधित करने के लिए पीड़ितों की गरिमा और गोपनीयता सुनिश्चित करने और प्रणाली में निष्पक्षता सुनिश्चित

[2] माइक मैगुयर, ''The Needs and Rights of Victims of Crime' (1991) अपराध और न्याय 363-433.

[3] पॉल जी. कैसल, नैथनेल जे. मिशेल और ब्रैडली जे. एडवर्ड्स, 'आपराधिक जांच के दौरान अपराध पीड़ितों के अधिकार? आपराधिक आरोप दायर होने से पहले अपराध पीड़ितों के अधिकार अधिनियम को लागू करना' (1973) 104 जर्नल ऑफ क्रिमिनल लॉ एंड क्रिमिनोलॉजी 63.

[4] अंतिम रिपोर्ट, अपराध पीड़ितों पर President's Task Force, 1982.1

करने के उद्देश्य से अमेरिका में पीड़ित अधिकार अधिनियम नामक एक कानून पारित किया गया था, जहां पीड़ित केवल मूक दर्शक न होकर भागीदार भी हो सकते हैं।[5] पीड़ितों के अधिकार की अवधारणा समय के साथ अपनी पूरी गहराई और आयाम में विकसित हुई है। भारत में, पीड़ित न्यायशास्त्र का ऐतिहासिक विकास "राजा कोई गलत कार्य नहीं कर सकता" के प्राचीन सिद्धांत से महत्वपूर्ण रूप से विकसित होकर, सम्राट को पूर्ण उन्मुक्ति प्रदान करने वाले सिद्धांत से, भारतीय संविधान के अनुच्छेद 300 में सन्निहित अधिक पीड़ित-केंद्रित दृष्टिकोण में परिवर्तित हो गया। यह विकास उस युग से बदलाव को दर्शाता है जब पीड़ितों के पास राज्य के खिलाफ सीमित सहारा था, और अब यह आधुनिक कानूनी ढांचे की ओर अग्रसर है जो न्याय और जवाबदेही के सिद्धांतों को कायम रखता है। अनुच्छेद 300 सरकार के कर्मचारियों द्वारा किए गए गलत कार्यों के लिए निजी व्यक्ति के समान ही सरकार की जिम्मेदारी स्थापित करता है, इस प्रकार पीड़ितों के अधिकारों की सुरक्षा सुनिश्चित होती है। भारतीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए ऐतिहासिक निर्णयों, जैसे कि रुदल शाह बनाम बिहार राज्य [6], नीलाबती बेहरा बनाम उड़ीसा राज्य [7], तथा डी.के. बसु बनाम पश्चिम बंगाल राज्य[8], ने पीड़ित न्यायशास्त्र के विकास को और मजबूत किया है। इन निर्णयों ने गलत तरीके से हिरासत में लिए जाने, हिरासत में हिंसा और अन्य हिंसा के पीड़ितों को मुआवजा देने की राज्य की जिम्मेदारी को रेखांकित किया है, जिससे भारतीय कानूनी प्रणाली में पीड़ितों के अधिकारों और उपायों का दायरा उत्तरोत्तर बढ़ रहा है। अमेरिका में यह सवाल कि क्या आधिकारिक आरोप दायर किए जाने से पहले भी पीड़ितों के पास अधिकार हैं, इस पर भी अमेरिकी न्यायालय ने *डूस बनाम यूनाइटेड स्टेट्स*[9] *मामले में सकारात्मक निर्णय लिया था,* जिसमें न्यायालय ने अपराध पीड़ित अधिकार अधिनियम के उद्देश्य और प्रयोजन को दोहराया और कहा कि *"पीड़ितों को आपराधिक प्रक्रिया में होने वाले घटनाक्रमों के बारे में अद्यतन रखा जाना चाहिए और यह औपचारिक आरोप दायर करने के साथ ही नहीं बल्कि आपराधिक जांच के दौरान भी शुरू होना चाहिए।*

पीड़ित-उन्मुख से न्याय-उन्मुख दृष्टिकोण में बदलाव

कुछ वर्षों में, पीड़ित-उन्मुख दृष्टिकोण से न्याय-उन्मुख दृष्टिकोण में भारी बदलाव आया है क्योंकि पीड़ित विज्ञान एक अलग अनुशासन के रूप में विकसित हुआ है। प्रारंभ में, ध्यान व्यक्तिगत अपराधी और व्यक्तिगत पीड़ित पर अधिक था - पीड़ित और आरोपी के बीच बातचीत, पीड़ित के सामने आने वाली चुनौतियाँ, आदि। हालाँकि, बाद में ध्यान पीड़ित होने और पीड़ित होने के कारणों को समझने और महसूस करने से हटकर पीड़ित विज्ञान के अधिक ठोस अर्थ पर केंद्रित हो गया, जिसमें कानूनी मान्यता, न्याय तक पहुंच, पीड़ित तक पहुंच, सेवाओं, सहायता और मुआवजे पर जोर दिया गया है। भारत में पीड़ितों को न्याय दिलाने के बारे में जागरूकता वर्ष 2009 में ही आई जब 2009 के संशोधन अधिनियम के तहत सीआरपीसी, 1973 में धारा 2(डब्ल्यूए) को शामिल किया गया। इस अधिनियम के माध्यम से, पीड़ितों को तीन मूल अधिकार दिए गए - जिसमें एक निजी वकील को नियुक्त करने का (सीमित भागीदारी अधिकारों के साथ)[10]; धारा 357ए, सीआरपीसी के तहत मुआवजा पाने का अधिकार और बरी करने, कम अपराध के लिए दोषी ठहराए जाने और मुआवजे की अपर्याप्तता के फैसले के खिलाफ अपील दायर करने का अधिकार। इन विकासों के अलावा, POCSO और SC/ST (अत्याचार निवारण) अधिनियम जैसे कानून विशिष्ट अपराधों के पीड़ितों को अधिक सूक्ष्म अधिकार प्रदान करते हैं। नए आपराधिक कानूनों का उद्देश्य भारत में न्याय वितरण प्रणाली की दक्षता, निष्पक्षता, विश्वसनीयता और जवाबदेही को बढ़ाना

[5] अपराध पीड़ितों के अधिकार अधिनियम, 2004.

[6] 1983 एआईआर 1086

[7] 1993 एआईआर 1960

[8] 1997 (1) एससीसी 416

[9] डूज़ बनाम यूनाइटेड स्टेट्स, 817 एफ. Supp. 2d 1337 (एस,डी, फ्लै. 2011)।

[10] दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 301 और 302 के माध्यम से सीमित।

है - आपराधिक मुकदमे में सबसे महत्वपूर्ण हितधारक को भाग लेने, सूचित होने और हुए नुकसान के लिए मुआवजा पाने का अधिकार प्रदान करके उन्हें उचित महत्व देना है। "पीड़ित" की नई परिभाषा बीएनएसएस 2023 की धारा 2(1)(y) के तहत दी गई है, जो पीड़ित को एक 'व्यक्ति' के रूप में परिभाषित करती है (इसे अधिक लिंग तटस्थ बनाती है) जिसे कार्य/चूक के कारण कोई नुकसान/चोट हुई हो। आरोपी व्यक्ति का और इसमें ऐसे पीड़ित का अभिभावक या कानूनी उत्तराधिकारी भी शामिल है। यह एक बहुत व्यापक परिभाषा है जिसमें पीड़ित के अभिभावक या कानूनी उत्तराधिकारी भी शामिल हैं। ऐसा करने से, पीड़ित का अधिकार क्षेत्र कमजोर हो गया है और इसलिए ऐसे मामले जहां संज्ञान केवल "पीड़ित व्यक्ति" की निजी शिकायत पर लिया जाता है, अब उस व्यक्ति के अलावा अभिभावक या कानूनी उत्तराधिकारी द्वारा भी दायर किया जा सकता है, जिसके खिलाफ अपराध हुआ है प्रत्यक्ष रूप से प्रतिबद्ध किया गया है। सीआरपीसी की धारा 2(डब्ल्यूए) के तहत मौजूद शब्द "जिसके लिए आरोपी व्यक्ति पर आरोप लगाया गया है" को नई परिभाषा से हटा दिया गया है; अब पीड़ित को तब भी मुआवजा मिल सकता है जब आरोपी पर औपचारिक रूप से अपराध का आरोप नहीं लगाया गया हो। इस प्रकार, ऐसे अपराध में जहां पीड़ित ज्ञात है, लेकिन आरोपी ज्ञात नहीं है, तब भी पीड़ित को मुआवजा प्रदान किया जा सकता है। न्यायिक दृष्टि से भी, यह परिवर्तन पीड़ित को मामले में आरोपी को शामिल करने का दर्द और बोझ सहन किए बिना न्यायपालिका का दरवाजा खटखटाने का अधिकार देता है। नए आपराधिक कानूनों में पीड़ित केंद्रित दृष्टिकोण को तीन आयामों से देखा गया है - "सहभागिता अधिकार", "सूचना का अधिकार", "मुआवजे का अधिकार"।

सहभागिता अधिकार

भारत जैसी प्रतिकूल आपराधिक न्याय प्रणाली में, अभियुक्त और अभियोजन पक्ष आपराधिक प्रक्रिया में मुख्य भूमिका निभाते हैं, जिसमें न्यायाधीश एक निर्णायक के रूप में कार्य करता है। पीड़ित को केवल साक्ष्य के स्तर पर अभियोजन पक्ष के गवाह के रूप में उपस्थित होना आवश्यक है। हालाँकि, जैसा कि ऊपर बताया गया है, सीआरपीसी में किए गए कुछ संशोधनों और बीएनएसएस में कुछ प्रावधानों की शुरूआत के कारण, पीड़ित की भूमिका बहुत बड़ी है। सीआरपीसी की संशोधित धारा 321 के तहत, "पीड़ित अब बरी किए जाने के फैसले, कम अपराध के लिए सजा, या अपर्याप्त मुआवजे के खिलाफ अपील कर सकता है"। इस सह-भागिता अधिकार को सीआरपीसी की धारा 24 (8) में संशोधन करके मजबूत किया गया है, जो यह निर्धारित करता है कि अदालतें पीड़ितों को अभियोजन में सहायता के लिए वकील नियुक्त करने में सक्षम बना सकती हैं।

इसके अतिरिक्त, नए अधिनियम ने यौन उत्पीड़न के पीड़ितों को घर पर या अपनी पसंद के स्थान पर अपने माता-पिता/अभिभावक, रिश्तेदारों या सामाजिक-कार्यकर्ता के सामने एक महिला पुलिस अधिकारी द्वारा अपना बयान दर्ज कराने का अधिकार दिया गया है। अधिनियम में इस धारा में एक प्रावधान शामिल किया गया है जिसमें कहा गया है कि, जहां तक संभव हो, एक महिला न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट को ऐसे अपराधों के लिए बंद कमरे में सुनवाई की अध्यक्षता करनी चाहिए, भले ही सीआरपीसी ने पहले एक के लिए अनुमति दी हो। पीड़ित की गोपनीयता की सुरक्षा के लिए, पक्षों के नाम और पते की गुमनामी बनाए रखने के अधीन, अदालत द्वारा आदेशित परीक्षण प्रक्रियाओं के प्रकाशन की अनुमति है। मुआवजे के माध्यम से न्याय प्रदान करने के संबंध में, सीआरपीसी की धारा 357 अदालत को यह आदेश देने का अधिकार देती है कि आरोपी दोषी पाए जाने के बाद पीड़ित के खर्च का भुगतान करे। सीआरपीसी की धारा 357ए के तहत राज्य सरकारों को पीड़ित मुआवजा कार्यक्रम स्थापित करने की आवश्यकता है। डीएलएसए या राज्य एलएसए के पास मुआवजे की राशि निर्धारित करने और मुफ्त चिकित्सा देखभाल, प्राथमिक चिकित्सा सुविधाएं, या किसी अन्य अस्थायी उपाय को अनिवार्य करने का अधिकार है।

यह ध्यान देने योग्य है कि बीएनएसएस, 2023 की धारा 360 में वर्तमान में कहा गया है कि कोई भी अदालत पीड़ित को उस मामले में सुनवाई का अवसर प्रदान किए बिना अभियोजन से वापसी स्वीकार नहीं करेगी। यह पीड़ित न्याय न्यायशास्त्र में एक महत्वपूर्ण प्रगति है। इसके अलावा, जांच के लिए ऑडियो-विज़ुअल प्रौद्योगिकी विधियों का उपयोग नए आपराधिक कोड में जोडा गया है जो एक महत्वपूर्ण कदम है, जो पीड़ित-केंद्रित दृष्टिकोण पर जोर देता है। बीएनएसएस की धारा 176 संज्ञेय अपराधों की जांच की विधि का वर्णन करती है (सीआरपीसी की धारा 157 के बराबर)। इस प्रावधान के अनुसार, पीड़ित का बयान मोबाइल फोन जैसे ऑडियो-वीडियो तकनीकी

उपकरणों का उपयोग करके दर्ज किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, गवाहों के बयान बीएनएसएस की धारा 265(3) के तहत दर्ज किए जा सकते हैं। यह दृष्टिकोण जांच में पीड़ित की भागीदारी को सुविधाजनक बनाता है, जिससे प्रक्रिया अधिक सुलभ और कम डराने वाली हो जाती है।

सूचना का अधिकार

संबंधित प्राधिकारियों से सूचना मांगने के पीड़ितों के अधिकार को नए कानून के तहत कई तरीकों से विस्तारित किया गया है। जहां एक ओर, बीएनएसएस की धारा 173 पीड़ितों को एफआईआर की एक प्रति निःशुल्क प्राप्त करने का अधिकार देती है, जिससे यह सुनिश्चित होता है कि पीड़ित के पास पुलिस को दी गई रिपोर्ट का दस्तावेजी रिकॉर्ड है, वहीं बीएनएसएस की धारा 193 पुलिस अधिकारी को 90 दिनों के भीतर जांच की प्रगति के बारे में पीड़ित को सूचित करने का आदेश देती है। यह 90 दिन की अवधि न केवल पुलिस की ओर से होने वाली किसी भी देरी को खत्म करने में मदद करती है, बल्कि पीड़ित को यह आश्वासन भी दिलाती है कि आपराधिक न्याय प्रणाली उनके मामले के विभिन्न चरणों की सावधानीपूर्वक निगरानी कर रही है। यह जांच के दौरान पुलिस की गैर-जिम्मेदारी के कारण उत्पन्न होने वाली प्रक्रियागत गड़बड़ियों के विरुद्ध पीड़ित के सूचना के अधिकार की भी रक्षा करता है। एक प्रणाली के लिए "पीड़ित-केंद्रित" होना अनिवार्य है क्योंकि एफआईआर न केवल एक महत्वपूर्ण दस्तावेज और पुष्टि करने वाला सबूत है बल्कि जांच को गति देने का एक तरीका भी है। इन चरणों में पीड़ितों की भागीदारी, पीड़ितों के प्रति बीएनएसएस के झुकाव को दर्शाती है।

अधिकार क्षेत्र की परवाह किए बिना एफआईआर दर्ज करने का अधिकार और अन्य अधिकार

नए कानून में प्रावधान है कि एफआईआर किसी भी पुलिस स्टेशन में दर्ज की जा सकती है, चाहे अपराध किसी भी क्षेत्र में हुआ हो[11]। भारतीय न्यायशास्त्र में "ज़ीरो एफआईआर" की अवधारणा नई नहीं है। इसे अनेक निर्णयों में मान्यता दी गई है[12]। हालाँकि, नई बीएनएसएस की धारा 173 के तहत जीरो एफआईआर दर्ज करने के अधिकार को वैधानिक मान्यता देता है। यह उन पीड़ितों के लिए एक वरदान है, जिन्हें पहले अधिकार क्षेत्र के मुद्दे के कारण अपना मामला दर्ज कराने के लिए दर-दर भटकना पड़ता था।

पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो ने ऐसी एफआईआर के संबंध में मानक संचालन प्रक्रिया (SOPs) जारी की है। एसओपी का यह सेट प्रक्रिया की एक बुनियादी संरचना प्रदान करता है जिसका पालन पुलिस प्रवर्तन एजेंसियों द्वारा जांच को निर्बाध रूप से करने के लिए किया जा सकता है, जिसके अनुसार जब किसी विशेष पुलिस स्टेशन में पुलिस स्टेशन के अधिकार क्षेत्र से बाहर किए गए संज्ञेय अपराध के बारे में सूचना प्राप्त होती है, तो एसएचओ या ड्यूटी पर मौजूद अधिकारी को शिकायत का विवरण उस रजिस्टर में दर्ज करना होता है, जिसे बोलचाल की भाषा में जीरो एफआईआर रजिस्टर कहा जाता है क्योंकि एफआईआर नंबर के आगे "शून्य" लगा होता है। हालांकि, यह ध्यान देने वाली बात है कि बीएनएसएस में "जीरो एफआईआर" शब्द का उल्लेख नहीं है। बीएनएसएस की धारा 173 (1) (ii) इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से एफआईआर दर्ज करने का विकल्प भी प्रदान करती है। अपराध पंजीकरण में प्रौद्योगिकी को शामिल करने से पीड़ितों को शारीरिक रूप से पुलिस स्टेशन जाए बिना पुलिस तक पहुंचने में मदद मिलती है। इससे उन मामलों की रिपोर्टिंग को बढ़ावा मिलता है जो अन्यथा कुछ अपराधों से जुड़े कलंक के कारण रिपोर्ट नहीं किए जा सकते हैं। यह उन महिलाओं और बच्चों के लिए विशेष रूप से मददगार हो सकता है जो सामाजिक दबाव और कलंक के कारण अपने खिलाफ़ अपराधों की रिपोर्ट करने में झिझकते हैं। हालाँकि, एक शर्त है: ई-एफआईआर पर सूचना देने वाले को तीन दिनों के भीतर हस्ताक्षर करना होगा, जिसका अर्थ है कि एफआईआर केवल सूचना देने वाले के हस्ताक्षर के बाद ही दर्ज की जाएगी। हालांकि यह शिकायतकर्ता को दी गई स्वतंत्रता पर प्रतिबंध की तरह लग सकता है, लेकिन ऐसा नहीं है। यह अच्छी तरह से स्थापित कानून है कि संज्ञेय अपराध के मामले में, पुलिस के पास महत्वपूर्ण शक्तियां हैं। इसलिए, भले ही वादी एफआईआर पर हस्ताक्षर करने के लिए पुलिस

[11] एस. 173 (1), बीएनएसएस

[12] आंध्र प्रदेश राज्य बनाम पुनाती रामुलु 1994 Supp (1) एससीसी 590; कीर्ति वशिष्ठ बनाम राज्य 2019 एससीसी ऑनलाइन डेल 11713

स्टेशन आने में विफल हो, पुलिस को अचानक जांच रोकने की आवश्यकता नहीं है। अधिकारी या तो वादी के स्थान पर जाकर उनके हस्ताक्षर ले सकता है, या यदि वादी जांच में शामिल होने के लिए तैयार नहीं है, तो अधिकारी स्वयं वादी बनकर जांच जारी रख सकता है। यदि सूचना की प्रकृति और गंभीरता के कारण पुलिस को तत्काल कार्रवाई करने की आवश्यकता है, तो मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के सत्यापन के बाद जांच अधिकारी द्वारा वादी की ओर से मामला दर्ज किया जा सकता है। ऐसा कहने के बाद, यह प्रश्न कि क्या उस एफआईआर को साक्ष्य के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है या उस पर बीएनएसएस की धारा 181 (पूर्ववर्ती सीआरपीसी की धारा 162) लागू होगी, एक ऐसी चीज है जिस पर शायद किसी अन्य शोध में चर्चा और जांच की जा सकती है। ई-एफआईआर के संबंध में, पंजीकरण के बाद इसे प्रारंभिक सत्यापन के लिए जांच अधिकारी के पास भेज दिया जाता है और यदि कथित अपराध तीन वर्ष से अधिक परंतु 7 वर्ष से कम की सजा का है, तो पुलिस थाने का प्रभारी अधिकारी पुलिस उपाधीक्षक या उससे ऊपर के पद के अधिकारी की पूर्व अनुमति से प्रारंभिक जांच कर सकता है, ताकि यह पता लगाया जा सके कि प्रथम दृष्टया जांच का मामला बनता है या नहीं।[13] इसके अलावा, इतिहास गवाह है कि मुआवजे के लिए विभिन्न तंत्र मौजूद होने के बावजूद, पीड़ितों को हमेशा अपर्याप्त मुआवजा दिया गया है। विभिन्न राज्य मुआवजा योजनाओं और कई प्रगतिशील घोषणाओं के माध्यम से न्यायपालिका से समर्थन के बावजूद, वे अभी भी उसी स्थिति में हैं जैसे वे एक दशक पहले थे।[14] एक अन्य पीड़ित-केंद्रित दृष्टिकोण यह है कि बीएनएस की धारा 65 में प्रावधान है कि पीड़ित के चिकित्सा व्यय और पुनर्वास के लिए जुर्माना पीड़ित को दिया जाना चाहिए। नये कानून में यौन अपराध करने पर कठोर सजा का प्रावधान बरकरार रखा गया है।

पीड़ित को न्याय दिलाने हेतु न्यायिक प्रवृत्ति

आपराधिक मुकदमे में पीड़ितों के अधिकारों को सुनिश्चित करने में अदालतों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। *मारू राम मामले*[15] में, न्यायालय ने कहा, "जबकि सुधारात्मक सिद्धांत पीड़ितों के सुधार की वकालत करता है और सुझाव देता है कि यह किसी भी आपराधिक न्याय प्रणाली का अंत है, यह भी उतना ही जरूरी है कि पीड़ितों का पुनर्वास किया जाए और अपराधी द्वारा की गई यातना से राहत प्रदान की जाए"। केवल अपराधियों के पक्ष पर ध्यान केंद्रित करते हुए, निवारक वाक्यों को समाप्त करने के लिए बहस करते समय इस परिप्रेक्ष्य को अक्सर नजरअंदाज कर दिया जाता है। *मल्लिकार्जुन कोडगली मामले*[16] में भी इसी तरह का दृष्टिकोण अपनाया गया था, जिसमें अदालत ने कहा था कि "सर्वोच्च न्यायालय ने रेखांकित किया कि अभियुक्तों के अधिकारों को अक्सर पीड़ितों के अधिकारों पर प्राथमिकता दी जाती हैं। यह सुनिश्चित करने के लिए कि आपराधिक मुकदमे सुचारू और निष्पक्ष रूप से चलें, अभियुक्तों और पीड़ितों के अधिकारों के बीच संतुलन बनाया जाना चाहिए।

पीड़ितों के लिए एक कानूनी प्रतिनिधि के माध्यम से आपराधिक न्याय प्रणाली में भाग लेने की आवश्यकता को सुप्रीम कोर्ट ने 1995 में दिल्ली घरेलू कामकाजी महिला फोरम केस[17] के माध्यम से मान्यता दी थी, जिसमें "न्यायालय ने पीड़िता के वकील की भूमिका पर विस्तार से चर्चा की - जो न केवल कार्यवाही की प्रकृति को समझाने या मामले में उसे तैयार करने और सहायता करने तक सीमित है, बल्कि यह उसे मार्गदर्शन प्रदान करने तक भी विस्तारित है कि वह अन्य एजेंसियों से अलग प्रकार की सहायता कैसे प्राप्त कर सकती है, उदाहरण के लिए, परामर्श या चिकित्सा सहायता"।

[13] बीएनएसएस की धारा 173 (3)

[14] हरि सिंह बनाम सुखबीर सिंह (1988) 4 एससीसी 551; उत्कर्ष आनंद, '99% नाबालिग बलात्कार पीड़ितों को कोई मुआवजा नहीं: SC Fumes Over National Survey' (सीएनएन-न्यूज18, 15 नवंबर 2019)

[15] मारू राम बनाम भारत संघ, 1980 एआईआर 2147

[16] मल्लिकार्जुन कोडागली बनाम कर्नाटक राज्य, 2019 2 एससीसी 752

[17] दिल्ली घरेलू कामकाजी महिला मंच बनाम भारत संघ, 1995 1 एससीसी 14

जैसा कि जगजीत सिंह मामले में पहले कहा गया है कि, "जांच से अपील तक सभी चरणों में आपराधिक मुकदमे में भाग लेने के पीड़ित के पूर्ण अधिकार को स्वीकार किया गया था"। दिल्ली उच्च न्यायालय के एक अन्य प्रसिद्ध फैसले में, "अदालत ने यौन अपराधों में पीड़िता की पहचान को गोपनीय रखने के कानूनी आदेश के साथ उसके भागीदारी के अधिकार को जोड़ दिया, और अंततः यह माना कि उसकी सुनवाई के अधिकार के लिए उसे कार्यवाही में पक्षकार बनाने की आवश्यकता नहीं है।", क्योंकि इस तरह से पक्षकार बनाने से उसकी पहचान उजागर हो जाएगी"।[18] हालाँकि, इन मामलों में, यह माना जाता है कि पीड़ित हमेशा एक महिला होती है। इस विसंगति को नए आपराधिक कानून के तहत हल कर दिया गया है, जहां पीड़ित न केवल एक लिंग तटस्थ व्यक्ति है, बल्कि ऐसे व्यक्ति का अभिभावक या कानूनी उत्तराधिकारी भी है। इसके अलावा, इस मामले में अदालत ने सीआरपीसी की धारा 439 (1ए), के दायरे का विस्तार किया और इसकी व्याख्या करते हुए इसमें अग्रिम जमानत आवेदन, सजा के निलंबन आदि के समय पीड़ित की सुनवाई के अधिकार को शामिल किया। इसके अलावा, यह जरूरी है कि पीड़ित की उपस्थिति औपचारिक नहीं होनी चाहिए; और यह सुनिश्चित करने के लिए कि उनकी बात प्रभावी ढंग से सुनी जाए, अदालत आवश्यकता पड़ने पर पीड़ित को कानूनी सहायता प्रदान कर सकती है।[19] बीएनएसएस, 2023 से पहले, अभियोजक को अदालत की अनुमति से फैसले की घोषणा से पहले कभी भी मामला वापस लेने की अनुमति थी। हालाँकि, पीड़ितों को इस स्तर पर सुनवाई का अवसर नहीं दिया गया, एक ऐसी प्रथा जिसकी अदालतों ने विभिन्न अवसरों पर आलोचना की।[20] हालाँकि, अब बीएनएसएस 2023 के बाद, इस स्तर पर पीड़ित की भागीदारी को भी मान्यता दी गई है।

नए कानूनों के अंतर्गत पीड़ित-केंद्रित प्रावधान

उपर्युक्त पीड़ित-केंद्रित प्रावधानों के अलावा, ऐसे कई अन्य उदाहरण हैं जहाँ पीड़ितों को केंद्रीय भूमिका मिलती है। उदाहरण के लिए, बीएनएसएस की धारा 397 के तहत, सभी अस्पतालों, चाहे वे सार्वजनिक हों या निजी, को यौन अपराधों के पीड़ितों को मुफ्त में चिकित्सा उपचार प्रदान करना आवश्यक है। पीड़ितों की सुरक्षा को मूर्त रूप देने के लिए, गवाह सुरक्षा योजना के बारे में प्रावधानों का विशेष रूप से उल्लेख किया गया है। यह एक सामान्य तथ्य है कि भारत में गवाह सुरक्षा एक महत्वपूर्ण चिंता का विषय रहा है। गवाह अक्सर सच बताने से हिचकिचाते हैं क्योंकि उन्हें डर होता है कि ऐसा करने से उनकी जान जा सकती है। शक्तिशाली लोग उन्हें धमका सकते हैं और चुप रहने के लिए मजबूर कर सकते हैं। पहले कोई व्यापक गवाह सुरक्षा योजना नहीं थी। हालाँकि, नए कानून से पहले, प्रत्येक राज्य के लिए गवाह सुरक्षा योजना तैयार करना राज्य सरकार का कर्तव्य था। अब, इस कर्तव्य का स्पष्ट रूप से BNSS की धारा 398 के तहत उल्लेख किया गया है। पीड़ितों के लिए यह एक स्वागत योग्य कदम है, क्योंकि वे अक्सर मुख्य गवाह होते हैं। एक अन्य प्रावधान जो पहले से ही सीआरपीसी[21] में उपलब्ध था, उसे बीएनएसएस की धारा 399 के तहत फिर से लागू किया गया है, जिसके तहत बिना किसी आधार के गिरफ्तार किए गए व्यक्तियों को मुआवजा दिया जा सकता है। यह प्रावधान नागरिक केंद्रित है और पीड़ित केंद्रित और आरोपी केंद्रित दृष्टिकोण के बीच एक पुल का काम करता है।

पीड़ितों की सुरक्षा के लिए इन कानूनों की प्रवृत्ति कई अन्य प्रावधानों में भी दिखाई देती है। जांच और मुकदमे की कार्यवाही में विभिन्न स्तरों पर देरी की पहचान की गई है और दस्तावेजों की प्रतियां उपलब्ध कराने के लिए समय सीमा निर्धारित करके इसका समाधान किया गया है। ऐसे कई और प्रावधान हैं- जैसे कि बीएनएसएस की धारा 193, पीड़ित के 90 दिनों के भीतर जांच की प्रगति के बारे में जानने के अधिकार का प्रकटीकरण है। बीएनएसएस की धारा 474 के तहत दोषियों की समय से पहले रिहाई के बारे में भी सख्त प्रावधान किए गए हैं। इसके अलावा, बीएनएसएस की धारा 107 (6) अपराध की आय के वितरण का प्रावधान करती है, जिसके अनुसार यदि कुर्क या

[18] सलीम बनाम राज्य (एनसीटी दिल्ली) (2023) 2023 एससीसी ऑनलाइन डेल 2190

[19] वही

[20] केरल राज्य बनाम के. अजीत 2021 एससीसी ऑनलाइन एससी 510

[21] सीआरपीसी की धारा 358

जब्त की गई संपत्ति अपराध की आय है, तो अदालत अपराध की आय को पीड़ितों में वितरित करने का आदेश दे सकती है, जिससे यह सुनिश्चित हो सके कि अपराध के पीड़ितों को अवैध गतिविधियों की आय से मुआवजा मिले।

निष्कर्ष

आपराधिक कानूनों में हाल ही में किए गए बदलाव भारत में पीड़ित-केंद्रित कानून स्थापित करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। "पीड़ित" शब्द अपने आप में स्वाभाविक रूप से लिंग-तटस्थ है, जो देश के सभी नागरिकों के लिए इसकी प्रयोज्यता की पुष्टि करता है। ये नए पीड़ित-केंद्रित कानून न केवल पीड़ितों के अधिकारों और कल्याण को प्राथमिकता देते हैं, बल्कि प्रौद्योगिकी के एकीकरण के माध्यम से जांच प्रक्रियाओं को सुव्यवस्थित करते हैं, अंततः परीक्षणों में तेजी लाते हैं और पीड़ितों को त्वरित न्याय प्रदान करते हैं। "अनुपस्थिति में मुकदमा" जैसे प्रावधान कानूनी प्रक्रिया को और तेज करते हैं, जिससे पीड़ितों को अदालत में फरार अपराधियों के पेश होने के लिए लंबे समय तक इंतजार करने से मुक्ति मिलती है। पीड़ितों के लिए न्यायशास्त्र की दीर्घकालिक आकांक्षाओं की पूर्ति इस मजबूत वैधानिक ढांचे में ठोस अभिव्यक्ति पाती है। हालाँकि, इन सुधारों की वास्तविक प्रभावशीलता उनके प्रभावी क्रियान्वयन पर निर्भर करती है - एक ऐसा कार्य जिसके लिए व्यापक प्रशिक्षण पहल की आवश्यकता है। पीड़ितों पर केंद्रित कानूनों के बारे में लोगों में जागरूकता और समझ बढ़ाना उनके प्रभावी क्रियान्वयन के लिए आवश्यक है। इसमें कानून प्रवर्तन अधिकारियों, कानूनी पेशेवरों और आम जनता को इन कानूनों के तहत पीड़ितों को दिए गए अधिकारों और सुरक्षा के बारे में शिक्षित करना, साथ ही आपराधिक कार्यवाही में पीड़ित कल्याण को प्राथमिकता देने का महत्व बताना शामिल है। पहचान उजागर न करने और बंद कमरे में कार्यवाही जैसे महत्वपूर्ण प्रावधानों को बरकरार रखते हुए, नए कानून में जीरो एफआईआर की वैधानिक मान्यता और गवाह संरक्षण जैसे प्रमुख संवर्धन शामिल किए गए हैं, जिससे पीड़ितों के लिए व्यापक सुरक्षा सुनिश्चित होगी।

ये विधायी प्रगति भारतीय आपराधिक न्याय प्रणाली के लिए एक नया मानक स्थापित करने के लिए तैयार हैं। फिर भी, उनकी सफलता जांच एजेंसियों के बीच बढ़ी हुई जागरूकता और क्षमता निर्माण प्रयासों के साथ-साथ मानकीकृत प्रक्रियाओं के लगातार कार्यान्वयन पर निर्भर करती है। जांच और विरोधात्मक प्रणालियों के बीच संतुलन बनाते हुए, ये पीड़ित-केंद्रित कानून विधि निर्माताओं द्वारा प्रगतिशील दृष्टिकोण को रेखांकित करते हैं, जो अधिक न्यायसंगत और कुशल कानूनी ढांचे की ओर एक आदर्श बदलाव का संकेत देते हैं। उभरती चुनौतियों से निपटने तथा समय के साथ उनकी प्रासंगिकता और प्रभावशीलता सुनिश्चित करने के लिए पीड़ित-केंद्रित कानूनों का निरंतर मूल्यांकन और परिशोधन आवश्यक है।

बीएनएस 2023 में सामुदायिक सेवा: प्रतिशोध से पुनर्स्थापना की ओर एक आदर्श बदलाव।

श्री देवव्रत यादव*
सुश्री कोमल भारती**

सार

यह विश्लेषण सामुदायिक सेवा की अवधारणा का परीक्षण कर इसकी ऐतिहासिक जड़ों का पता लगाता है और आधुनिक न्याय प्रणाली में इसकी भूमिका का अन्वेषण करता है। इसमें तर्क दिया गया है कि सामुदायिक सेवा महज सजा से कहीं बढ़कर है, यह एक प्रकार की क्षतिपूर्ति है जो व्यक्तियों को सकारात्मक योगदान देने तथा पिछले अपराधों के लिए सुधार करने की अनुमति देती है।

जांच *Heracles and the Augean Stables* की प्राचीन पौराणिक कथा से शुरू होती है। यहाँ, हम पाते हैं कि हरक्यूलिस को गंदे अस्तबल को साफ करने के असंभव से लगने वाले काम का बोझ उठाना पड़ता है - जो उसके कुकर्मों का परिणाम है। यह पौराणिक समानांतर सामुदायिक सेवा की क्षमता को दर्शाता है जो एक परिवर्तनकारी अनुभव के रूप में कार्य कर सकती है, न कि केवल एक दंडात्मक उपाय के रूप में। यह विश्लेषण अपराधियों के पुनर्वास में सामुदायिक सेवा की भूमिका और अपराध दर को कम करने की इसकी क्षमता पर गहराई से चर्चा करता है। यह मानता है कि मौजूदा कार्यक्रम अक्सर कम पड़ जाते हैं और बेहतर प्रभावकारिता के लिए सुधार का प्रस्ताव करता है। भारतीय न्याय संहिता (बीएनएस) 2023 में छोटे-मोटे अपराधों के लिए दंडात्मक सजा के स्थान पर सामुदायिक सेवा को शामिल करने पर आगे जोर दिया गया, जिसने भारतीय दंड संहिता, 1860 को प्रतिस्थापित किया । भारतीय न्याय संहिता 2023 एक व्यक्तिगत दृष्टिकोण अपनाता है, सेवा कार्यों को प्रत्येक अपराधी की क्षमताओं और आवश्यकताओं के साथ जोड़ता है, जिससे इसका आंतरिक मूल्य बढ़ता है। इसके अलावा, भारतीय न्याय संहिता मेंटरशिप और सहायक नेटवर्क को प्राथमिकता देता है, जिससे पूर्व अपराधियों को समाज में आसानी से पुनः शामिल किया जा सके। दंडात्मक उपायों पर पुनर्वास को प्राथमिकता देकर, भारतीय न्याय संहिता अपराध में कमी लाने और अधिक समतापूर्ण समाज को बढ़ावा देने के लिए एक आशाजनक मार्ग प्रस्तुत करता है। संक्षेप में, हम 'अपराध से घृणा करें अपराधी से नहीं' के सिद्धांत की ओर बढ़ रहे हैं।

मुख्य शब्द : सामुदायिक सेवा, भारतीय न्याय संहिता 2023, सजा, दंड, कानून, भारतीय दंड संहिता, न्याय।

* अधिवक्ता, दिल्ली उच्च न्यायालय

* एमए एलएलबी (विधि संकाय, नई दिल्ली)

परिचय:

पूरे इतिहास में, न्याय अक्सर प्रतिशोध का पर्याय रहा है, जिसमें दंड को समाज द्वारा अपराधों के लिए प्रायश्चित करने के तरीके के रूप में देखा जाता है। हालाँकि, हेराक्लीज़ और ऑगियन अस्तबल की पौराणिक कथा एक कालातीत रूपक के रूप में कार्य करती है, जो सामुदायिक सेवा की परिवर्तनकारी क्षमता को उजागर करती है। हेराक्लीज़ का श्रम, जो शुरू में एक दंड था, अभिनव समस्या-समाधान के माध्यम से समुदाय में सकारात्मक रूप से योगदान करने की उनकी क्षमता का प्रमाण बन गया। हेराक्लीज़ और ऑगियन अस्तबल के मिथक के आधुनिक पुनर्कथन में, हम एक विचारशील राजा को पाते हैं जो समुदाय की बेहतरी के लिए हेराक्लीज़ की शक्ति का उपयोग करने की क्षमता को पहचानता है। उसे पारंपरिक जेल में बंद करने के बजाय, जो राज्य के लिए ऐसे शक्तिशाली व्यक्ति को आश्रय देने और खिलाने के लिए महंगा होगा, राजा ने एक बेहतर योजना बनाई, हरक्यूलिस को अस्तबल को साफ करने का आदेश दिया गया, एक सड़ता हुआ गड्ढा जो पीढ़ियों से अछूता था। राजा हेराक्लीज़ के लिए न केवल अपने पिछले कार्यों के लिए प्रायश्चित करने बल्कि समाज के लिए सार्थक योगदान देने का अवसर देखता है। मिथक की यह आधुनिक व्याख्या व्यक्तियों की शक्तियों का व्यापक हित के लिए उपयोग करने के मूल्यों पर जोर देती है, जो राज्य पर बोझ हो सकता था उसे सकारात्मक परिवर्तन और सामुदायिक सुधार के अवसर में बदल देती है।

सामुदायिक सेवा एक विश्व स्तर पर मान्यता प्राप्त प्रथा बन गई है, तथा भारत में कई राज्य भी अपने-अपने उच्च न्यायालयों के निर्णयों के माध्यम से लंबे समय से इसके कार्यान्वयन को अपना रहे हैं। इस अवधारणा की शुरुआत 1553 के आसपास लंदन के ब्राइडवेल पैलेस स्थित सुधार गृह में हुई थी। इसका उद्देश्य आवारा लोगों को श्रम कार्य में लगाकर उनकी आलस्य और आवारागर्दी का मुकाबला करना था। संयुक्त राज्य अमेरिका में 1966 में कैलिफोर्निया के अलामेडा काउंटी में महिला यातायात अपराधियों के साथ शुरू हुई सामुदायिक सेवा ने तब से कानून के छोटे-मोटे उल्लंघनों से निपटने के लिए एक मूल्यवान उपकरण के रूप में विस्तार किया है।[1] लेकिन सामुदायिक सेवा वास्तव में क्या है? क्या यह एक सज़ा है, क्षतिपूर्ति का एक रूप है, या पुनर्वास का एक साधन है? जबकि कुछ लोग इसे दंडात्मक उपाय के रूप में देखते हैं, सामुदायिक सेवा को अधिक सटीक रूप से क्षतिपूर्ति के एक रूप के रूप में वर्णित किया जाता है। प्रिज़न फ़ेलोशिप इंटरनेशनल के कार्यक्रम के तहत तैयार किए गए दस्तावेज़ में क्रिस्टोफर ब्राइट द्वारा व्यक्त किए गए विचारों के अनुसार, सामुदायिक सेवा का मतलब है अपराधी द्वारा किए गए नुकसान की भरपाई के लिए कार्रवाई करना[2]। भारत में, सज़ा की रूपरेखा भारतीय दंड संहिता (आईपीसी) की धारा 53-75 में उल्लिखित है। धारा 53 में विशेष रूप से पाँच प्रकार की सज़ाएँ बताई गई हैं:

1. मौत
2. आजीवन कारावास
3. कारावास
4. संपत्ति की जब्ती
5. जुर्माना

इससे पहले, सजा के रूप में सामुदायिक सेवा का कोई प्रावधान नहीं था, जिससे अमेरिका, ब्रिटेन और स्पेन जैसे देशों द्वारा निर्धारित वैश्विक मानकों की तुलना में उल्लेखनीय अंतर पैदा हो गया। इस अंतर को अब बीएनएस (भारत न्याय संहिता) की शुरुआत करके संबोधित किया गया है। हालाँकि पहले न्यायाधीशों के पास दंड प्रक्रिया संहिता (सीआरपीसी) के तहत सामुदायिक सेवा को दंड के रूप में लागू करने का विवेकाधिकार था, लेकिन अब तक आईपीसी में इसे औपचारिक रूप से मान्यता नहीं दी गई थी।

सज़ा के मुख्य सिद्धांत[3]

1. वितरणात्मक न्याय या प्रतिकारात्मक सिद्धांत

दंड को अपराध के प्रति स्वाभाविक या उचित प्रतिक्रिया के रूप में उचित ठहराया जाता है, जो एक मौलिक सहज दावे पर आधारित है। दंड की गंभीरता गलत काम की डिग्री के

[1] 1977 3 एससीसी 287

[2] 2020 एससीसी ऑनलाइन एमपी 2193: आईएलआर 2020 एमपी 2691

[3] 2021 एससीसी ऑनलाइन एमपी 107

अनुपात में होनी चाहिए। आनुपातिकता रेगिस्तान सिद्धांत में प्रमुख अवधारणा है, जैसा कि Kant and Hegel के लेखन में चर्चा की गई है।

2. निवारण सिद्धांत

निवारण सिद्धांत दंड के औचित्य के रूप में निवारण की रणनीति के माध्यम से आगे के अपराधों को रोकने पर ध्यान केंद्रित करते हैं। Bentham (1789; and cf. Walker 1991) जैसे प्रमुख उपयोगितावादी लेखक और Posner (1985) जैसे आर्थिक सिद्धांतकार दंड को अपराध के संभावित लाभों से अधिक होने के लिए पर्याप्त स्तर पर निर्धारित करने का प्रस्ताव करते हैं।

3. पुनर्वास संबंधी सजा

यहां लक्ष्य पुनर्वास के माध्यम से व्यक्ति द्वारा आगे अपराध करने से रोकना है, जिसमें व्यक्तिगत केसवर्क, चिकित्सा, परामर्श और पारिवारिक हस्तक्षेप शामिल हो सकते हैं।

4. अक्षमता संबंधी सज़ा

अक्षमता संबंधी दृष्टिकोण का उद्देश्य उन अपराधियों या अपराधियों के समूहों की पहचान करना है जो भविष्य में गंभीर नुकसान पहुंचा सकते हैं, तथा उनके विरुद्ध विशेष सुरक्षात्मक उपाय करना आवश्यक है।

5. पुनर्स्थापन और सुधारात्मक सिद्धांत

ये दंड के सिद्धांत नहीं हैं। इसके बजाय, वे दंड से हटकर क्षतिपूर्ति की ओर बढ़ने की वकालत करते हैं, जिसका उद्देश्य नुकसान की भरपाई करना और उसके अनुसार गणना करना है। यह पुनर्स्थापनात्मक सिद्धांत पीड़ित-केंद्रित होते हैं और कभी-कभी अपराध के प्रभावों के लिए समुदाय को क्षतिपूर्ति भी शामिल करते हैं। वे हिरासत पर कम निर्भरता का प्रस्ताव करते हैं, समुदाय-आधारित प्रतिबंधों का समर्थन करते हैं, जिसके लिए अपराधियों को पीड़ितों को मुआवजा देने के लिए काम करना पड़ता है, और अपराधियों को समुदाय में फिर से शामिल करने में मदद करने के लिए समर्थन और परामर्श प्रदान करना पड़ता है।

क्षतिपूर्ति की अवधारणा, पुनर्स्थापन (जो व्यक्तिगत पीड़ितों को हुए नुकसान की भरपाई करती है) और सामुदायिक सेवा (जो समग्र समुदाय को हुए नुकसान की भरपाई करती है) के बीच के अंतर को और अधिक स्पष्ट करती है। इस सूक्ष्म दृष्टिकोण का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि सामुदायिक सेवा समुदाय के नुकसान की भरपाई करने के अपने इच्छित उद्देश्य को पूरा करे, न कि इसे केवल एक अतिरिक्त दंडात्मक उपाय के रूप में जोड़ा जाए। (Vishal S Awtani vs State Of Gujarat on 2 December, 2020)

परंपरा में निहित, भविष्य के लिए विकसित:

भारतीय इतिहास के ताने-बाने में, छोटे-मोटे अपराधों के लिए न्याय के धागे मेल-मिलाप और समुदाय की सेवा पर केंद्रित होकर बुने गए हैं। प्राचीन कानूनी ग्रंथों, जैसे कि प्रतिष्ठित धर्मशास्त्र और अर्थशास्त्र ने इस दृष्टिकोण की नींव रखी। इन कार्यों में दंडात्मक उपायों को लागू करने की तुलना में सामाजिक संतुलन को बहाल करने की सर्वोच्चता पर जोर दिया गया। सामाजिक सुधार पर यह जोर प्रारंभिक कानूनी संहिताओं में प्रकट हुआ, जिसमें अक्सर सामुदायिक सेवा के प्रावधान शामिल किए गए। अपराधियों को सार्वजनिक कार्यों के नवीनीकरण, सामुदायिक प्रयासों में भागीदारी या धर्मार्थ उपक्रमों में योगदान देने का काम सौंपा जा सकता है। पुनर्वास और प्रायश्चित पर केंद्रित यह दर्शन, औपनिवेशिक युग की विरासत, भारतीय दंड संहिता, 1860 (आईपीसी) के बिल्कुल विपरीत था।

इन प्राचीन परंपराओं से प्राप्त ज्ञान से रहित, इंडियन पीनल कोड ने, यहां तक कि मामूली अपराधों के लिए भी, कारावास पर बहुत अधिक भरोसा किया। इसका परिणाम यह हुआ कि सिस्टम में भीड़भाड़ का बोझ बढ़ गया और पुनरावृत्ति की दर निराशाजनक रूप से उच्च हो गई। इंडियन पीनल कोड मुख्य रूप से अंग्रेजों द्वारा भारतीयों पर शासन करने और उन्हें जेलों में डालने के लिए बनाई गई थी ताकि उन्हें नियंत्रित करने और प्रबंधित करने के लिए कम लोग हों। आम तौर पर वे छोटे-मोटे अपराधों के लिए प्रभावशाली व्यक्तित्वों को सलाखों के पीछे डालने की कोशिश करते थे ताकि वे बाहर निकलकर ब्रिटिश राज के खिलाफ विद्रोह करने के बजाय जेलों में सड़ते रहें। वे हमें बदलना नहीं चाहते थे, वे हमें कैद करना चाहते थे।

ऐतिहासिक रूप से भी, भारतीय न्यायालयों ने कभी-कभी नाबालिगों के लिए सज़ा के रूप में सामुदायिक सेवा का उपयोग किया है। इसका एक उल्लेखनीय उदाहरण 2022 का सुप्रीम कोर्ट का मामला है जिसमें पश्चिम बंगाल के एक डॉक्टर

शामिल थे। डॉक्टर, जिस पर किशोरावस्था में हत्या का प्रयास करने का आरोप था, उसे एक साल के भीतर 100 पेड़ लगाने की सजा सुनाई गई (Sole S.K. v. State)। इसी तरह, दिल्ली उच्च न्यायालय ने एक अलग मामले में भी ऐसा ही दृष्टिकोण अपनाया, जहाँ एक जोड़े को घरेलू काम के लिए नाबालिग को काम पर रखने की सज़ा के तौर पर 100 पेड़ लगाने का आदेश दिया गया था।

वर्ष 2020 के Sunita Gandharva v. State of M.P[4] मामले में, मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय ने इंडियन पीनल कोड की धारा 3)437) के तहत जमानत शर्तों की पहुंच का पता लगाया। उन्होंने स्पष्ट किया कि ये शर्तें पारंपरिक सीमाओं से परे हो सकती हैं और सामुदायिक सेवा और पुनर्वास के उद्देश्य से अन्य कार्यक्रमों जैसी गतिविधियों को शामिल कर सकती हैं। हालांकि, अदालत ने इस बात पर जोर दिया कि ये उपाय उचित होने चाहिए तथा अत्यधिक बोझिल या विचित्र नहीं होने चाहिए।

हाल के वर्षों में भारतीय न्यायालयों ने पारंपरिक ज़मानत शर्तों से आगे बढ़कर सामुदायिक सेवा को एक विकल्प के रूप में अपनाया है। मध्य प्रदेश के कई मामले इस प्रवृत्ति के उदाहरण हैं। Shiv Kumar v. State of MP (2005) में, पेड़ लगाना और उनकी देखभाल करना रिहाई के लिए एक आवश्यकता थी। इसी तरह, Banti Jatav v. State of MP (2020) में एक प्रतिवादी ने स्वास्थ्य केंद्र में स्वयंसेवक के रूप में काम किया, जबकि Jitendra Parihar v State of Madhya Pradesh (2020) में जल संरक्षण प्रणाली स्थापित करने की बात कही गई। यहां तक कि Rishi Ahirwar v. State of Madhya Pradesh and Anr. (2017)[5] में रक्तदान को सामुदायिक सेवा का एक स्वीकार्य रूप माना गया था। ये विविध उदाहरण भारत की न्याय प्रणाली में एक रचनात्मक जमानत शर्त के रूप में सामुदायिक सेवा की क्षमता को उजागर करते हैं।

यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि हालांकि इन मामलों में वृद्धि की प्रवृत्ति दिखाई देती है, परन्तु भारत में सामुदायिक सेवा की सजा के लिए कोई विशिष्ट कानून या स्थापित दिशानिर्देश नहीं थे। भारतीय न्याय संहिता 2023 के आगमन से पहले, जिसने इंडियन पीनल कोड की जगह ली थी, ऐसे फैसले केस-दर-केस आधार पर व्यक्तिगत न्यायाधीशों के विवेक पर छोड़ दिए जाते थे। न्यायाधीश, सामुदायिक सेवा के रूप में, अधिकांशतः समझौता निरस्तीकरण कार्यवाही में, दण्ड की मात्रा का निर्णय करते थे।

एक छोटे से अपराध के लिए एफआईआर को रद्द करने से संबंधित एक विचित्र मामले में, जहां आरोपी एक छात्र था और कुछ प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी कर रहें थे, न्यायाधीश ने उसे स्थानीय सरकारी पुस्तकालय में उपस्थित होने और प्रतिदिन 3/2 घंटे के लिए पुस्तकालय में बहीखाता और अन्य कार्यों में मदद करने का आदेश दिया, शेष समय वह पुस्तकालय में बैठकर अध्ययन कर सकता है।

नए कानून ने इस गंभीर दोष को स्वीकार करते हुए एक बहुत जरूरी बदलाव की शुरुआत की है। सामुदायिक सेवा कहीं अधिक रचनात्मक दृष्टिकोण प्रदान करती है। कारावास में रहने के बजाय, अपराधियों को अब अपने समुदायों में सकारात्मक योगदान देने का अवसर मिलेगा। सार्वजनिक स्थानों की सफाई और पर्यावरण परियोजनाओं में सहायता करने से लेकर सामाजिक सेवा संगठनों में स्वयंसेवा करने तक, सामुदायिक सेवा पुनर्वास और प्रायश्चित का अवसर प्रदान करती है।

न्याय का सुधारात्मक सिद्धांत और आईपीसी में इसकी चुनौतियाँ:

"The humane art of sentencing remains a retarded child of the Indian criminal system".

-न्यायमूर्ति वी.आर.कृष्ण अय्यर[6]

अपराध होते ही आपराधिक न्याय प्रणाली लागू हो जाती है, इसमें चार महत्वपूर्ण अंग होते हैं- पुलिस, जेल, न्यायालय और अभियोजन। भारत में सुधारात्मक कार्रवाई का उद्देश्य मुख्य रूप से दो सिद्धांतों पर आधारित है: रोकथाम और सुधारात्मक सिद्धांत। रोकथाम सिद्धांत का उद्देश्य अपराधी को रोकना

[4] एआईआर 1997 सुप्रीम कोर्ट 1739

[5] एशवर्थ ए. (1997)। माइक मैगुएर, रॉड मॉर्गन, रॉबर्ट रेनर (एड.), द ऑक्सफोर्ड हैंडबुक ऑफ क्रिमिनोलॉजी में सजा।

[6] बर्ट जी. और जो एच. (1990)। आपराधिक न्याय, पुनर्स्थापन और सुलह। मोन्सी, एनवाई: आपराधिक न्याय प्रेस।

और उसे आगे अपराध करने से रोकना है जबकि सुधारात्मक सिद्धांत का उद्देश्य अपराधी को बदलना है ताकि उसकी आपराधिक प्रवृत्ति समाप्त हो जाए और उसे समाज में शामिल किया जा सके, यह इस दृष्टिकोण पर आधारित है कि यदि किसी आरोपी को न्यायालय या कानून द्वारा किसी विशेष तरीके से समर्थन दिया जाता है तो आरोपी व्यक्ति को सकारात्मक तरीके से बदला जा सकता है, उसकी मानसिकता को सकारात्मक दृष्टिकोण में बदला जा सकता है और उसे समाज के लिए फायदेमंद बनाया जा सकता है। सुधारात्मक विचारधारा के अनुसार, दोषी मन को सुधारना है और आपराधिक रवैये को जेल में सजा देकर ठीक करना है, जिसमें अपराधी को सभ्य सज्जन में बदलने के लिए शिक्षा, ज्ञान, पेशेवर, व्यावसायिक और आध्यात्मिक मार्गदर्शन के लिए वातावरण, सुविधाएँ और अवसर प्रदान किए जाने चाहिए।

न्याय का सुधारात्मक सिद्धांत, अपराधियों के पुनर्वास और सामाजिक पुनर्मिलन पर केंद्रित है, जो आपराधिक न्याय प्रणाली के भीतर दंड का प्राथमिक उद्देश्य है। मोहम्मद गियासुद्दीन बनाम आंध्र प्रदेश राज्य (1977)[7] के मामले में, न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर ने व्यक्तियों में परिवर्तन की क्षमता को पहचानने के महत्व पर जोर देते हुए कहा, "यदि प्रत्येक संत का एक अतीत है, तो प्रत्येक पापी का एक भविष्य है, और यह कानून की भूमिका है कि वह दोनों को यह याद दिलाए।" परिणामस्वरूप, न्यायालय ने सरकार को यह सुनिश्चित करने का निर्देश दिया कि कैदियों को दिया जाने वाला काम बार बार आने वाला, तकनीकी या बौद्धिक रूप से अरुचिकर न हो। इसने उच्च शिक्षा प्राप्त करने में रुचि रखने वाले कैदियों के लिए अवसरों की वकालत की और महिला कैदियों के लिए बुनियादी सिलाई और गुड़िया बनाने जैसी गतिविधियों को प्रोत्साहित किया। परिणामस्वरूप, इस मामले में सजा को घटाकर 18 महीने कर दिया गया, साथ ही धोखाधड़ी के लिए 1200 रुपये का जुर्माना लगाया गया। न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर के दर्शन ने सबसे कठोर अपराधियों में भी सकारात्मक बदलाव की क्षमता में विश्वास को रेखांकित किया। दण्ड का सुधारात्मक सिद्धांत पुनर्वास को प्राथमिकता देता है, जिसका उद्देश्य शिक्षा और सकारात्मक प्रभावों के माध्यम से अपराधियों में सुधार लाना है, तथा जेलों को व्यक्तिगत विकास को बढ़ावा देने वाली संस्थाओं के रूप में देखना है।

वैश्विक स्तर पर सुधारात्मक सिद्धांत की शाखाएँ गैर-हिरासत प्रतिबंधों तक फैल गई हैं, जो समुदाय-आधारित दंडों की एक श्रृंखला प्रदान करती हैं। ये अपराधियों को नौकरी पर बने रहने और परिवार से जुड़े रहने की अनुमति देते हैं। उदाहरणों में काउंसलिंग या सामुदायिक सेवा के साथ परिवीक्षा, अपराध को रोकने और पीड़ितों की सहायता करने के लिए जुर्माना, और पीड़ित, अपराधी और समुदाय को ठीक करने के लिए एक साथ लाने वाले पुनर्स्थापनात्मक न्याय कार्यक्रम शामिल हैं। उपचार कार्यक्रम अपराध के मूल कारणों को संबोधित करते हैं, जबकि डायवर्सन कार्यक्रम निम्न-स्तर के अपराधियों को पूरी तरह से सिस्टम से बाहर रखते हैं।

वर्ष 1860 में तैयार की गई भारतीय दंड संहिता (आईपीसी) मुख्य रूप से अपराधों और उनके अनुरूप दंडों, पारंपरिक रूप से कारावास या जुर्माने की रूपरेखा प्रस्तुत करती है। हालाँकि, इसमें विकल्प के रूप में गैर-हिरासत प्रतिबंधों के लिए स्पष्ट प्रावधान नहीं हैं। परिवीक्षा या सामुदायिक सेवा जैसे ये विकल्प, विकसित आपराधिक न्याय प्रथाओं और न्यायिक घोषणाओं के माध्यम से उभरे हैं। आईपीसी में इस अंतर के कारण सुधार की आवश्यकता थी, 2023 में अधिनियमित भारतीय न्याय संहिता, गैर-हिरासत प्रतिबंधों के लिए अधिक व्यापक कानूनी ढांचे को शामिल करके इस मुद्दे को संबोधित करती है।

कार्रवाई की मांग करने वाला एक महत्वपूर्ण मोड़: सुधारों की आवश्यकता:

भारत की आपराधिक न्याय प्रणाली पर औपनिवेशिक अतीत का बोझ है। 1860 में लागू भारतीय दंड संहिता (आईपीसी) अपने समय के लिए एक मील का पत्थर है, लेकिन आधुनिक लोकतंत्र की मांगों को पूरा करने के लिए संघर्ष करती है। एक गंभीर मुद्दा यह है कि संहिता में कारावास पर अत्यधिक निर्भरता है। पुनर्वास के लिए नहीं बल्कि सज़ा के लिए बनाए गए जेलों में भीड़भाड़ है और वे अमानवीय हैं। राम मूर्ति बनाम कर्नाटक राज्य (1997)[8] में, भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने भारतीय जेलों की भयावह स्थितियों पर प्रकाश डाला, जिसमें

[7] भारत में अपराध (2021)। एनसीआरबी

[8] कोस्टलर ए. ड्रिंकर्स ऑफ इनफिनिटी: निबंध 1955-1967

भीड़भाड़, अस्वच्छ परिस्थितियाँ, अमानवीय व्यवहार, मुकदमों में देरी और संचार की कमी को प्रमुख मुद्दे बताया गया।

फैसले के करीब दो दशक बाद भी जमीनी हकीकत जस की तस बनी हुई है। राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो की वर्ष 2021 की रिपोर्ट के अनुसार भारत में देश भर में 1319 जेल हैं, जिनकी वास्तविक क्षमता 4,25,609 व्यक्तियों की है, लेकिन इसमें 5,54,034 व्यक्ति रह रहे हैं, जबकि इनमें 130.2%[9] की दर से कैदी बंद हैं।

इसी रिपोर्ट में बताया गया है कि 5,54,034 में से केवल 1,22,852 सजा पाये हैं और बाकी 4,27,165 विचाराधीन कैदी हैं।

पारंपरिक प्रणाली, जो कारावास पर अत्यधिक निर्भर थी, अपराध के मूल कारणों को संबोधित करने में विफल रही; छोटे-मोटे अपराधी, जो अक्सर पहली बार गलती करते थे, उन्हें कठोर अपराधियों के साथ कठोर वातावरण में फेंक दिया जाता था। इससे न केवल राज्य पर आवास और उनके भोजन का खर्चा बढ़ गया, बल्कि आगे अपराधीकरण के लिए एक प्रजनन भूमि भी तैयार हो गई, जहाँ पहली बार अपराधी कठोर अपराधियों के साथ मिल जाते हैं और कई बार रिहा होने पर उनके लिए या उनके साथ काम करते हैं।

इससे जेल प्रणाली पर बोझ पड़ता है और अपराध के मूल कारणों को संबोधित करने में विफल रहता है। कारावास के विकल्प के रूप में सामुदायिक सेवा एक आशाजनक मार्ग प्रदान करती है, जो पुनर्वास, पुनर्स्थापनात्मक न्याय और जेल की आबादी को कम करने को प्राथमिकता देती है। इन नए प्रावधानों में अपार संभावनाएं हैं। यह भरी हुई जेलों पर दबाव को कम कर सकता है, जिससे संसाधनों को अधिक गंभीर अपराधों की ओर निर्देशित किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, जिम्मेदारी की भावना पैदा करके और मूल्यवान कौशल सीखने का अवसर प्रदान करके, सामुदायिक सेवा पुनर्वास के लिए अधिक उत्पादक मार्ग को बढ़ावा देती है।

यह बदलाव अधिक प्रगतिशील और मानवीय न्याय प्रणाली की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

सामुदायिक सेवा का मार्ग:

भारतीय न्याय संहिता 2023 (बीएनएस) छोटे अपराधों से निपटने के तरीके में उल्लेखनीय बदलाव को दर्शाती है। सबसे महत्वपूर्ण बदलावों में से एक संभावित सजा के रूप में सामुदायिक सेवा की शुरूआत है। छोटे अपराधों के लिए केवल कारावास पर निर्भर रहने से दूर यह कदम लंबे समय से आ रहा है, जो पिछले कुछ वर्षों में विभिन्न सिफारिशों और चर्चाओं से प्रेरित है।

सुधार हेतु सामूहिक स्वर:

कानूनी सुधारों की समीक्षा और सिफ़ारिश करने वाले निकाय, भारतीय विधि आयोग ने संभवतः महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। हालाँकि सामुदायिक सेवा पर एक भी समर्पित रिपोर्ट नहीं हो सकती है, लेकिन छोटे अपराधों के लिए दंड में सुधार पर व्यापक चर्चाएँ आधार तैयार कर सकती थीं। संसदीय समितियों, विशेष रूप से गृह मामलों की स्थायी समिति (HAC) (2023) ने BNS विधेयक की जाँच के दौरान सामुदायिक सेवा के मामले को और मज़बूत किया था।

नौकरशाही से परे:

कानूनी विद्वानों, सामाजिक कार्यकर्ताओं और अपराध विज्ञानियों की आवाज़ों ने निस्संदेह इस बदलाव में योगदान दिया है। पुनर्वास और पुनरावृत्ति दर को कम करने में सामुदायिक सेवा के लाभों को उजागर करने वाले शोध और विश्लेषणों ने नीति निर्माताओं को प्रभावित किया होगा। दुनिया भर में सफल प्रथाओं का अध्ययन करने से भी निर्णय प्रभावित हो सकता है। जिन देशों में सामुदायिक सेवा प्रभावी साबित हुई है, वे भारत के नए दृष्टिकोण के लिए मॉडल के रूप में काम कर सकते हैं।

सार्वजनिक वार्तालाप:

बदलाव की बयार सिर्फ कानूनी हलकों तक ही सीमित नहीं थी। मौजूदा दंड व्यवस्था की सीमाओं की ओर ध्यान आकर्षित करने और सुधार की वकालत करने वाले सार्वजनिक विमर्श और मीडिया कवरेज ने बदलाव के लिए एक सामान्य गति पैदा की। इस सामूहिक जागरूकता ने नीति निर्माताओं को दंड के

[9] मोहम्मद गियासुद्दीन बनाम आंध्र प्रदेश राज्य (1977) एससीआई

प्रति अधिक प्रगतिशील दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रेरित किया होगा।

न्याय का एक नया युग: भारत में सामुदायिक सेवा की शुरुआत

भारतीय न्याय प्रणाली में एक महत्वपूर्ण विकास को चिह्नित करते हुए, वर्ष 2023 में भारतीय न्याय संहिता (BNS)[10] की शुरुआत की गई। इस व्यापक संहिता का उद्देश्य भारतीय दंड संहिता को प्रतिस्थापित करना, इसकी सीमाओं को संबोधित करना और कानूनी ढांचे को समसामयिक वास्तविकताओं के साथ संबोधित करना है। बीएनएस दंडात्मक और पुनर्वास उपायों को बढ़ावा देते हुए आपराधिक न्याय के लिए अधिक सुव्यवस्थित और कुशल दृष्टिकोण का वादा करता है। फोरेंसिक विज्ञान में प्रगति को शामिल करके और उभरते आपराधिक रुझानों को संबोधित करके, इस संहिता का उद्देश्य एक अधिक मजबूत और उत्तरदायी न्यायिक प्रणाली सुनिश्चित करने का प्रयास करता है। बीएनएस एक आधुनिक कानूनी परिदृश्य की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है, जो अधिक न्यायपूर्ण और समतापूर्ण समाज को बढ़ावा देता है।

Hudson and Galaway ने सामुदायिक सेवा के कई लाभ सूचीबद्ध किए हैं:[11]

क. न्याय प्रणाली में दखलंदाजी, और पुनरावृत्ति कम होती है,

ख. अपराधी द्वारा उपलब्ध कराए गए श्रम से एजेंसियों को लाभ होता है,

ग. आपराधिक न्याय प्रणाली के भीतर सामुदायिक समर्थन बढ़ता है,

घ. लागत कम होती है,

ड़. अदालतों के लिए वैकल्पिक सजा के रूप में काम करता है

च. अपराधी दूसरे की ज़रूरत का भी अनुभव कर सकते हैं।

पिछले भारतीय दंड संहिता (आईपीसी) से एक महत्वपूर्ण बदलाव यह है कि कारावास या जुर्माने जैसी पारंपरिक सज़ाओं के विकल्प के रूप में सामुदायिक सेवा को शामिल किया गया है। इसका मतलब है कि कुछ अपराधों, जैसे छोटी-मोटी चोरी या सार्वजनिक नशा, के लिए अपराधियों को निगरानी वाले काम के ज़रिए अपने समुदाय को वापस देने के लिए निर्देशित किया जा सकता है। इस दृष्टिकोण का उद्देश्य केवल सज़ा से आगे बढ़ना और समाज को सीधे लाभ पहुँचाते हुए पुनर्वास को प्रोत्साहित करना है।

पुनर्वास बनाम दण्ड:

बीएनएस विशेष रूप से छोटे अपराधों के लिए पुनर्स्थापनात्मक न्याय के महत्व को पहचानता है। सामुदायिक सेवा कारावास का एक विकल्प प्रदान करती है, जिसका उद्देश्य अपराधियों का पुनर्वास करना और जवाबदेही की भावना को बढ़ावा देना है। यह दृष्टिकोण वैश्विक रुझानों के अनुरूप है जो केवल सजा के बजाय पुनर्वास को प्राथमिकता देते हैं।

अपराधों के परिणामों को अनुकूलित करना:

बीएनएस विशिष्ट अपराधों के लिए सामुदायिक सेवा को लक्षित करता है, यह मानते हुए कि सभी अपराधों के लिए समान दंड की आवश्यकता नहीं होती है। यह छोटे अपराधों के लिए अधिक सूक्ष्म प्रतिक्रिया की अनुमति देता है।

सामुदायिक सेवा के लिए योग्य अपराध:

बीएनएस ने विभिन्न अपराधों की रूपरेखा तैयार की है जिनके लिए सामुदायिक सेवा निर्धारित की जा सकती है। इनमें शामिल हैं:

- लोक सेवक: अवैध व्यापार के लिए सत्ता का दुरुपयोग (धारा 202)
- कानून की अवहेलना: सम्मन का जवाब न देना (भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 की धारा 84)
- आत्म-क्षति के माध्यम से जबरदस्ती: कानूनी कार्रवाई को प्रभावित करने के लिए आत्महत्या का प्रयास (धारा 226)

[10] मुरुगेसन डी. (2014)। तमिलनाडु में किशोरों के कानून के साथ टकराव की ओर ले जाने वाले कारकों का एक अध्ययन: समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य

[11] प्यूट्रस्ट की रिपोर्ट। सजा का समय: लंबी जेल अवधि की उच्च लागत, कम लाभ

- छोटी-मोटी चोरी: 5,000 रुपये से कम की पहली बार की चोरी (धारा 2/303)
- सार्वजनिक नशा (धारा 355)
- मानहानि (धारा 356)

यह सूची एक प्रारंभिक बिंदु प्रदान करती है, और बीएनएस न्यायाधीशों को दिए गए मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के अनुसार सामुदायिक सेवा के लिए अतिरिक्त छोटे अपराधों पर विचार करने की अनुमति दे सकता है।

सामुदायिक सेवा की शुरूआत भारत में अधिक संतुलित और पुनर्स्थापनात्मक न्याय प्रणाली की दिशा में एक आशाजनक कदम है। यह पुनर्वास को प्राथमिकता देता है और समुदायों के भीतर जिम्मेदारी की अधिक भावना को बढ़ावा देता है।

कारावास से परे:

1. **पुनरावृत्ति को कम करना:** भारत में पुनरावृत्ति दरों पर सीमित आँकड़े उपलब्ध है, जो विशेष रूप से सामुदायिक सेवा कार्यक्रमों से संबंधित है। हालाँकि, पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो द्वारा 2013 में किए गए एक अध्ययन में पाया गया कि भारत में किशोरों में पुनरावृत्ति दर 27% थी[12]। अन्य देशों से कुछ सबूत मिले हैं कि सामुदायिक सेवा कार्यक्रम पुनरावृत्ति को कम करने में प्रभावी हो सकते हैं। उदाहरण के लिए, 98 अध्ययनों के मेटा-विश्लेषण में पाया गया कि सामुदायिक सेवा कार्यक्रमों का पुनरावृत्ति दरों को कम करने पर एक छोटा लेकिन महत्वपूर्ण प्रभाव था।

2. **लागत-प्रभावी और स्थिरता:** इस बात के सबूत हैं कि सामुदायिक सेवा कार्यक्रम कारावास की तुलना में अधिक लागत-प्रभावी हो सकते हैं। Pew Centre on the States द्वारा 2010 में किए गए एक अध्ययन में पाया गया कि संयुक्त राज्य अमेरिका में एक अपराधी को कैद करने की औसत वार्षिक लागत $45,000[13] थी। भारत में, कारावास की लागत कम होने की संभावना है, लेकिन यह अभी भी एक महत्वपूर्ण व्यय है। दूसरी ओर, सामुदायिक सेवा कार्यक्रम लागत के एक अंश पर चलाए जा सकते हैं। उदाहरण के लिए, अर्बन इंस्टीट्यूट द्वारा 2003 में किए गए एक अध्ययन में पाया गया कि संयुक्त राज्य अमेरिका में एक सामुदायिक सेवा कार्यक्रम की औसत लागत प्रति अपराधी $1,200 थी।

3. **जिम्मेदारी और सीखने को बढ़ावा देना:** सामुदायिक सेवा कार्यक्रम अपराधियों के बीच जिम्मेदारी और शिक्षा को प्रोत्साहित कर सकते हैं। सामुदायिक सेवा में भाग लेने से, अपराधियों को अपने कार्यों के प्रभाव का सामना करना चाहिए, अपने पीड़ितों के प्रति सहानुभूति को बढ़ावा देना चाहिए और परिणामों की गहरी समझ होनी चाहिए। इसके अतिरिक्त, ये कार्यक्रम नए कौशल हासिल करने और मूल्यवान अनुभव प्राप्त करने के अवसर प्रदान करते हैं, जिससे उनकी रोजगार संभावनाओं और समाज में पुनः एकीकरण में सहायता मिलती है।

4. **अनुकूलित दृष्टिकोण:** भारत में सामुदायिक सेवा कार्यक्रमों को समुदाय और अपराधियों की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए अनुकूलित किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, कुछ कार्यक्रम पर्यावरण की सफाई पर ध्यान केंद्रित कर सकते हैं, जबकि अन्य गरीबों को सामाजिक सेवाएँ प्रदान करने पर ध्यान केंद्रित कर सकते हैं। अपराधियों को ऐसे कार्यक्रमों में रखा जा सकता है जो उनके कौशल और रुचियों के लिए उपयुक्त हों।

छोटे-मोटे अपराधों के लिए सुधारात्मक उपाय के रूप में सामुदायिक सेवा को लागू करके, भारत एक अधिक व्यापक और दयालु न्याय प्रणाली विकसित कर सकता है। यह दृष्टिकोण पुनर्वास को प्रोत्साहित करता है, पुनरावृत्ति को कम करता है, सामुदायिक बंधनों को मजबूत करता है, और मानवीय गरिमा का सम्मान करता है।

सामुदायिक सेवा: अपराधी पुनर्वास को प्रोत्साहन देना:

सामुदायिक सेवा कई अपराधियों के लिए पारंपरिक दंडात्मक सज़ा का एक प्रेरक विकल्प प्रस्तुत करती है। कारावास

[12] भारतीय न्याय संहिता, 2023. संख्या 45 वर्ष 2023

[13] विशाल एस. अवतानी बनाम गुजरात राज्य रिट याचिका (पीआईएल) संख्या 108 वर्ष 2020 एससीसी ऑनलाइन गुजरात 2814

के विपरीत, जो अलगाव और रोकथाम पर जोर देता है, सामुदायिक सेवा पुनर्वास और पुनः एकीकरण पर ध्यान केंद्रित करती है। यह दृष्टिकोण अपराधी, समुदाय और समग्र रूप से न्याय प्रणाली के लिए कई लाभ प्रदान करता है।

- **समाज से वापस जुड़ने का पुल बनाना**: कारावास अपराधी के परिवार, रोजगार और सामुदायिक सहायता प्रणाली से संबंध तोड़ देता है। रिहाई के बाद सफल पुनर्मिलन के लिए ये संबंध बहुत ज़रूरी हैं। सामुदायिक सेवा अपराधियों को इन महत्वपूर्ण संबंधों को बनाए रखने की अनुमति देती है, जिससे अपराध की पुनरावृत्ति का जोखिम कम हो जाता है। कल्पना कीजिए कि एक अकेली माँ ने कोई छोटा-मोटा अपराध किया है। कारावास से उसकी नौकरी जा सकती है और बच्चे की देखभाल बाधित हो सकती है, जिससे उसके लिए अपने पैरों पर वापस खड़े होना मुश्किल हो सकता है। दूसरी ओर, सामुदायिक सेवा उसे रोजगार और बच्चे की देखभाल की दिनचर्या बनाए रखने की अनुमति देती है, जिससे कानून का पालन करने वाली ज़िंदगी में वापस लौटना आसान हो जाता है।
- **दायित्व से संपत्ति तक**: कई सामुदायिक सेवा कार्यक्रम अपराधियों को नौकरी से संबंधित कौशल विकसित करने और विशिष्ट क्षेत्रों में अनुभव प्राप्त करने के अवसर प्रदान करते हैं। उदाहरण के लिए, एक अपराधी को ऐसे कार्यक्रम में रखा जा सकता है जो बढ़ईगीरी या भूनिर्माण सिखाता है। ये नए अर्जित कौशल रिहाई के बाद रोजगार क्षमता को काफी बढ़ा सकते हैं, जिससे वित्तीय तनाव कम हो सकता है जो आपराधिक गतिविधि में योगदान दे सकता है। इसके अलावा, सेवा के माध्यम से समुदाय में योगदान करने से उद्देश्य और जिम्मेदारी की भावना बढ़ती है, जो नाराजगी या निराशा की भावनाओं को बदल देती है जो कारावास से उत्पन्न हो सकती है।
- **लागत-प्रभावशीलता**: कारावास न्याय प्रणाली पर एक महत्वपूर्ण वित्तीय बोझ है। दूसरी ओर, सामुदायिक सेवा कार्यक्रम आम तौर पर संचालित करने के लिए बहुत कम महंगे होते हैं। इन लागत बचतों को अपराध की रोकथाम के उद्देश्य से अन्य महत्वपूर्ण सामाजिक कार्यक्रमों या पहलों की ओर पुनर्निर्देशित किया जा सकता है। मुक्त संसाधनों का उपयोग उन कार्यक्रमों का समर्थन करने के लिए किया जा सकता है जो अपराध के मूल कारणों को संबोधित करते हैं, जिससे सार्वजनिक सुरक्षा के लिए अधिक टिकाऊ दृष्टिकोण बनता है।
- **सहानुभूति की भावना उत्पन्न करना**: सामुदायिक सेवा अपराधी परिवर्तन के लिए एक शक्तिशाली अवसर प्रदान करती है। अपने काम के सकारात्मक प्रभाव को प्रत्यक्ष रूप से देखने से सहानुभूति और एक नया दृष्टिकोण पैदा हो सकता है, जो व्यक्तिगत विकास के लिए उत्प्रेरक का काम करता है। यह अनुभव पुनः समाजीकरण लक्ष्यों के साथ पूरी तरह से मेल खाता है, जिससे अपराधी सकारात्मक योगदान के माध्यम से समाज में फिर से शामिल हो सकते हैं। सामुदायिक सुधार परियोजनाओं में सक्रिय रूप से भाग लेने से, उन्हें उद्देश्य और अपनेपन की भावना मिलती है, जिससे समाज के भीतर एक अधिक सकारात्मक और उत्पादक भूमिका को बढ़ावा मिलता है।
- **अपराध के चक्र को तोड़ना**: जेल आपराधिक गतिविधियों के लिए प्रजनन स्थल हो सकते हैं, अपराधियों को कठोर अपराधियों और नकारात्मक प्रभावों के संपर्क में लाते हैं। सामुदायिक सेवा उन्हें इस माहौल से बचने और सकारात्मक बदलाव पर ध्यान केंद्रित करने की अनुमति देती है। योगदान करने और सकारात्मक कौशल विकसित करने के अवसरों के साथ उन्हें घेरकर, सामुदायिक सेवा कार्यक्रम अपराध के चक्र को बाधित करने और अधिक उत्पादक भविष्य की ओर एक रास्ता बनाने में मदद कर सकते हैं।

सामुदायिक सेवा अपराधी पुनर्वास के लिए एक बहुआयामी दृष्टिकोण प्रदान करती है। यह समाज में पुनः एकीकरण को बढ़ावा देती है, अपराधियों को मूल्यवान कौशल से लैस करती है, पुनर्स्थापनात्मक न्याय की अनुमति देती है, और न्याय प्रणाली पर वित्तीय दबाव को कम करती है। हालांकि यह सभी के लिए एक ही समाधान नहीं है, लेकिन सामुदायिक सेवा सकारात्मक बदलाव को बढ़ावा देने और पुनरावृत्ति को कम करने के लिए एक शक्तिशाली उपकरण के रूप में कार्य करती है, जिससे अंततः सभी के लिए एक सुरक्षित और अधिक न्यायपूर्ण समाज का निर्माण होता है।

भारत में सामुदायिक सेवा को बढ़ाने के लिए वैश्विक अंतर्दृष्टि:

भारत में सामुदायिक सेवा की समृद्ध विरासत है, लेकिन दूरदर्शी दृष्टिकोण के लिए निरंतर सुधार की आवश्यकता है। दुनिया भर के सफल कार्यक्रमों की जांच करके, भारत अपनी रणनीति को परिष्कृत कर सकता है और सामुदायिक सेवा पहलों की पूरी क्षमता को खोल सकता है।

1. **पीड़ितों की ज़रूरतों को प्राथमिकता देना**: नॉर्वे और कनाडा जैसे देशों से पीड़ितों की ज़रूरतों पर ध्यान केंद्रित करना एक महत्वपूर्ण सीख है। ऐसी पुनर्स्थापनात्मक न्याय प्रथाओं की कल्पना करें जहाँ अपराधियों को, पीड़ित की सहमति से, अपने कार्यों के प्रभाव को समझने का मौका मिले। सामुदायिक सेवा में ऐसे कार्य भी शामिल हो सकते हैं जो पीड़ितों को सीधे लाभ पहुँचाते हैं, जैसे अपराध से हुए नुकसान की मरम्मत करना। यह पीड़ित-केंद्रित दृष्टिकोण जवाबदेही की भावना को बढ़ावा देता है और समुदायों के भीतर उपचार को बढ़ावा देता है।

2. **सूक्ष्म जवाबदेही**: प्रभावी कार्यक्रम अपराधियों को जवाबदेह ठहराने और उनके पुनर्वास की सुविधा के बीच संतुलन बनाते हैं। जबकि सामुदायिक सेवा से भविष्य में होने वाले अपराधों को रोका जा सकता है, अत्यधिक कठोर या दंडात्मक दृष्टिकोण प्रतिकूल हो सकते हैं। न्यूज़ीलैंड यहाँ मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान करता है, जिसमें सामुदायिक सेवा के भीतर लक्ष्य-निर्धारण और प्रगति निगरानी पर जोर देने वाले कार्यक्रम शामिल हैं। यह अपराधियों के लिए उपलब्धि की भावना को बढ़ावा देता है, सकारात्मक बदलाव को प्रेरित करता है और पुनर्वास के लिए एक वास्तविक प्रतिबद्धता है।

3. पुनः एकीकरण आधारशिला के रूप में: ऑस्ट्रेलिया जैसे देश समाज में पुनः एकीकरण के लिए सामुदायिक सेवा को एक कदम के रूप में उपयोग करने की शक्ति का प्रदर्शन करते हैं। इसमें अपराधियों को उनकी सेवा असाइनमेंट के साथ-साथ नौकरी प्रशिक्षण या शैक्षिक अवसरों से जोड़ना शामिल हो सकता है। उन्हें कौशल से लैस करके और उद्देश्य की भावना को बढ़ावा देकर, इन कार्यक्रमों का उद्देश्य पुनरावृत्ति के चक्र को तोड़ना है।

4. सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील कार्यान्वयन: भारत की विविध आबादी को एक सामुदायिक सेवा दृष्टिकोण की आवश्यकता है जो सांस्कृतिक संवेदनशीलता का सम्मान करे। कनाडा के कार्यक्रम, विशेष रूप से स्वदेशी समुदायों के लिए बनाए गए हैं, जो मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान करते हैं। सांस्कृतिक मूल्यों और मान्यताओं के साथ संरेखित करने के लिए सेवा विकल्पों को अनुकूलित करना विश्वास का निर्माण करता है, भागीदारी को बढ़ाता है, और अधिक प्रभावी कार्यक्रमों के परिणामस्वरूप होता है।

5. डेटा-संचालित निर्णय: सामुदायिक सेवा कार्यक्रमों के प्रभाव का आकलन करने के लिए नियमित और मजबूत डेटा संग्रह और विश्लेषण महत्वपूर्ण हैं। यू.के. इस दृष्टिकोण का उदाहरण है, जो यह समझने के लिए अनुसंधान में निवेश करता है कि क्या काम करता है और अपने कार्यक्रमों को लगातार परिष्कृत करता है। भारत में इसी तरह की प्रथाओं को लागू करने से निरंतर सुधार होगा और यह सुनिश्चित होगा कि कार्यक्रम वांछित परिणाम प्रदान करें।

इन वैश्विक सबकों को शामिल करके, भारत अपनी सामुदायिक सेवा पहलों को सामाजिक भलाई के लिए शक्तिशाली इंजन में बदल सकता है। पीड़ितों की ज़रूरतों को प्राथमिकता देना, सूक्ष्म जवाबदेही लागू करना, पुनः एकीकरण पर ध्यान केंद्रित करना और सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील दृष्टिकोण अपनाना, ये सभी एक अधिक प्रभावी और प्रभावशाली प्रणाली में योगदान देंगे। यह बदले में समुदायों को मजबूत करेगा, पुनर्वास को बढ़ावा देगा और अंततः एक अधिक न्यायपूर्ण और समतापूर्ण समाज का निर्माण करेगा।

निष्कर्ष:

भारतीय न्याय संहिता 2023 के माध्यम से परिलक्षित सामुदायिक सेवा की भारत की दीर्घकालिक परंपरा वैश्विक सर्वोत्तम प्रथाओं को अपनाने से काफी लाभान्वित होगी। पीड़ितों की जरूरतों को प्राथमिकता देकर, जवाबदेही के लिए एक सूक्ष्म दृष्टिकोण को लागू करके और पुनः एकीकरण पर जोर देकर, भारतीय सामुदायिक सेवा कार्यक्रम पुनर्वास प्रयासों को काफी हद तक बढ़ा सकते हैं, पुनरावृत्ति दरों को कम कर सकते हैं और अधिक लचीले समुदायों को बढ़ावा दे सकते हैं।

इस क्षमता को पूरी तरह से साकार करने के लिए, पुनर्वास और सामुदायिक सहभागिता में विशेषज्ञता रखने वाले स्थापित गैर सरकारी संगठनों के साथ सहयोग करना अनिवार्य है। ये संगठन अमूल्य विशेषज्ञता, संसाधन और सहायता प्रदान करते

हैं जो प्रभावी कार्यक्रम विकसित करने और उनके सफल कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक हैं।

हालांकि, सामुदायिक सेवा को सफल बनाने के लिए कई प्रमुख क्षेत्रों में सुधार की आवश्यकता है। नियुक्तियों के प्रबंधन और प्रगति की निगरानी के लिए स्पष्ट दिशा-निर्देश और एक मजबूत बुनियादी ढांचा सर्वोपरि है। इसके अतिरिक्त, पुनर्स्थापनात्मक न्याय की संस्कृति को बढ़ावा देना, जहां अपराधी समझते हैं और अपने द्वारा किए गए नुकसान की मरम्मत में सक्रिय रूप से शामिल होते हैं, महत्वपूर्ण है। एनजीओ को पर्याप्त संसाधन उपलब्ध कराना और पर्यवेक्षकों को उचित प्रशिक्षण प्रदान करना भी इन कार्यक्रमों के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए महत्वपूर्ण घटक हैं। न्यायालयों को भी आनुपातिकता के सिद्धांत पर टिके रहकर सामुदायिक सेवा प्रदान करते समय सतर्क रहना चाहिए।

हाल ही में भारतीय न्याय संहिता 2023 में सामुदायिक सेवा को शामिल किया जाना भारत में अधिक सुधारात्मक न्याय प्रणाली की दिशा में एक सकारात्मक कदम है। हालांकि इस बदलाव के लिए सटीक उत्प्रेरकों को पहचानना चुनौतीपूर्ण साबित हो सकता है, लेकिन सहयोगात्मक प्रयासों ने इस सुधार को आगे बढ़ाने में स्पष्ट रूप से महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। अब ध्यान सामुदायिक सेवा कार्यक्रमों के कुशल कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने, पुनर्वास के वादे को पूरा करने तथा अधिक निष्पक्ष और न्यायपूर्ण समाज के निर्माण में योगदान देने की ओर केंद्रित है।

"हत्यारे ने हत्या की है। हत्या करना गलत है। आइए हम हत्यारे को मार डालें।" यह संक्षेप में मृत्यु दंड के विरोधाभास और विकृति को दर्शाता है, जैसा कि मैनचेस्टर के श्री बोंसल ने व्यक्त किया है और आर्थर कोस्टलर ने 'ड्रिंकर्स ऑफ इनफिनिटी' में उद्‌त किया है। ऐसे विरोधाभासों से आगे बढ़ते हुए, अब हम न्याय को अपनाते हैं, एक ऐसा दर्शन जो अधिक प्रबुद्ध और मानवीय तरीकों से न्याय की तलाश करता है।

लेखकों से निवेदन

पाठकों से अनुरोध है कि पुलिस विज्ञान पत्रिका में प्रकाशन के लिए पुलिस से संबंधित विभिन्न विषयों पर लेख लिखकर भेजें और लेख लिखने में सक्षम अपने सहयोगियों को भी लेख लिखकर भेजने के लिए प्रेरित करें। लेख टाइप किया गया हो और कम से कम दस पेज का हो। यदि लेख से संबंधित कोई फोटो हो तो वह भी साथ भेजें। अच्छे लेखों को पुलिस विज्ञान पत्रिका के आगामी अंक में प्रकाशित किया जाएगा। लेख ई-मेल dig-spd1@bprd.nic.in एवं satishdabral@bprd.nic.in पर भेजे जा सकते हैं। पत्रिका में प्रकाशित लेखों के लिए रूपये 3000/- प्रति लेख पारिश्रमिक दिया जाता है।

इसके अतिरिक्त, यदि आपने पुलिस से संबंधित विषयों के हिन्दी के अलावा अन्य भाषा के किसी अच्छे लेख को हिन्दी में अनूदित किया है या करना चाहते हैं, जिसका कॉपीराइट आपके पास हो अथवा जिसके कॉपीराइट की आवश्यकता न हो तो ऐसे लेख भी प्रकाशन के लिए आमंत्रित हैं। लेख भेजते समय यह प्रमाणित करें कि लेख मौलिक/अनूदित है और इसका कहीं प्रकाशन नहीं हुआ है तथा इसके लिए कहीं से कोई मानदेय नहीं लिया गया है। इस संबंध में, अधिक जानकारी ब्यूरो की वेबसाइट से प्राप्त की जा सकती है।

संपादक

पुलिस विज्ञान

राष्ट्रीय राजमार्ग-48, महिपालपुर,

नई दिल्ली - 110 037

पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो
गृह मंत्रालय, भारत सरकार, राष्ट्रीय राजमार्ग-48, महिपालपुर
नई दिल्ली - 110 037
फोन 011-26734889, 26782012 (फैक्स)

BPRDIndia bprdindia officialBPRDIndia Bureau of Police Research & Development India www.bprd.nic.in

Xtreme Office Aids Pvt. Ltd # 783 806 6880